॥ श्रीः ॥

नारीरत्नमाला

अर्थात्

पतिव्रतधर्मपरायण उदारहृदया सुशीला सुशिक्षिता ४६ स्त्रीरत्नोंकी सत्यजीविनी ।

जिसको

मुरादाबादनिवासी टाडराजस्थान आदि अनेकग्रंथोंके अनुवादक निर्माता स्वर्गीय पंडित बलदेवप्रसादमिश्रने स्त्रीजनोंकी शिक्षा तथा लाभके निमित्त इतिहासोंसे संकलन किया ।

और

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालयमें

मुद्रितकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९६५, शके १८३०.

सरकारी कानूनके मुताबिक रजिस्टरी कराय सर्व हक "श्रीवेङ्कटेश्वर" यन्त्रालयाध्यक्षने स्वाधीन रक्खाहै.

भूमिका।
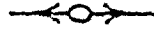
स्त्रीजनोंका अशिक्षित तथा निर्बोध रहनाही भारतकी अवनतिका मुख्य कारण है, जबतक इस देशकी स्त्री शिक्षित सुबोध तथा धर्मपरायण थीं, उससमय इस देशमें वीर विद्वान् तथा धर्मात्माओंका अभाव नहींथा, इस देशमें किसी बातकी कमी नथी, कलाकौशल यन्त्रादिसे यह देश पूर्ण था, एक २ वीरकी हाँकसे लाखों शत्रु भागतेथे, यहाँके विद्वानोंके सामने कहींका पंडितभी दम नहीं मारसकता था, और धर्मात्माओंके आगे तो इन्द्रका सिंहासनतक थर्राताथा, पर इन सब बातोंका मूल क्याथा ? स्त्रियोंका शिक्षित होना, पतिव्रत धर्मपरायण तथा सुबोध होनाथा, कालक्रमसे भारतके उन्नतिके इस मूलमेंही कुठाराघात लगा, स्त्रियोंमें मूढ़ता अशिक्षा अधर्म प्रवेश करगया। विधर्मी, छद्मवेशी, कामी, विधवाव्याहका बीड़ा उठाकर विधवाओंका सत्व बिगाड़ने लगे, साठ वर्षके बूढ़े सहस्रों रुपये खर्चकर बुढ़ापेमें व्याह कर विधवाओंकी संख्या बढ़ाने लगे, कहीं दोदो तीनतीन वर्षके कुमार कुमारीका विवाह होनेलगा, स्त्रीशिक्षाके नामसे लोगोंको चिढ होनेलगी, अविद्या बढी, स्त्री-पुरुषोंका प्रेम घटा, घर २ में क्लेशने अड्डा जमाया, परिणाम यह हुआ कि भारत इससमय जिस शोचनीय दशाको पहुँचा वह किसीसे छिपा नहींहै।

इधर अब कुछ दिनोंसे महानुभाव सज्जनोंको चेत हुआहै कि भारतकी मूल उन्नतिका कारण स्त्रीशिक्षा तथा पतिव्रत धर्म आदिका महत्त्व स्त्रीजातिको समझाया जाय, जिससे उनका सुधार होकर भारतमाता फिर वीरजननीशिक्षित सन्तान उत्पन्न करसके, यह विचार कर बहुतसे महानुभावोंने धर्मसत्तासहित स्त्रीजनोपयोगी ग्रन्थ लिखे, जिनके द्वारा स्त्रीशिक्षामें बहुत लाभकी आशा हुईहै, जहाँ, तहाँ अनेक कन्यापाठशाला खोली गईहैं, बालिकाएँ शिक्षा पातीहैं परन्तु इसमेंभी बहुत स्थानोंमें आर्यसमाजी ख्यालसे जो स्त्रीशिक्षाके ग्रन्थ बनेहैं, उनमें सनातनधर्म, पतिव्रतधर्म, स्त्रियोंके धर्म, व्रत-तप, पर पूर्णतया कुठाराघात कियागयाहै उनको पढ़कर कुमारी एकसाथ धर्मसे हाथ धोबैठती हैं, और जहाँ धर्म नहीं वहाँ उन्नति कहाँ, अस्तु,। विशेष न कहकर हम अपने आशयकी ओर प्रवृत्त होतेहैं, कि हमारे इस ग्रन्थमें परमश्रेष्ठ पतिव्रतधर्मपरायण, नारीकुलभूषण, वीरवधू, वीरजननी, वीर-नारी शिक्षित उदारस्त्रियोंका सत्य चरित्र वर्णन कियागयाहै, इसके पाठ करनेसे बालिका तरुणी युवती वृद्धा बहुत कुछ लाभ प्राप्त करसकतीहैं, धर्मानुराग, मातापिताकी भक्ति, पतिप्रेम, सच्चरित्रताकी पराकाष्ठा, इस ग्रन्थके अनुशीलनसे स्त्रीजाति प्राप्तकरसकतीहै, सज्जनोंपर यह बात विदितहीहै कि हमारे घरसे स्त्रीप्रबोधनी नामक एक पुस्तक निकलचुकीहै, जिसकी सहस्रों प्रति बिकचुकीहैं, यह स्त्रीजनोंके निमित्त मोहनमालाकी भाँति दूसरी पुस्तक है, यदि यहभी इसीप्रकार हितकारी हुई तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूंगा।

स्वर्गवासी—

पं. बलदेव प्रसाद मिश्र दीनदारपुरा.
मुरादाबाद.

नारीरत्नमालाकी सूची.

श्रीगणेशाय नमः

नारीरत्नमाला।

संयुक्ता।

रानी संयुक्ता कन्नौजके महाराज जयचंदकी पुत्रीथी, इसका शरीर अत्यंतही सुंदर व लावण्यसे भरा हुआथा। राजपूतोंमें राठौर राजा जयचंद और चौहानराजा पृथ्वीराज विख्यात था। पृथ्वीराज और जयचंद दोनों मौसेरे भाईथे। दिल्लीमें इनके नानाका राज्य था। नानाके कोई पुत्र न था इसकारण उसने पृथ्वीराजको गद्दीका अधिकारी स्थिर किया था। इससे जयचंद पृथ्वीराजसे अत्यंत वैरभाव करने लगा। राज्यासनपर बैठनेके पीछे पृथ्वीराजने अत्यंत धूमधामके साथ एक अश्वमेध यज्ञ किया तब जयचंदको अत्यंतही ईर्षा उत्पन्न हुई। उसने इस ईर्षाके कारण अपने शत्रुसेभी अधिक यशकर राजसूययज्ञके द्वारा महामान मिलनेका यत्न किया। इस राजसूययज्ञमें भारतवर्षके समस्त राजा महाराजा निमंत्रित कियेगये, चित्तौरके राजा समरसिंह और दिल्लीके राजा पृथ्वीराजके अतिरिक्त सबही इस यज्ञमें आये। परस्परमें राग द्वेष होनेके कारण यह दोनों राजा यज्ञमें नहीं आयेथे। तथा जयचंदने अपनेको चक्रवर्ती राजा कहलानेके निमित्त इस राजसूययज्ञका प्रारम्भ कियाथा। राजसूययज्ञमें सबकार्य राजकुलके मनुष्यों तथा अपने वशवर्ती राजाओंसे लियाजाताहै; अर्थात यज्ञसम्बन्धी जितने कार्य होतेहैं वह सब क्रमशः छोटे बडे राजाओंकी प्रतिष्ठाके अनुसारही उनसे कराये जातेहैं। जयचंदने सब राजाओंको उनकी प्रतिष्ठाके अनुसार कार्य सौंपा और अपने शत्रु राजाओंकी कि जिन्होंने यज्ञमें न आकर जयचंदका चक्रवर्तीपन नहीं माना था प्रतिमा बन-

वाई । आये हुए समस्त राजाओंके सौंपेहुए कामोंके नीचे एकको द्वारपालके स्थानपर और दूसरेको वर्त्तन मलनेके स्थानपर खडा करके हँसी उडाई; इतनाही नहीं वरन् ऐसा करके उनका अत्यंतही तिरस्कार किया ।

इस राजसूययज्ञके प्रसंगमेंही राजा जयचंदने संयुक्ताके स्वयंवर होजानेका निश्चयकर एक अत्यंतही शोभायमान मंडप बनवाय महामहाराजाओंके बैठनेयोग्य सिंहासन बनवाये और समरसिंह तथा पृथ्वीराजकी मूर्तिको द्वारपालोंके स्थानपर खडा किया । स्वयंवरके समय सब राजा सजधजकर सभामंडपमें आय यथायोग्य सिंहासनोंपर बैठ विचारने लगे कि, राजकन्या हमहीं वरे तो अच्छाहो, इतनेहीमें अपनी सहेलियों समेत राजकन्या संयुक्ता हाथमें वरमालालिये मंडपमें आई। वहां उसको उन सबराजाओंकी राजाधनी, उपज, गुण, द्रव्य, वैभव आदिका वर्णन सुनायागया और समस्त सभाके राजा उसको दिखाये गये कि जिसे अपना इच्छित वर समझे उसके गलेमें मालाडाले । परंतु राजकन्या संयुक्ताने कि जिसने पृथ्वीराजकी वीरता और साहसकी प्रशंसा सुनकर अपने हृदयमें निश्चयकर लियाथा कि,जब मैं कभी व्याह करूंगी तो महाकीर्तिमान पृथ्वीराजकेही साथ करूंगी क्योंकि वही मेरा पति होने योग्यहै । अपने मनमें यह दृढ संकल्प और निश्चयकर अपने पिताकी अप्रसन्नता तथा द्वेषको कुछभी न विचार सबके सामने ही शीघ्रतापूर्वक पृथ्वीराजकी मूर्तिके गलेमें मालाडालदी । पहिलेसेही क्षत्रियोंकी शूरता तथा यश प्रकट होनेके कारण भारतवर्षमें ऐसा संयोग होताही आयाहै । महाराज पृथ्वीराज अपने अपमान तथा जयचंदकी करतूतिको छुपेहुए वेषसे सभामें खडेहुए देखरहेथे उन्होंने यह वृत्तांत देखकर राजकन्या संयुक्ताके हरण करनेका निश्चय किया । अपने सब सामंतोंको रक्षाके निमित्त कन्नौजसे दिल्लीतक लगाया संयुक्ताकी इच्छा अपनी ओर देख जयचंदके महलमेंसे अचानक उसका हरण किया और उसको लेकर दिल्लीकी ओर चले । जयचंदने समा-

चार पातेही पीछा किया,परंतु पृथ्वीराजने पहिलेसेही कन्नौजसे दिल्ली-तक सामंतोंको लगारक्खाथा इसकारण जयचंदकी सेनासे पृथ्वीराजके दिल्ली पहुंचनेतक युद्धहुआ। यद्यपि वे शूरवीर सामंत लडलडकर युद्धमें काम आगये तथापि उन्होंने पृथ्वीराजका नाम रक्खा ? पृथ्वीराज संयुक्ताको ले कुशलतापूर्वक अपनी राजधानी दिल्लीमें पहुंच तो गये परंतु अच्छेर योद्धाओंके लडाईमें मारेजानेसे उनकी सेनाका वल अत्यंतही क्षीण होगया।

पृथ्वीराज जिससमयसे संयुक्ताको लेकर दिल्लीमें आये उसहीसम-यसे मोहपाशमें पडे और राजकाजकी कुछभी चिंता नकर रात दिन समयको भोगविलासमें व्यतीत करने लगे. नित्यप्रति नित्यके लाड प्यारसे दिनप्रति दिन स्नेह बढताही गया यहांतक कि उस स्नेहमें वर्ष-भी स्वप्नके समान वीतने लगा. पृथ्वीराजको असावधान हुआ सुन उनका शत्रु शहाबुद्दीन महम्मदगोरी वहुतसी सेनाले हिन्दोस्तानपर चढा। यह समाचार एक राजदूतने आकर पृथ्वीराजसे कहा। समा-चारके सुनतेही महारानी संयुक्ता अपनी सूरतको वदल उत्साहसे वीरता भरे शब्दोंमें राजासे कहने लगी "अहो प्रियतम ! पृथ्वी तथा प्रजाकी रक्षाके निमित्त तइयार हो. अव यह समय भोगविलासमें व्यतीतकर-नेका नहीं है। आप क्षत्रियहैं। अपने अस्त्रशस्त्रोंको संभालो और सेना को सजाय शत्रुसे युद्ध करो। देश, वंश तथा प्रतिष्ठाके निमित्त संग्राम में प्राणदेनेसे भी क्षत्रियोंका मरण नहीं कहा जाता। यहतो संसारमें सुयशकी प्राप्ति कर अमर होनाहै। रणभूमिमेंही क्षत्रियोंका प्राणत्यागन मंगलकारी होताहै। युद्धके वाजोंको वजता हुआ सुनकरभी स्त्रियोंके साथ पडा रहना केवल कायर मनुष्योंका कार्य है ! संसारमें धर्मशील वीर पुरुषोंके निमित्त प्रतिष्ठा और परलोकका साधन रणसंग्राममें मरनाहीहै।प्राणनाथ ! उठो यदि आप युद्धमें शरीरको त्यागदेंगे तो मैंभी आपके साथ स्वर्गको चलूंगी। उठो ! ! ! हे स्वामिनाथ ! यदि आप युद्धमें स्थूल देहको त्यागकर सूक्ष्मशरीरसे स्वर्गमें जावेंगे तो अप्सरायें

आपके जयमाला डालेंगी उनमें सबसे पहिले मैं ही आपको मिलूंगी। जैसे आप मेरा वियोग नहीं चाहते तैसेही मैं आपका वियोग नहीं चाहती मैं आपके अतिरिक्त और किसीको पुरुषही नहीं समझती। आप योग्य पुरुषहैं, यथार्थ समयमें मेरी इच्छाको पूर्ण करें, शत्रुको अपना पुरुषार्थ दिखाय मेरी प्रीतिके पात्रबनें मेरा यही संकल्प है, आपको असावधान देखकर मैं जीनेकी इच्छा नहीं करती। एक चक्रवर्ती महाशूरवीर पतिकी मैं स्त्री हूं, मेरे ऐसे अभिमानको जान आप उसके पूर्ण करनेका प्रयत्न करें । एक आलसी और भोगविलासी मनुष्यकी स्त्री हूं कहलाना मुझे प्रसन्न नहीं करता अतएव हे क्षत्रियकुलभूषण ! आप मोहके वशीभूत न हों ! शत्रुको अपनी भुजाओंका पराक्रम दिखाय युद्ध करके उसके दांत खट्टे करडालें। ''

यह सेना शहाबुद्दीन महम्मद गोरीकी थी। पहिले तो वह तिलावडीके मैदानमें हारखाकर भागगया था, तबसे उसने फिर भारतवर्षके ऊपर आक्रमण करनेके निमित्त दो वर्ष तक सेनाके इकट्ठा करनेका यत्न किया। जब इच्छित सेना बल और द्रव्य इकट्ठा होगया तो फिर मुसलमानोंकी सेनाको ले उसने कगार नदीके किनारे पर आकर पडाव डाला।

संयुक्ताके वीरतासे भरे हुए वचनोंको सुनकर दिल्लीपति महाराज पृथ्वीराज कमरकसकर युद्धको तइयार हुए उनको केवल इतनाही शोचथा कि कन्नौजसे संयुक्ताको लानेके समय युद्धमें बडे २ शूरमा और शूरवीर सामंत काम आगयेथे। थोडे बहुत अपने संबंधी राजाओंको सहायताके निमित्त बुलाय उनके साथ परामर्शकिया और परामर्श होनेके पश्चात् सेनाको कगारके किनारे लेजाकर युद्ध करनेका निश्चयकिया व शत्रुका पराक्रम देखनेकी इच्छासे उसके विमुख सेनाको चलाया।

पृथ्वीराजने चलती समय अपने क्षत्रियकुलकी मर्यादानुसार स्त्री, पुत्री, माता, बहन इत्यादि सबसे मिलापकिया और युद्धक्षेत्रमें जानेके

निमित्त सबसे आज्ञामांगी। उस समय क्षत्रानियोंने अपने दूधकी प्रशंसाकर संग्राममें पीठ दिखानेको धिक्कार और संग्राममें जानेका भलीप्रकारसे उत्साह दिया,तथा अपने संबंधियोंमें इस कैसे "कायर पुत्रने जन्म पायाहै" इसप्रकारकी हँसी न होनेका उपदेश भलीप्रकारसे किया। हँसी तथा अपकीर्त्तिका पात्र होनेके पीछे हँसी करानेवालेका तथा जिसकी हँसी होवे उसका जीना संसारमें व्यर्थहै; ऐसा भली-प्रकारसे समझाय.युद्धसे पीछे न हटनेकी अत्यन्तही प्रभावोत्पादक बातें कहीं। तदनन्तर बहुतसे आशीर्वाद देकर कहा.कि अपयशकी अपेक्षा मरजानाहि सुखकारी है।

पृथ्वीराज सब कुटुंबियोंसे मिलकर अपनी प्यारी रानी संयुक्तासे मिलनेगये वहां रानीसे मिले परन्तु उस समय दोनोंके हृदय अत्यन्त भरगये और परस्पर एक दूसरेसे कुछभी न बोलसके। एक दूसरेके मोहपाशमें बंध परस्पर एक दूसरेकी ओर टकटकी लगाये देखतेरहे इतनेहीमें सेनाके कूच होनेका बाजा बजनेलगा। उसका शब्द सुनतेही पृथ्वीराजने एक साथही सावधानहो जाती समय रानीसे पीनेको जल मांगा। रानीने सोनेके गिलासमें पानी भरकर दिया परन्तु चित्त तो युद्धकी ओर लगाथा इसकारण थोडा बहुत जलपी गिलासको पृथ्वी-पर रखकर चले और संयुक्ताकी रक्षाके निमित्त भलीप्रकारसे सेनाको नियत कर शेषसेनाको अपने संगले युद्धखेतको गमन किया। मुसलमान बारंबार हारनेके कारण अत्यन्तही क्रोधित हुएथे, इसकारण उन्होंने इससमय अत्यन्त प्रचण्डतासे सेनाको इकट्ठा कियाथा। फिर इसके साथही कन्नौजके राजा जयचन्दनेभी अपनी कुछक सेनाको पृथ्वीराजके विरुद्ध युद्ध करनेको भेजा था. पृथ्वीराजके अच्छे २ शूर सामंत संयु-क्ताके लानेके समय कन्नौजके युद्धमें मारेगयेथे तथा प्रधानके पुत्रने छलसे पृथ्वीराजके वशवर्ती राजाओंको मुसलमानोंसे मिलादिया यह बात पृथ्वीराजको कुछभी न ज्ञातहुई, इसकारण पूर्ण सहायता न मिलनेके कारण जितनी सेना चाहिये उतनी सेना पृथ्वीराजके पास न थी।

अत्यन्त भयंकर युद्ध हुआ । पृथ्वीराजकी सेनामेंका एक सेनापति प्रधानपुत्रके छलसे छूटगया इसकारण अनी न सम्हलसकी । दारुण युद्धमें महाकुलाहल होनेलगा, दोनों सेना वडीपराक्रमसे लडीं, परंतु अंतमें पृथ्वीराजकी सेना हार गई । पृथ्वीराज दिल्लीकी गद्दीके अंतिम आर्यराजा युद्धभूमिमें शत्रुओंसे लडते हुए मूर्च्छित होगये और इन्द्रकी अप्सराओंसे वरमालाको पहिन विमानमार्गसे स्वर्गको सिधारे उस समय सेनामें अत्यंत कुलाहल और हाहाकार हुआ उसको सुनकर तथा अपने अशुभ चिह्नोंसे सती रानीसंयुक्ताने सब समझलिया । वह सब संसार छोड स्वर्गमें जानेवाले पतिसे पहिलेही स्वर्गमें जानेकी इच्छासे और स्वर्गकी अप्सरायें पतिको वशमें न करलेवें इस शंकासे पहिले ही पतिसे जा मिलनेकी आशासे यह कहतीहुई कि "अहो स्वामी नाथ खडेरहो मैं आई" शीघ्रतासे सजगई और जो सेना उसकी रक्षाके निमित्त नियुक्तथी उसको साथले शत्रुसेनाकी ओर आवेशमें भरकर दौडी । महिषासुरके मारनेके निमित्त मानो मधुपान कर महाकाली स्वयंही आई हैं, ऐसा विचित्र शृंगार धारणकर घोडेपर चढीहुई देवीने युद्धमें नंगी तलवार हाथमें उठाय उन्मत्तहो सेनामें घूमतीहुई सहस्रों म्लेच्छोंके माथेको काटकर धूलमें मिलादिया। शस्त्रोंके अनेक घाव शरीरमें लगनेसे रक्तकी धारा वहरहीथी परन्तु तौभी संयुक्ताका मुकुट सूर्यकी समान सेनामें झलक रहाथा । अंतमें शत्रुओंने उसको जीवित पकड वादशाहके सन्मुख ला खडा किया उस समयभी निर्भयतासे खडीहुई संयुक्ताने वादशाहसे पतिका शिरमांगा, सती होनेकी प्रतिज्ञा सुन रणभूमिमें "जयअंबे"का शब्द होने लगा ।

परन्तु वादशाहने उसको सती होनेसे रोकनेका प्रयत्न किया और पतिव्रतके भंग करनेको स्वयंही उपाय सोचने लगा और वहुतसे यत्नकर२ उसको समझाने लगा, परन्तु सतीत्वके आवेशमें आईहुइ आर्याने उसका अत्यन्तही तिरस्कार किया । तौ भी वादशाह कि जो उसकी सुंदरता तथा यौवनसे अत्यन्त मोहित होगया था वारंवार कहने लगा

कि "अय दिलदार ! तू अपने इस खूबसूरत जिस्मको आगमें जलाकर मुफ्तही अजाबमें डाल जान खोती है ! यह तमाम सल्तनत व शाही खजाना सब तेराहीहै। तू अपने इस मुलायम जिस्मको क्यों तकलीफ देतीहै । यह खादिम तेरी सब बातोंको कबूल करतारहेगा परन्तु तू मेरी एकबातको कबूलकर यानी तू मेरी बेगम बन ।" उस देवीने यह सुनतेही अत्यन्त क्रोधित हो उसको अपनी लाल २ आखें दिखाईं और अपने अत्यन्त विकराल स्वरूपको प्रकाशित किया कि जिसके देखतेही बादशाहके होशहवास ठीक होगये । उसने भयभीतहो देवी संयुक्ताको उसके पतिका शिर देदिया । तदनंतर वह शिरको ले चंदनकी चितापर बैठ अपने गोदमें पतिका माथारख स्थूलदेहसे भस्मीभूतहो सूक्ष्मशरीरके सहारेसे पतिकी सेवामें तत्पर रहनेको स्वर्गमें सिधारी । इस देवीको जिस दिनसे रणसंग्राममें पतिका वियोगहुआ उसही दिनसे पतिके जानेके समय जो गिलासका जल पीतेहुए बचाथा उसने उसको पीपीकर समय व्यतीतकियाथा । चन्द्रकविने अपने ग्रंथमें इस देवीके तपकी तथा शारीरिक कष्ट सहनेकी प्रशंसा अत्यंत विस्तारसे लिखीहै ।

प्राचीन दिल्लीके खंडहरोंमें रानी संयुक्ताके महलोंके चिन्ह अबतक मिलतेहैं कि जिनको देखकर पथिक बारंबार उसका स्मरण करते हैं ।

कूर्मदेवी ।

यह कूर्मदेवी पाटनकी राजकुमारी तथा चित्तौरके राणा समरसिंहकी स्त्रीथी, कि जो कग्गारके किनारे पृथ्वीराज तथा शहाबुद्दीनके बीचमें हुए अंतिम युद्धमें मारेगये थे । इस पतिव्रता स्त्रीने जबतक कि पुत्र योग्य वयका न हुआ तबतक राज्यकार्य अत्यन्त बुद्धिमानी और चतुरतासे कियाथा । तथा इसही देवीने अंबरके समीप कुतबुद्दीनबादशाहको हराकर एक समयमें उसको घायल कियाथा ।

रानी पद्मावती।

इतिहासों, कहावतों, कथाओं, वार्ताओं तथा कविओंमें जिन प्रसिद्ध २ क्षत्रानियोंके नाम वीरवाला तथा पातिव्रताओंमें गाये जाते हैं उन सवहीमें यह रानी पद्मावती अधिकप्रसिद्ध हुई। उनकी सुन्दरता, कोमलता, बुद्धिकी तीव्रता, विद्वत्ता, गुणज्ञता और पातिव्रत्य आदिक शुभधर्म साहसी कर्म कार्यदक्षता शुभकार्योंमें प्राणप्रणसे दृढता आदिगुणोंको कवियोंने अनेक वार अनेकप्रकारसे वर्णन किया है। रानीपद्मावती सिंहलद्वीपके राजा चौहान हमीर सिंहकी पुत्रीथी उसका व्याह लखमीसिंहके काका भीमसिंहसे हुआ था । उस समय भारत वर्षके राजकुलोंमें अत्यन्तही निकटका सम्वन्ध रहा करताथा । रानी सिंहारिका कि जिसका वर्णन "ललित रत्नावाली" नामके नाटकमें किया है वहभी इसही राजाकी पुत्री और रानीपद्मावतीकी वहिन थी। यह कुस्मावतीके राजा वत्सकी रानीथी, यह वत्सराजा प्रयागके समीप यमुनानदीके किनारेके कितनेही प्रदेशोंका एक वडाभारी विख्यात राजाथा। "रानी पद्मावती" नाम उसने रूप और गुणसेहीपायाथा उसका महल कि जिसमें वह निवास करतीथी अवतक एक सुहावने स्थानपर सुंदर शीतल जलसे भरेहुए तालावके किनारे अत्यंत रमणीय स्थितिमें ज्यों का त्यों खडाहुआ अपने प्राचीन गौरवका स्मरण दिला रहा है। इस महलका चित्र कर्नल टाडसाहवने अपने ग्रंथमें दियाहै ।

ईस्वीसन १२७५ में दिल्लीके वादशाह अलाउद्दीनने रानी पद्मावती क रूप, गुण और लावण्यताका वर्णन सुनकर उसके लेनेको चित्तौरगढपर चढाई की, परन्तु उस चढाईमें वह किसीप्रकारभी अपनी इच्छा को पूर्ण न करसका, जव और कोई दूसरा उपाय न देख पडा तव उसने विनयपूर्वक चित्तौरमें कहला भेजा कि 'जो आप उस परम सुन्दरी का केवल दर्शनहीं करा दे तो उतनेहीसे मैं सन्तुष्ट होकर दिल्लीको लौट जाऊं!' उससमय विशेषकर पर्दा करनेकी प्रथा न थी। अतएव रानीने

केवल दर्शन देनेसे किसीप्रकारकीभी अप्रतिष्ठा न मानी इसकारण उसकी विनतीको आदरपूर्वक स्वीकार किया और शाहको अकेले विना हथियार लिये महलमें आनेकी सूचना की। बादशाह उन सब बातोंको स्वीकारकर स्वयं अकेलाही रानीपद्मावतीके देखनेको महलमें नियतसमय राजपूतोंकी सत्यता तथा उनके धर्मपर विश्वास रखकर चला आया। रानी पद्मावतीको देखकर वह चित्तमें अत्यन्त प्रसन्न हुआ और विनय पूर्वक सन्तोष प्रगट करता हुआ बाहर निकला। चलते समय अत्यन्त ही नम्रताके साथ बातचीत करके रानीसे अपने निमित्त किये हुए श्रम की क्षमा चाही वरन् यहभी प्रतिज्ञा की कि आजसे आपके बीचकी मित्रता निरन्तर निर्मल भावसे रहेगी। राना उसके इस छल और भेद भरी बातोंको न समझ अतियोग्य जान उसकी ओरसे तत्कालही प्रीति भावमें आगयी और आगे पीछेका कुछभी विचार न किया इतनेही पर सन्तोष न हुआ वरन् यह विचारकरके कि शाह मेरे शहरमें अकेलाही चला आया इसकारण मुझको भी उसके डेरे तक जाना उचित है, यह निश्चयकर कुछेक मनुष्योंको ले सन्मान पूर्वक शाहको पहुंचाने गये। थोडीही विलम्बमें उसके डेरे पर पहुंचतेही ज्ञात हुआ कि शाह कपटसे भराहुआ है और इसने मेरे साथ छल किया है। क्योंकि डेरे पर पहुंचतेही जब राना शाहसे मिलकर पीछेको लौटे तब बादशाहके इसारेसे उसकी सेनाके लोगोंने उनपर आक्रमणकर बंदी करलिया और निर्लज्ज होकर बादशाहने उनसे कहदिया कि जबतक तू अपनी रानीपद्मावतीको मेरेआधीन नहीं करेगा तबतक मैं तुझे छोडनेवाला नहीं।

रानी पद्मावती तत्कालही जानगई कि रानाजी शाहके डेरेमें जाय उसके छलसे कैदकर लिये गये और बादशाह उनके साथ अत्यन्त निर्दयितासे वर्ताव कर रहाहै। बादशाहके इस छलकपटका वृत्तान्त सुनकर रानी पद्मावतीने अपने भाई तथा काकाको पिताके समीपसे सम्न-

तिलेनेको वुलाया और किसउपाय व यत्नसे रानाजीको छुडायाजाय और अपनीभी किसीप्रकारसे अप्रतिष्ठा न हो ऐसा यत्न खोजने लगी। अन्तमें विचार करते २ यह सम्मति हुई कि रानी तो प्रथम बादशाह के समीप जावे और उससे यह प्रतिज्ञा करावे कि रानाजीको छोड देनेपर मैं तुम्हारे साथ दिल्ली चलसकतीहूं तदनंतर रानाजीको विश्वासघातकके पंजेसेछुटाय स्वयंभी छलपूर्वक उसके पंजेसे निकल आऊँ।

ऐसा निश्चय होनेपर रानी पद्मावतीने वादशाहसे कहलाभेजा कि यदि वादशाह रानाजीके छोडदेनेको स्वीकार करें तो मैं दिल्ली चलसकतीहूं। उसकी ओरसे आये हुए इस समाचारको सुन वादशाह प्रसन्नतासे फूलगया और उसने रानाका छोडदेनेका स्वीकार किया।तदनंतर रानी पद्मावतीनेभी अपनी सहेलियोंसमेत संध्या समय आनेको कहलाभेजा और यहभी कहा कि शाही सेनाकाकोईभी मनुष्य उसके ऊपर हाथ न डाले या कोई आपत्ति न उठाय इसकाभी पूर्णरीतिपर प्रबंध करदिया जावे. यह सुनतेही वादशाह हर्षसे प्रफुल्लित होगया और उसके निमित्त तथा उसकीसहेलियोंके उतरनेके निमित्त एक वडा विशाल तंबू खाली करादिया; व सेनामेंभी शांतिकी वडी कठोर आज्ञा करदी।

रानी पद्मावतीने यह युक्ति की कि सब स्थानोंमें यह प्रगट किया कि दूसरे दिन शाहके डेरेमें जातीसमय अपने साथ सातसौ सहेलियें चलेंगी। इसकारण दूसरे दिन चलती समय अपने संग चलनेकी सातसौ पालकियें सहेलियोंकी सजवाई कि जो दोनों ओर पर्दोंसे ढँकीथीं; अर्थात् उनके भीतरके रचेहुए भेदको कोई न जानसके। रानी पद्मावतीने उन पालकियोंमें सहेलियोंके स्थानपर महाशूरवीर अस्त्रधारी क्षत्री वैठायेथे उन सबको अपने तम्बूमें रक्खा। तथा पालकीके उठानेवाले सेवकोंमेंसेभी आठ २ लोग छिपेहुए क्षत्री वेशकेथे और उनके हथियारभी पालकीमें रक्खेहुएथे। समस्त सहेलियोंके तम्बूमें आजानेपर उसने वादशाहको एक दासीके द्वारा कहलाभेजा कि केवल

आधेक्षणके निमित्त बादशाह मेरे पीतमको मुझसे मिलनेकेलिये तम्बूमें भेजे और उसके अंतिम मिलापके उपरांत मैं आपकी सेवामें प्रस्तुत हूंगी॥ बादशाहने अत्यंत आनंदितहो रानाजीको कैदसे छोड तम्बूमें राणीसे मिलनेको जानेदिया, तम्बूमें रचेहुए जालसे शाह अनजानथा, वह रानीकी ऐसी छलकपटकी बातोंमें आय मोहवशहो अत्यंत उन्मत्त होगया, रानाजी तम्बूके भीतर गये उधर अलाउद्दीन थोडी देरकेपीछे राणी पद्मावती मेरी होहीगी और उसके साथ मनमाना भोग विलास करूंगा इस प्रकारकी अनेक बातोंको गढगढ कर हवामें महल बांधरहा था। कि रानीने तम्बूमें पहुंचतेही अपने शूरवीरोंको बादशाहपर आक्रमण करनेकी आज्ञादी, आज्ञापातेही अस्त्रधारी क्षत्री एकसाथही बाहर निकलआये । उनको देखते ही बादशाह चौकन्नाहो जीवको लेकर भागा। बाहरके सिपाहियोंने जो पालकी उठानेवालोंके वेशमें थे पालकियोंमेंसे अपने अपने अस्त्र खेंच बादशाही सेनाके ऊपर प्रचण्ड आक्रमणकिया। बादशाही सेनामें इतनी भाग पडी कि किसीने पीछे फिरकर भी न देखा। बादशाहभी अपने प्राण बचाय छिपाकर भाग निकला और महाकष्टसे दिल्ली पहुंचा।

बादशाह रानी पद्मावतीके इस छलसे तथा अपनी हुई हानिसे अत्यंत लज्जितहुआ और चित्तौरपर फिरसे चढाई करनेकी तइयारी करनेलगा।

सन् १३०५ ई० में अलाउद्दीनने बडी धूमधामसे चित्तौर गढपर आक्रमणकिया। एक स्त्रीने उसकी नाक काटली इससे वह अत्यंतही लज्जितहुआथा। इसकारण इससमय बडी भीड भाड लेकर चित्तौर नगरमें आया। क्रोधित हुए शाहको बडी धूमधामसे चित्तौरपर आया हुआ देख वीरराजपूतोंने विचारा कि म्लेच्छोंके इस टीडीदलके सामने अपना कुछभी बल नचलेगा, ऐसा निश्चयकर उनसे बचनेका उपाय सोचनेलगे, परंतु जब कोई उपाय ध्यानमें न आया तब यही विचार किया

कि अपकीर्ति और कुत्तेके समान मरनेकी अपेक्षा स्वाधीन रहकर रणयुद्धमें तलवारसे कटकर मरनाही क्षत्रियोंकी शोभाहै; तदनंतर यह निश्चयकर किलेमें एकप्रचण्ड अग्नि प्रज्वलितकी कि अपनी लाज व प्रतिष्ठा बचानेके कारण इस अग्निमें विना प्रवेश किये क्षत्रियानिओंके निमित्त दूसरा मार्ग नहीं है, ऐसा विचारकर अपनी स्त्रियोंको बुलाय अग्निकी शरणमें जानेकी सूचना की और कहा कि यदि राजपूतोंको मराहुआजानले तो सब इसी अग्निकुण्डमे कूदकर अपने पतिव्रतधर्मकी रक्षा करना हम सब तुमसे स्वर्गमें मिलेंगे। ऐसा कह उनके समीपसे उनका एक २ वस्त्रले अपने शरीरके ऊपर धारण किया और केशरिया वागापहिन अस्त्रशस्त्रोंको सजायअपनी २ स्त्रियोंसे आज्ञा मांग यवनसेनाके सामने गये। यवनोंकोभी अपनी ओर आते देख उन्होंने किलेका द्वार खोल दिया और सब एक साथही बाहर निकल युद्धकरके कटमरे। इधर क्षत्रियानियेंभी राजपूतोंको मराजान उस प्रज्वलित अग्निकुंडमें कूदपडीं। यवनभी राजपूतोंको मारकाट किलेके भीतर जा घुसे। वहां जाकर देखा कि शहरके बीचमें एक बडी भारी चिता जलरहीहै और उस चितामें पद्मावती और दूसरी क्षत्रानियें प्रवेशकर भस्म होगई हैं। शाहने इसदशाको देखतेही अपने श्रमको निष्फलजाना। अनंतर निराशहो हाय करके रहगया। परन्तु अपने प्रथमके मानभंगका स्मरण कर अतिक्रोधितहो समस्त महल, हवेलीके लूटन, तोडने, फोडनेकी आज्ञादी, और किलेमें जो कोई स्त्री पुरुप बचेथे उनकी गरदन भेढकी समान कटवाई। यद्यपि उसने समस्त महलों और हवेलियोंको तुडवाडाला,परन्तु उसके मनमें रानी पद्मावतीका अत्यंतही स्नेहथा इसकारण जिस महलमें वह निवास करतीथीं उसकोही केवल यथावत् रहने दिया।

इस प्रचण्डयुद्ध और रानीपद्मावतीके भस्महोनेका वर्णन बहुधा राजपूतानेकी मारवाडीभाषामें पृथक् २ रागनी व कविताओंमें वर्णित हुआहै। एक रूपवती स्त्रीके कारण राजपाट तथा कुल और सहस्रों

प्राणियोंके प्राण गये! निश्चयही संसारमें उपद्रवका कारण धन जन (स्त्री) जमीन (पृथ्वी) यह तीनहीहैं।

ऋणकर्ता पिता शत्रुर्माता च व्यभिचारिणी।
भार्या रूपवती शत्रुः पुत्रः शत्रुः कुपण्डितः॥

जिस स्थानमें रानी पद्मावती जलमरीथी वहस्थान अबभी राजपूतानेमें एक तीर्थ स्थान गिना जाताहै और मंदिरमें पद्मावती नामक देवीकी प्रतिष्ठाकर मनुष्य उसकी पूजा करतेहैं।

कमलादेवी तथा देवलदेवी।

पाठकगण, यद्यपि आपने कमलादेवी तथा देवलदेवीका नाम तो सुनाही होगा परन्तु उनका कुछेक वर्णन प्रसंगवश कियाजाताहै।

कमलादेवी गुजरातकी गद्दीके राजाओंमेंके अंतिमराजा करणकी रानीथी और देवलदेवी उसकीही पुत्रीथी जब करण अपने दीवान माधवकी स्त्रीके ऊपर मोहित होकर बलात्कारसे उसको अपने महलमें लाया तब दीवान माधव लज्जित और क्रोधितहो उससे बदला लेनेके कारण दिल्लीको गया। उस समय दिल्लीमें अलाउद्दीन राज्य करता था। उसने बादशाहसे गुजरातकी रसाल भूमिका वर्णनकर उसके मनको ललचवाय और धनके लोभमें फँसाय गुजरातपर चढालाया। माधव केवल देशका वर्णन करके उसे चढाही न लाया वरन् करणकी अनीतिकोभी उस पर प्रकटकिया। लडाईमें राजा करण हारकर प्राणलेभागा। राजधानीको जीतकर बादशाहने वहांकी लूटकराई, उस लूटमें करण की रानी कमलादेवी उसके हाथमें पडगई जिसको बंदी करके वह दिल्ली लेगया। रूप, गुण और लावण्यतामें उस समय कमलादेवीके समान और कोई स्त्री न थी। उसके इन सब गुण और बुद्धिकी तीव्रताको देख बादशाह उसके ऊपर अत्यन्त मोहित होगया और दिल्ली पहुँचतेही उसको अपनी पटरानी बनाया। बादशाहका चित्त उसपर

इतना वशीभूत होगयाथा कि वह सदैवही उसके कहेमें चलताथा, वादशाह जब क्रोधित हो अपने धर्मकी विक्षिप्ततामें आप निर्दयतासे भरेहुए किसी अनिष्टा कर्मके करनेको तइयार होता तब वह मोहिनीही उसे थोडीही देरमें समझाकर ठंढा करदेती थी और आर्यधर्मकी दृढताका अंतःकरणसे यत्न करतीथी।

देवलदेवी कमलादेवीकी पुत्रीथी। वहभी अपनी मातासे लावण्यता और सुन्दरतामें न्यून न थी; बरन् मातासे कुछ अंशोंमें अधिकही थी। करण जब लडाईमेंसे भागा तब वह उसको अपने साथही लेगया इस देवलदेवीके स्नेहका स्मरणकर कमलादेवी एकदिन अत्यन्तही उदासीन अवस्थामें बैठीथी। वादशाहने उसको शोचमें बैठा देख कारण पूंछा तब उसने अपनी पुत्रीके वियोगका सब वृत्तांत बादशाहको बताय उसके ढुँढवानेको कहा, कहते २ उसका हृदय भरआया और कह उठी कि अपनी सुशीलपुत्री देवलदेवीको जबतक आंखोंभर न देखलूंगी तबतक मेरा व्याकुल चित्त शांत न होगा। वादशाहने उसके उदास होनेका कारण जान तत्कालही एक सर्दारको सेना समेत उसकी खोजमें भेजा और आज्ञादी कि जहांसे मिले वहांसे देवलदेवीको मेरे समीप आदर सत्कारपूर्वक लेआओ।

बहुत दिनोंसे देवगढके राजाका पुत्र देवलदेवीसे अपना व्याह करदेनेको राजा करणसे कहरहाथा, परन्तु अपनी कन्या महाराष्ट्र राजाको देनेमें करणकी इच्छा न थी, महाराष्ट्र राजवंशी धन तथा राज्यमें चाहे जितने बढेहुएहों तौ भी वे कुलमें राजपूतोंकी समानता नहीं कर सकते। परन्तु जब करणका राजपाट चलागया और वह आपत्तिमें आगया तब उसने अपनी पुत्रीको उससे व्याहना स्वीकार किया, उसने लग्नसमयके आनेतक राजकुमारीको एक सेनाकी रक्षामें देवगढमें स्थितरक्खा। अचानकही दिल्लीकी सेनाने आय उन सबको मारनिकाला और देवलदेवीको उनके अधिकारसे छीन दिल्लीको लेगये। वादशाहका

वडा शाहजादा जव देवलदेवीको उसकी माताके समीप रहतेहुए प्रत्येक समय देखने लगा तव वह उसके रूप और लावण्यतासे मोहित होगया । अंतमें उसका विवाह होगया । इन दोनोंके वीच इतनी प्रीति वढगई कि एक दूसरेको यदि घडीभरभी न देखते तो दोमेंसे किसीको भी चैन न पडता । उनकी प्रीतिका वर्णन उनकी सभाके कवीश्वर खुसरोने एक मधुर तथा ललितपदोंमें किया है, जो कि अवतक अत्यन्तही मान और प्रशंसाके साथ पढाजाता थोडे दिनके उपरांत अलाउद्दीन मर गया और काफूरके गुलामने राजगद्दीपर वैठनेकी इच्छा की । उसने अपनी इस इच्छाके पूर्ण करनेके निमित्त देवलदेवीको अत्यन्तही मोहितकिया । अलाउद्दीनके मरनेपर पांचवर्षके भीतरही एकहिन्दू सरदारने कि जो अपना धर्म छोड मुसलमान होगयाथा राजासिंहासन पर वैठनेकी इच्छाकर दिल्लीके राजवंशमेंसे किसीकोभी जीवित न रक्खा और देवलदेवीको अपनीस्त्रीकी समान रखने लगा । थोडा समयभी न व्यतीत हुआथा कि वहभी अत्यन्त बुरीदशासे मारा गया। परन्तु उसके पीछे देवलदेवीका क्या हुआ और कहांगई वह इस वातका वृत्तांत भली प्रकारसे नहीं जानाजाता ।

मीरावाई ।

मीरावाई मेरताके राठौरकी पुत्रीथी इसका विवाह चित्तौडके महाराज कुंभसे हुआथा । मीरावाईका जन्म लगभग पन्द्रह शताब्दीमें हुआथा । मीरावाई अत्यन्त रूपवती, गुणवती, परमात्मा श्रीकृष्णभगवान्की अत्यन्त भक्त और कवीश्वरथी। वैष्णव धर्मवालोंमें वह अत्यन्तही महात्मा गिनीजातीहै । श्रीजयदेवनामक कवि प्रायः उसही समयमें हुएथे । उनकी कविता अत्यन्तही ललित होनेके कारण उनका वनाया हुआ "गीतगोविंद, नामक ग्रंथ इन दोनों स्त्री पुरुषोंको अत्यन्त ही प्रियथा।राणाकुंभनेभी उसही प्रकारकी कविता की थी परन्तु वहकुछ

प्रसिद्ध न हुई । वैष्णवलोग अवतकभी मीराबाईके पद प्रेमपूर्वक गाते और सुनतेहैं । यह पदभी अत्यन्तही ललित और सरसहै तैसेही भक्ति रसभी इनमेंसे भलीप्रकार टपकताहै । भाषा कवितामें मीराबाई के पद श्रीजयदेवजीकी अपेक्षा न्यूननहींहैं । मीराबाई संसारसे अत्यन्त ही विरक्तथी । यमुनाके तटसे लेकर द्वारका पर्यंत जितने श्रीकृष्ण भगवानके मंदिर तथा तीर्थ स्थलहैं उन सबकीही उन्होंने यात्रा कीथी। यह देवी अवभी देश विदेशमें प्रसिद्ध हैं ।

रानी मृगनयनी ।

इस देशके बहुत थोडे मनुष्य रानी मृगनयनीके नामको जानते होंगे । क्योंकि वह गुजरातके राजाकी पुत्री और ग्वालियरके तोमर वंश राजा मानसिंहकी रानीथीं । मानसिंह लगभग सोलह शताब्दीमें हुआथा क्योंकि लंकाराय जो शाहजहां बादशाहके समयमें होगयाहै उसने अपने इतिहासमें लिखाहै कि राजा मानसिंहके बहुतसी रानी थी परंतु उन सबमें रूप तथा गुणमें श्रेष्ठ रानी मृगनयनी ही थी इतनाही नहीं कि वह परमसुंदरीहो वरन् मनको मोहनेवाली गानविद्या मेंभी वह अत्यंत प्रवीणथी । राजा मानसिंह गानविद्याका अत्यंतही प्रेमीथा । उसमेंभी संकीर्ण राग कि जिसको रानी मृगनयनी अत्यंतही अद्भुत प्रकारसे गाती बजातीथी इसकारण राजा उनकेऊपर अत्यंतही मोहित होरहाथा । मृगनयनीने अपनी गानकलाकी चतुरतासे कितनेही एक रागोंको मिश्रभावसे गाकर प्रसिद्ध कियाथा । उनमें गुजरी बहोलगुजारी, मालगुजारी यह रागतो उनके नामसेही प्रसिद्धहै । तथा ऐसाभी कहाजाताहै कि मृगनयनीकी गानकलाके सुननेको गानविद्याके पर आचार्य तानसेनजी स्वयंही ग्वालियर पधारेथे और वहीं रहकर अपने शेषजीवनको बितायाथा । तानसेनजीकी समाधिभी वहीं परहै ।

ताराबाई ।

ताराबाई तथा पृथ्वीराजकी शूरता और वीरताकी प्रशंसा राजपूतोंमें गायेजाते हुए कितनेही एक गीतों तथा कहानियोंमें प्रसिद्ध हैं । इस-का जन्म सोलहवीं शताब्दीके प्रारम्भमें हुआथा । ताराबाई राय-सुरतान बिदनोर वालेकी पुत्रीथी; कि जो राजपूतानेमेंके एक छोटे राज्यका राजाथा । गुजरातकी राजधानी अनहलवाडाके सोलंकी वंशके राजाओंका वह एक वंशधरथा । इसके पुरुषा तेरहवीं शताब्दीमें अलाउ-द्दीनसे हारकर मध्यदेशमें आय टोंकनामकी जातसे टोंक तथा बनास नदीके किनारेका देश छीनकर वहांके अधिकारीहो स्वयं स्वाधीन होग-येथे । किन्तु राजा सूरतानसे अफगानराजाने कितने एक देश छीनलि-येथे । अंतमें केवल बिदनोर जो कि अर्वली पर्वतकी तलहटीमें मेवाड़-राज्यकी सीमापरहै शेष रहगया । अपने पिताका राज्य क्षीण होनेसे दुःखित तथा मलीन देख और पूर्व पुरुषोंके ऐश्वर्यको सुन ताराबाईने स्त्रियोंका पहिरावा पहिरना छोडदिया । वह स्त्रीजातिके योग्य किसी भी वस्त्र आभूषणको धारण नहीं करतीथी । पुरुषोंके वस्त्र पहिन, शस्त्र धारणकर बाल्यकालसेही घोडेपर चढनेलगी और साथही साथ धनुष विद्याकाभी अभ्यास करतीथी । उसने थोडेही समयमें अपने बलके द्वारा अफगानोंसे पिताके ले लियेहुए देशोंको छीनलिया और उसमें अपनीही विजयपताका गडवादी । थोडेही समयके अभ्यासमें वह धनु-र्विद्यामें इतनी निपुण होगई कि घोडेपर चलीहुई निशान (लक्ष्य) मारती परंतु कभीभी न चूकतीथी । एकसमय उसके पिताने अफगानों के ऊपर आक्रमण किया, तब एक काठियावाडी घोडेपर चढकर तारा बाईभी साथ गईथी, परंतु शत्रुओंके बलवान होनेसे उनके सामने उसका कुछभी पौरुष व पराक्रम काम न आया । उसही समय राना रायमलके तीसरे पुत्र राना, जयमलने ताराबाईसे अपने व्याह करने-का संदेशा कहलभेजा । ताराबाईने उसके उत्तरमें निवेदनकिया

कि जो मेरे पिताके शत्रुओंको रणमें पराजित करेगा उसहीसे मेरा व्याह होगा ।

जयमलने प्रतिज्ञाकी कि आफगानोंको पराजय करके ताराबाईसे व्याह करूंगा । पीछे वश तथा मर्यादाको त्यागकर उसके मिलनेपर तत्पर हुआ । इतनेमें राजाने क्रोधित हो उसका माथा काट डाला । तदनंतर उसके भाई पृथ्वीराजने प्रतिज्ञा पूर्णकरनेका बीडा उठाया और उसकार्यके पूर्णकरनेको अपनी कमरकसी । पृथ्वीराजकी प्रशंसाको सुनकर ताराबाईने निश्चयकर लियाथा कि मेरे योग्य यही वर है और इसहीसे व्याह करूंगी । पितानेभी इस सम्बन्धकी ओरसे प्रसन्नता प्रगट की और अन्तमें उसही प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेपर विवाह होना स्थिर होगया । पृथ्वीराजने अफगानोंपर आक्रमणकरनेको मुहर्रमका महीना अच्छा समझा क्योंकि यवनलोग इस महीनेमें ताजिया बनाने तथा उसहीके व्यवसायमें लिपटे रहते हैं । तदनंतर मुहर्रमका महीना आनेपर वह पांचसौ चतुर और साहसी घुडसवारले उसही समय उनकी राजधानीपर पहुंचा कि जिस समय वह ताजियोंको बाहर चौकमें निकाललाये थे । रानी ताराबाईभी उससमय अपने होनहार पतिके संग पुरुषोंके वस्त्र धारण किये घोडेपर सवार हो अस्त्र शस्त्र धारण लिये उपस्थितथी । रानी ताराबाई और पृथ्वीराज एकबडे साहसी सर्दारको साथले अत्यन्त पौरुष व पराक्रमसे शहरमें घुसे और शेष सेनाको स्थिर भाव खडे रहनेको आज्ञादे किलेके बाहरही रक्खा । यह तीनों घोडे दौडाते ताजियोंकी भीडभाडमें घुसते अफगान सर्दारके महलतक चले गये । इतनेमें उस सर्दारने नीचे आकर पूछा कि "तुम तीनों विदेसी सिपाही कहां जाते हो ?" उसने पूछाहीथा कि इतनेमें पृथ्वीराजने उसके भाला मार और ताराबाईके समीप खडेहुए सर्दारने उसे उठाकर पृथ्वीपर दे मारा सर्दारके मारेजानेका समाचार मनुष्योंमें प्रगटनहीं किया और शीघ्रता पूर्वक अपने ३ घोडोंको दौडाय बातकी बातमें किलेके फाटकपर जा पहुँचे । परन्तु द्वारपर पहुँचतेही उन्होंने देखा कि एक मतवाला हाथी

राहरोंके हुए खडाहै। तारावाईने यह देखतेही एकप्रचण्ड खड्ग घुमाय बलपूर्वक उस हाथीकी सूँढपर मारा, सूँढ कटकर नीचे आपडी और हाथी चिंघाड मारता हुआ मार्ग छोडकर भागा। मार्ग खुलतेही वे तीनों अपनी सेनामें जा मिले और उस सावधान खडी हुई सेनाको एकसाथही आक्रमण करनेकी आज्ञादी। सर्दारके मारेजानेसे शत्रुओंका हिल टूटगयाथा और साहसभी न था, इसकारण कोईभी उनके सामने न डटसका वरन् अपने २ प्राणबचाय चारोंओर छिन्नभिन्नहोकर भागगये। जो कितने एक भागते२ शहरमें बचगयेथे वे सभी राजपूतोंकी तीक्ष्ण तलवारसे काटेगये। इसप्रकार पृथ्वीराजने अपने श्वशुरका गयाहुआ देश अफगानोंके पंजोंमेंसे छुटाय फिर उनकोही अर्पितकिया। देश जीत लेनेके उपरांत तारावाईका व्याह बडी धूमधामसे पृथ्वीराजके संगहुआ।

पृथ्वीराजने इसप्रकारकी वीरताकर शत्रुसे देशको छुडाया। कारणवश बहनोईसे पृथ्वीराजकी लागडांट होगईथी। सुअवसर पाय अपने अपमानके बदला लेनेकी इच्छासे मिठाईमें विष मिलवाय पृथ्वीराजके भोजन करनेको लाया। सालेके कपटभावको न जानकर आईहुई मिठाईको प्रीतिपूर्वक खागये। परन्तु वह हलाहल विष अत्यन्तही तीक्ष्ण था, इसकारण थोडेही समयमें रोम २ में व्याप्त होगया, प्राण सूखने लगा गलेमें कांटे पडनेलगे जीभ खींचने और पैर लडखडाने लगे। अंतमें यह जानकर कि मैं अब विषके वशमें होगयाहूं प्राण न बचेंगे रानी तारावाईको अपने महलमेंसे बुलवाया और कहला भेजा कि "मेरे साथ छल किया गया है! प्राणका अंतिम समय आगया, इसकारण शीघ्रतापूर्वक मुझसे आकर मिलें।" रानी तारावाई महलसे नीचे उतरी, परंतु समीपभी नआनेपाई थी कि उनका प्राण देह छोडकर निकल गया। रानीने राजाके मृतक शरीरको गोदमें ले सती होनेको चंदनकी चिता सजवाय आपभी उसमें बैठकर स्वर्गको पया-

नकिया । इन दोनों वीरोंके वीरत्वकी प्रशंसा आजतक राजपूतानेमें प्रसिद्ध है, इतना नहीं वरन् वह इतिहासोंमेंभी अजर अमरहैं ।

रानी रूपवती ।

भारतवर्षके वहुत थोडे मनुष्य रानी रूपवतीके चरित्रोंको जानते होंगे वरन् उसके नामकोभी वहुत थोडे मनुष्योंने सुना होगा । यह रानी रूपवती गुणवान् और बुद्धिवती थी । वह ऐसी उत्तम कविता वनाती कि इस विषयमें इसका जीवनचरित्र एक मनोहर वार्त्ताके समान चित्ताकर्षक है। वाजवहादुर नामके एक अफगान सर्दारने कुछ समयतक दिल्लीके वादशाहोसे प्रतिकूल हो, मालवादेशको अपने अ-धिकारमें लाय अपने बलसे स्वाधीन राज्यको स्थापितकर राज्यकरना आरंभ कियाथा । मालवाके सारंगपुर नामक नगरमें रानी रूपवतीका जन्म हुआथा, कि जो उज्जैन शहरसे पचपनमीलकी दूरीपर कालीनदी केतीर वसाहुआहै । रानी रूपवतीके माता पिता कौनथे और वाल्यकाल उसका किसदशामें व्यतीतहुआ इसका कुछ वृत्तांत ज्ञात नहीं है । परन्तु मेलकम साहव लिखते हैं कि,—रानी रूपवती सारंगपुरकी एक वेश्याकी पुत्रीथी । वह विशेष रूपवती तो न थी परन्तु गाने वजानेमें अत्यन्तही चतुरथी । रूपवती के भोले स्वभाव, गुण तथा रूपके ऊपर वाजवहादुर मोहित होगया था, उसको अपने समीप रख अन्तमें अपनी वेगम वनाया तदनन्तर उन दोनोंमें एक अत्यन्त गाढप्रेम होगया, वह यहांतक वढा कि यदि एक दूसरेसे घडीभरकोभी पृथक् होते, तो सारसकी जोडीके समान वेचैन होजाते ! वाजवहादुर स्वयं राजकाजसे विरक्त हो रानी रूपवतीके साथ भोगविलासमें लीन होगया । विना रूपवती के उसको क्षणभरभी तो चैन नहीं पडताथा । जिससे कि वेगमसाहव विशेषप्रसन्न रहें वही यत्न और नए नए लाड चाटकी चिंताहीमें वह

रात दिन नियुक्त रहता, और प्रेम बढानेकीही चेष्टा करता रहता। रानी रूपवतीके रहनेके लिये उसने सुन्दर महल बनायाथा कि जिसका खंडहर अबतकभी उसका स्मरण कराताहै। निष्कपट और सच्चा प्रेम इतना बढगयाथा कि केवल देहही देह पृथक् जान पडताथा परन्तु चित्त एकहीथा दोनोंके रूप,गुण,स्वभाव तथा अवस्थाकीभी समानताही थी। गाने बजानेमें प्रेम तथा कवितामें एक समानही रुचि होनेसे वे अति प्रेमपूर्वक विलास करते रहतेथे। इसप्रकार विषय सुखमें लगभग सातवर्ष व्यतीत होगये। तदनंतर १५९०ई०में अकबरबादशाहकी राजतृष्णासे अथवा दैवेच्छासे सर्दार अहमदखां दिल्लीसे सेनाले मालवेपर चढआया। बाजबहादुरने शत्रुसे युद्ध करनेके निमित्त सारंगपुरमें सेनाको इकट्ठा किया परन्तु अहमदखांकीसेनाके सन्मुख युद्धमें उसकी सेना नहीं ठहर सकी सिपाहियोंके जीव लेकर भागनेसे बाजबहादुरभी रणभूमि छोडकर भागा। विना प्रयत्नही राज्यमिलनेसे अहमदखां मूछोंपर ताव देता हुआ नगरमें घुसा, और कोश (खजाना) हाथी, घोडा, तथ राजमहल आदिको अपने अधिकारमें कर लिया।

रूपवतीके सम्बन्धमें इतिहास लिखनेवालोंने पृथक् २ भावसे लिखा है; परन्तु सबका तात्पर्य बहुधा एकहीहै। एक इतिहासकार ऐसा कहताहै कि अहमदखांके हाथमें पडनेके भयसे उसने आत्महत्या की। दूसरा कहताहै कि जिस समय बाजबहादुर युद्धको जाने लगा उस समय उसने बेगमोंकी रक्षाके निमित्त कुछ सेनाको वहां नियुक्त किया और आज्ञादेदी कि यदि रणभूमिमें मेरी पराजय सुनातो रनवासमें जाकर मेरी समस्त रानियों (बेगमों)को काटडालना जिससे कि उनमेंसे कोई शत्रूके हाथमें न पडजावे। सिपाहियोंको जब पक्का समाचार मिला कि बाजबहादुर युद्धभूमिमेंसे प्राण लेकर भागगया तब उन शुभचिंतक साहसी सिपाहियोंने शत्रुओंके हाथमें पडनेसे पहिलेही रनवासमें जाय सब बेगमोंको काटडाला रानी रूपवतीभी काटडाली गई। जब इस समा-

चारको अहमदखांने सुना तब उसने अपने विश्वासी मनुष्योंमेंसे एक गुप्त मनुष्यको पक्का समाचार लानेके निमित्त राजमहलमें भेजा। अहमदखां नेभी रानी रूपवतीकी प्रशंसा सुनीथी, इससे उसकी अभिलाषाथी कि किसी यत्नसे वह मेरे वशमें आवे।परन्तु पीछे ज्ञात हुआ कि जो समाचार मिला है वह यथार्थहै। तब उसने रानी रूपवतीके मृतक शरीरमें तृष्णाके मारे हाथ फेरकर देखा तो ज्ञातहुआ कि उसका प्राण देह त्यागकर नहीं गया वरन् शरीरम बहुत भारी घाव लगा है। यह देखतेही वह उसको औषधोपचारके निमित्त योग्य स्थानमें लेगया और वहां औषधियों तथा मलहमपट्टीसे चिकित्सा की। रूपवती प्रथम तो सावधान हुई और मलहम पट्टीको खोल न बचनेका आग्रह बताया। परन्तु अहमदखांने उससे कपटपूर्वक कहा कि तुम्हारे आरोग्य होनेपर तुम्हें बाजबहादुरके समीप भेजवादूंगा। दैवयोगसे वह कुछ दिनोंमें आरोग्य होगई, तब अहमदखांने अपने गुप्त विचारको उस से प्रगटकिया और कहा कि; "तुमको मैंने अपनी बेगम बनानेके लिये रक्खाहै।" परवशताके कारण उससमय तो उसने यह स्वीकार करलिया, परन्तु उसकी आशा पूर्ण होनेके पहिलेही रानी रूपवतीने विषखाकर देहको त्यागकिया। तथा एक इतिहासकार ऐसा लिखता है कि—रानी रूपवती विषखाकर नहीं परन्तु कलेजेमें बरछी मारकर मर गई।

खफीखां, कि जिसका लेख अधिकतर प्रमाणित गिनाजाताहै कि, बाजबहादुर जब हारकर भागगया और रानी रूपवती अहमदखांके हाथमें पडी, तब उसने देखा कि यह दुष्ट किसीप्रकारसे भी न मानेगा। मेरी विकलता विरह और विनतीका उसपर कुछभी प्रभाव नहीं होता और उसके पत्थरके समान कठोर हृदयमें दया नहीं उत्पन्नहोती! उलटा मुझ दुःखियारीको अनेक प्रकारके क्लेश देकर सताताहै और मेरे यथार्थ प्रेमीका उसको ध्यान भी नहींहै। यह विचारकर उसने एक दिन अति क्लेशित अंतःकरणसे उसकी इच्छाका पूर्ण करना स्वीकार कर नियत

समयमें उसको अपने समीप आनेके लिये कहा । उससमय सुन्दर वस्त्र तथा आभूषणोंको धारणकर अनेक प्रकारके सुगंधित पदार्थोंको लगाय, मुखपर एक झीनासा रूमाल डाल, पलंगपर लेटीहुई मानो उसके आनेकीही बाट देखतीहुई सोरही; दासीने यह जाना कि बेगम साहब निद्राके वशमें होगईहै । थोडीदेरमें मियां अहमदखां बडी प्रसन्नतासे सजेसजाये हँसतेहुए, अपनी इच्छा पूरी होनेके विचारमें झूमते झामते, मनकी लहरोंमें डूबकियें लगाते वहांपर आपहुँचे दासी रानी रूपवतीको जगाने लगी । परन्तु जो सदैवके निमित्त सो-रहीहै वह क्योंकर जागे ? जब दासीके जगानेसे वह न जागी तब उसने मुँहको खोलकर देखा तो वह निर्जीव ज्ञातहुई उसका शरीर ठंडा होगयाथा । रानी रूपवतीने विषखाकर प्राण त्यागकियेथी । वह अत्यन्त ही उदारचित और शांतस्वभावथी । बाजबहादुरमे उसका इतना घना स्नेह होगयाथा । कि उसके बिना उसका जीवन दुस्तर होगयाथा । अपने प्रियतम् विना जिसका जीवनहीं निष्फलथा तब वह शेषरहे हुए जीवनके निमित्त निर्लज्ज हो अन्यपतिको क्यों स्वीकार करती और फिर उसमेंभी अपने पतिके शत्रुकी स्त्री होकर रहना उसको किस प्रकारसे भाता ? !

रानी रूपवती और मिश्रदेशकी रानी क्लोपेट्रानेका इतिहासमें बहुत सा अंश मिलता है । परन्तु रूपवतीमें पतिभक्ति, सत्स्वभाव और सत्यता विशेषथी । यूनान देशकी स्त्री सफोसे निःसन्देह उसकी बहुत कुछ समानता मिलती है यह दोनों स्त्रियें समानही बुद्धिशाली, कवि और पतिपरप्रेमयुक्त थी । इतनाही नहीं वरन् पतिपर तन, मन, धन, भी न्योछावर कर दिया था और पतिके वियोगमें प्राणतक त्याग दिये थे । उनकी कविता आजतक प्रसिद्धहै । रूपवतीकी बनाई हुई राग रागिनियें मालवेमें अधिकतासे फैलीहुईहैं । यद्यपि उसका कोई स्व-तन्त्र ग्रन्थ देखनेमें नहीं आता तो भी रामधारी आदि, रसिक लोगोंको रूपवतीके गानेको सुनाय प्रसन्न करतेहैं; वरन् वे उससेही अपनी

जीविका चलाते हैं । यह लोग बहुधा एक दूसरेके कंठसेही सिख कर याद कर लेते हैं । इन गीतोंकी भाषा शुद्ध मालवी प्रेमरससे भरी हुई और अत्यन्त हृदयद्रावकहै । कहतेहैं कि नीचेका दोहरा कहते २ रूपवती अपने कलेजेमें बर्छी मारकर मरगई थी;–

तुम बिन जियरा रहत हत, मांगतहै सुखराज ।
रूपवती दुखिया भई, बिना बहादुर बाज ॥ १ ॥

दुर्गावती ।

रानी रूपवतीके समयमेंही एक दूसरी रणवीर, बुद्धिवती और इतिहासको शोभित करनेवाली एक सुन्दरी अति विख्यात होगईहै कि जिसका नाम दुर्गावतीथा । वह बुंदेलखण्डकी प्राचीन राजधानी महोवेके राजा चंदेलकी पुत्री और गढमंडलेके गोंड राजाकी रानी थी । गोंड राजाने चंदेलराजाकी पुत्रीसे व्याह करनेको संदेशा कहला-भेजा । चंदेलराजा ऊंचे कुलका था, इसकारण वह कुलके अभिमानसे परिपूर्णथा, और तुच्छ कुलवाले गोंडको पुत्री देनेमें अपनी अप्रतिष्ठा मानता था । इससे व्याह न करनेकी इच्छासे गोंडराजासे कहला भेजा कि,–यदि गोंड राजाको मेरी पुत्रीसे व्याह करना होतो मेरी राजकुमारीके साथ चलनेके निमित्त पचासहजार मनुष्योंकी सेना ले-आवे । यदि उससे इतना होसके तो मुझको कन्या देना स्वीकार है । ” रामगढ, रतनपुर और संभलपुरके गोंडराजा तो असमर्थ और दरिद्रीथे क्योंकि लुटेरोंने उनके राज्यका नाश करडालाथा । परन्तु गढमंडलेके राजाका ऐश्वर्य और बल इतनाभारी था कि उसने सहजमेंही इतनी सेना इकट्ठी करदी और बडी धूमधाम व प्रतिष्ठाके साथ चंदेलकी पुत्री से व्याहकिया । दुर्गावतीके साथ व्याह करनेसे देशमें उसकी अत्यन्तही प्रतिष्ठा हुई और यश फैला । क्योंकि उससमय तक ऐसे ऊंचे कुलकी पुत्री किसी नीचकुलको नहीं प्राप्तहुईथी । गढमंडल जबलपुरसे पांच

मील दक्षिण दिशामें नर्मदाके दाहिने किनारेपर वसा हुआ है। पहिले यह वहुत उत्तम शहर था। यहां स्थान प्रतिस्थान पर पत्थरके सुन्दर घाट वने हुएहैं और तीरपर उत्तमोत्तम मंदिरभी शोभायमान हैं। सन् १६०० ई० में गढमंडलेका राज्य १०० मील चौडा और २०० मील लंवाथा। उससमय समस्त देश सुख सम्पत्तिसे परिपूर्ण था कोई भी देशी या विदेशी दुःखी न था। लगभग १९ वीं सदीतक यह देश स्वतंत्र रहा।

इसदेशके सम्वन्धमें अब्वुलफजल नामक इतिहासकार लिखताहै कि,—देशके विशेपभागमें जंगलथा और अगणित हाथी मनमानी रीति से विचरहेथे। इसराज्यके धन और धरतीका वर्णन सुनकर अकवर-का एक सर्दार सन् १५९५ ई० में सेनालेकर चढआया। उस समय राजाका परलोक होगयाथा और रानी दुर्गावतीही पुत्रके वालक होनेसे राज्यका कार्य चलाती थी। मुसलमान सर्दारका आना सुनतेही वह स्वयंही अपने १५०० हाथी १७००० सवार तथा अगणित पैदलोंका दल ले सर्दारसे युद्ध करनेको चढगई। और लोहेका जिरह वख्तर पहिन, हाथमें धनुपवाण तथा भाला वर्छी ले स्वयं सेनाके वीचमें खडीथी। अपनी महारानीका पौरुप वल और साहस देख तथा स्वतंत्रराज्यके सुख व पराधीनताके क्लेशोंको विचार कर समस्त सेना आवेशमें भर आई और अपने वल तथा पराक्रमको जताय उत्साहपूर्वक मुसलमानोंके विमुख युद्ध करनेको तइयार हुई। सवहीके चित्त आवेशसे उमंड रहेथे, इसकारण युद्धमें अपना साहस और वल दिखाय शत्रुको भगादिया। युद्धमें ९०० सवारोंको काट विजयध्वनि करने लगे। रानी दुर्गावतीने यह विचारा कि शत्रु-ओंको पराजित तो करदिया परन्तु अव रातको उनपर आक्रमण कर फिर पराजित करके भगावें। परन्तु इसवातसे उसके सेनापतियोंका साहस न हुआ। सर्दार आफिसखां इस पराजयसे अत्यन्त लज्जितहो दूसरीवार तोपखानाको संगले उसके देशपर चढआया। इसदेशका

मार्ग अत्यन्तही ऊंचा नीचा था इसकारण पहलीबार तोपखाना न लासकाथा । उसको चढ आया हुआ देख रानीने पहाडके एक छोटेसे मार्गपर मोरचा लगाया, परन्तु मुसलमान दूसरे मार्गसे मैदानमें उतरगये; कि जहांपर रानीकी सेना तइयार थी । रानीके पुत्रने दोवार आक्रमण करके शत्रुसेनाके पैर उखाड दिये । परन्तु तीसरीवेरके आक्रमणमें राजकुमार घायल हुआ, उसके शरीरसे रुधिरकी अविरल धारा वहने लगी अंतमें मूर्च्छित होगया और जीनेकी आशा न रही । तव रानीने आज्ञा दी कि राजकुमारको तम्बूमें लेजावो । इससे असाहसियाको युद्धसे भागजानेका सुअवसर मिलगया और इस सेनाके इतने अधिक मनुष्य भागगये कि रानीके समीप केवल सौ सिपाही रहगये,परन्तु तो भी रानी युद्धसे पीछे न हटी। कुछ विलंबके पश्चात् रानीकी आंखमें एक वडातीक्ष्ण वाण आलगा । परन्तु धन्यहै उस रानीको ! कि तत्कालही उसे पकडकर खींच लिया परन्तु लोहेकी एक तीक्ष्ण किनकी आंखमें रहगई । इतनेहीमें दूसरी ओरसे एक तीर गर्दनमें आलगा, उसकोभी रानीने खींच निकाला। परन्तु वेदनाके अधिक होने व रुधिरके अविरल धार वहनेसे उसकी आंखोंमें अंधेरा आनेलगा और हाथीके हौदेसे फिरनेलगी । इतनेहीमें एक स्वामिभक्त सर्दारने रानीसे विनती की कि-"यदि आज्ञा हो तो आपको युद्धसे वाहर निकाल लेजाऊं।" उसके उत्तरमें रानीने कहा "यद्यपि इस समय शत्रुसे हार हुई हैं तथापि मेरी प्रतिष्ठा मेरेही हाथमेंहै संसारमें थोडेसे जीवनके निमित्त इस अपयशकी गठरीको वांधना उचित नहीं । अपकीर्तिकी समान और दूसरा अपमान क्या होताहै ? जो तू मेरा सच्चा स्वामिभक्तहै तो एक कामकर, वह यहह कि शीघ्रतासे एक वर्छी मेरे कलेजेमें मार कि जिससे मैं आत्मघातके पापसे वचूं और शरीरका त्यागकरूं । यह कार्य तुझसेही होगा इससे कहा 'ले शीघ्रताकर' विलंबका अवसर नहीं" इस दुःखसे भरीहुई वाणीको सुन सर्दार रोने लगा और अत्यन्त नम्रतापूर्वक विनती कि-"हे महारानी ! स्वामिनी ! यह हाथी अत्यन्त शी-

ग्रगामी है यदि आप आज्ञादेवें तो अत्यन्त शीघ्रतासे आपको रक्षित स्थानपर लेचलूं ।" रानीने देखा कि शत्रुसेनाने चारोंओरसे घेरलिया है, कहीं ऐसा न हो कि वंदी होजाऊं। इससे तो मरनाही अच्छा है। ऐसा विचार अपनी कमरमेंसे एक वरछी निकाली और वलपूर्वक उसको छातीपर मारकर प्राणत्याग दिये ।

जब मुसलमानोंने रूमी ईसाई वादशाहसे रूमकी राजधानी छीनी, तब उसनेभी शत्रुके हाथमें पडनेकेभयसे अपने एक प्रिय सेवकसे यही वचन कहाथा, कि जो राणी दुर्गावतीने अपने सर्दारसे कहा था । परंतु वह स्वामीकी आज्ञा मान उसको मार और स्वयंभी मरगयाथा। संसारमें अप्रतिष्ठा होनेकी अपेक्षा मरनाही सबसे अच्छाहै । ऐसा परंपरासे होताही आयाहै । राणी दुर्गावतीके सर्दारनेभी अत्यंत लज्जितहो और अपनेको मरने योग्य विचार स्वामिनीके मृतक शरीरके ऊपर अपना शरीर त्यागदिया परंतु पीछे पीठ न फेरी ।

स्टीमेन साहब लिखतेहैं कि—"उस पर्वतमें राणी दुर्गावतीकी पवित्र समाधिके देखतेही उसका स्मरण हो आताहै।:जहांपर, यह युद्ध हुआथा वहां पत्थरके दो खंभे खडेहैं, कि जो राणीकी समाधिके पीछेहीहैं। लोग कहतेहैं कि यह उसके ढोलथे कि जो अब ईश्वरीलीलासे पत्थर होगये हैं ! ऐसाभी कहाजाताहै कि आधीरातके समय उनका भयंकर शब्द वीरोंकी समाधिके समीप हुआ करताहै । जो यात्री इस मार्गसे होकर जातेहैं वह आदरपूर्वक राणी दुर्गावतीकी समाधिके ऊपर चमकते हुए बिल्लौरके टुकडे कि जो उन पहाडमेंही होतेहैं, चढातेहैं। जब मैंने इस समाधिको देखा,तब मुझे राणीकी वीरताका स्मरणहोआया और मेरा चित्त भरगया । वहांकी रीतिके अनुसार मैंनेभी एक बिल्लौरका टुकडा उनकी समाधिके ऊपर चढाया, और उनके गुणोंका वर्णन किया । परदेशियोंकोभी पवित्र स्त्रियोंकी ओर क्योंकर पूज्यबुद्धि हुई ! तीनवर्ष के उपरांत इस दुर्गावतीकी देखादेखी अहमदनगरकी चांदबीबीभी हाथ

में नंगी तलवार ले, मुँहपर पर्दाडाल सेनाके साथमें मुगल सेनासे युद्ध करनेको उद्यत हुईथी । इसकी कीर्तिभी दक्षिणदेशमें भलीभांतिसे विख्यातहै ।

जोधबाई ।

मुगलराज्यके इतिहासमें बेगम जोधबाईभी अति प्रसिद्ध हैं । रानी जोधबाई, जोधपुरके राजा मालदेवकी पुत्री और उदयसिंहकी बहनथी । उदयसिंहने उसका व्याह शत्रुता दूर करनेके निमित्त दिल्लीके बादशाह अकबरसे कियाथा। इससम्बंधसे वैरभाव दूर होगया नहीं, वरन् जोधपुरका राज्य अत्यन्त विस्तारित होगया । भारतवर्षके राजकुलमेंसे यह पहिलीही राजकुमारी मुसलमानोंके घरमें उनकी रीत्यनुसार व्याही गईथी । यह व्याह सन् १५६९ ई० में हुआथा । जोधबाई अत्यन्त रूपवती व गुणवती थी इसकारण सब बेगमोंकी अपेक्षा अकबर बादशाहको अत्यन्त प्रियथी । विवाह होनेके पीछे कुछेकसमयके उपरांत जोधबाई अपने पतिके साथ अमीनुद्दीन चिश्तीकी समाधि दर्शनके निमित्त स्वयं पैदल चलीगई । अकबरने यह यात्रा संतानके निमित्तकीथी । बादशाह और बेगम नित्य तीनकोसकी यात्रा करतेथे । रानीके पैरमें घास, कंकर तथा कांटा आदिक न लगें, इसकारण नित्य उतनी पृथ्वीपर शतरंजी और गलीचे बिछाये जातेथे और पर्देके निमित्त रानीके दोनों ओर कनातें खडी की जातीथीं । इसप्रकार बादशाह और बेगमका नित्यप्रति नित्य जहां २ पर निवास होता वहां २ ईंटोंके बुर्ज और कोठे बनाये गयेथे । ऐसे परिश्रमसे अकबरने यात्राकर अमीउद्दीनकी समाधिके दर्शन किये और उनकी प्रार्थनाकर रात्रिको वहींपर निवास किया ! कहाजाता है कि औलियाने उनसे स्वप्नमें कहा कि "जा, फतेहपुर सीकरीमें एक ईश्वरका भक्त साधुके वंशमें रहताहै उसको प्रसन्नकर । प्रसन्न होनेसे वह तुझको सन्तान उत्पन्न होने

का वरदेगा।" इस स्वप्नके अनुसार अकबरशाह फतेहपूर गया और शेखसलीम नामके साधुकी अत्यन्त सेवा की। अत्यन्तसेवा और प्रार्थना से प्रसन्न होकर साधुने वर दिया कि, "जोधबाईके गर्भसे तेरे एक अत्यन्त तेजस्वी और दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होगा।" ईश्वरकी कृपासे बेग-मके गर्भरहा वह पुत्रके होनेतक उस सन्तकी कुटीकेही समीप रही। अन्तमें कुशलतापूर्वक राजकुमारका जन्म हुआ और उसका नाम साधु स्मरणके निमित्त मिर्जासलीम रक्खा कि जो पीछेसे जहांगीर नाम धारणकर दिल्लीके सिंहासनपर बैठा।

बहुतसे मनुष्योंको ऐसी शंका होसकती है कि आर्यधर्मका पालन करनेवाली स्त्री मुसलमानोंके रनवासमें अपने धर्मका पालन किसरीति से करती होगी? परन्तु कितने एक दूसरे मुसलमान बादशाहोंके समान अकबरको मतका पक्षपात नथा। उसके मनमें यहीथा कि "किसी प्रकारसेभी हिन्दूलोग हमको परदेशी माने और हमारे साथ सबप्र-कारके व्यवहारका बर्ताव करते रहें। यदि सब मनुष्योंमेंसे जातिभेद मिटजावे तो सबही एक ईश्वरके पुत्र और समान धर्मवाले होजायँ। मैं हिन्दुओंकोभी अपने भाइयोंकीही समान जानताहूं और मुसलमान तथा हिन्दुओंमें परस्परका समान व्यवहार रखताहूं।" (कहाजाता है कि जो परस्परमें इनका सम्बन्ध वर्तमान रहता तो मुगलोंका राज्य इस देशसे न जाता!) जो कुछ सुखचैन आर्य्योंको अकबरके समयमें मिला वह सबही प्रताप रानी जोधबाईका था। जोधबाई उदारचित्त, शीलवान, दयालु और धर्मात्माथी बादशाह प्रेमवशहो उसके आधी-नथा, इससे जोधबाईके प्रबन्धपरही बादशाह और मन्त्री सबही राज-काज करतेथे। जोधबाईका प्रताप इतना प्रबलथा कि उसकी चित्त-वृत्तिके विरुद्ध कोईभी कुछ कार्य न करसकताथा। वह आर्यधर्मकी अभिमानिनीथी इसकारण "हिन्दुओंको कैसे सुखहो" इसहीका विचार किया करती। राज्यके प्रबन्धमें वही फेरफार कराती। इस प्रतापवाने

रानीके प्रभावसेही अकबरके राज्यमें हिन्दुओंको सुखकी शीतल छाया मिलती थी ।

भलीप्रकारसे नहीं जानागया कि जोधबाईका परलोक कब हुआ, परन्तु मिस्टरटाडसाहबके लेखसे ज्ञात होताहै कि अहमदनगरके जीतनेपर सन १६००ई० में उसका स्वर्गवास हुआ। जब जोधबाई मरीं तब अकबर बादशाहने यह आज्ञाकी कि निकटवर्त्ती मुख्यलोग सब दाढी, मूछ और शिरके बालोंको मुडाय शोक चिह्न धारणकरें। सबहीने इस आज्ञाके अनुसार विवश होकर मूछें मुडाईं, परन्तु जब बादशाहका नाई हाडा राजाके यहां मूंछें मूडनेको आया तब सब राजपूतोंने धक्का मारकर उसे बाहर निकाल दिया ! हाडाके राजा राव भोजकी इस धृष्टताका समाचार अकबरको मिला और कुछ मनुष्योंने बादशाहके कानभी भरे । इसकारण बादशाहेन उसकी ही सहायतासे अहमदनगरको जीताहै इसका कुछभी विचार न कर आज्ञादी कि, "जो प्रसन्नता पूर्वक मूछें न मुडावे तो उसके हाथ पांव बांधकर मूछें मूडो! परन्तु ऐसा किसका साहसहै कि जो सिंहको पकड उसके बालोंको इसप्रकार मूडे ? इस विचित्र आज्ञाके सुनतेही सब राजपूत बदल गये और अपने अस्त्र शस्त्र संभालने लगे ! हाहाकार मचने लगा, मानों युद्धकी सब तइयारी होगई । जो अकबर अपनी मूर्खतापर पश्चात्ताप कर रावके डेरेपर न जाता तो इस निर्जीवबातमें रुधिरकी नादियें वह निकलतीं । अकबरने वहां जाकर हाडा राजपूतोंके वीरत्वकी प्रशंसा की कहना तो ऐसा चाहिये कि उसने अपने चित्तका भय प्रगट किया। और हाथी परसे उतर रावके समीपजाय अत्यन्त आदर किया । राव बूंदीने अकबरको कईएक अयोग्य वचनभी कहे, परन्तु "दबीबिल्ली चूहेसे कान कटाती है" इस कहावतके अनुसार सब सहनकर ठंढे कलेजेसे अपने डेरेको प्रस्थान किया । अकबरने अपनी मान्यवती रानी जोधबाईके स्मरणार्थ एक समाधि वहांपर बनाईथी कि जहां वर्तमान समयमें आगरेमें गोरोंकी परेड है ।

रूपनगरकी राजकुमारी।

दिल्लीके बादशाह औरंगजेबने रूपनगर कि जो मेवाडकी एक (शाखाहै) की राजकुमारीको अत्यन्त रूपवती सुन उससे ब्याह करने की इच्छा प्रगट की और उसके यहां ब्याहका संदेशा भेजा। परन्तु आर्यनारीने म्लेच्छके घरमें जाना स्वीकार न किया वरन् उससे ब्याह करनेमें अपनी घृणादिखाई। राजकुलका अभिमान जताया और उसके आये दूतको फटकार कर निकलवादिया। इससे औरंगजेबने क्रोधित होकर रूपनगरपर आक्रमण करनेको दो हजार घुडसवार भेजे और अपने सेनापतिको आज्ञा दी कि जो वह मुझसे ब्याह करनेमें प्रसन्न न होवे तो उसको बलात्कार पकडलाना। सेनाको आता हुआ सुन राजकुमारीने राजासिंहसे कहला भेजा कि "कसाईके हाथसे गायका छुडाना क्षत्रियोंका कामहै, इसकारण आप सहायता करके मेरी रक्षा करें। यदि आप प्रयत्न करके इस दुष्टके पंजेमेंसे छुडावेंगे तो मैं सदैवके निमित्त आपकी होकर रहूंगी। आपको अपनी वीरता दिखानेका यथार्थ समय मिलाहै। इस अवसरको न खोना चाहिये।" फिर पत्रके अंतमें यहभी लिखादियाथा,—" जो राजसिंहिनीहूं तो कभी बगलाकी स्त्री न हूंगी। क्या उच्चकुलकी राजकुमारी नीच म्लेच्छकी स्त्री हो सकती है" साथही यहभी धमकी लिखीथी कि " जो कदाचित आप आकर मेरी रक्षा न करेंगे तो मैं इस दुष्टसे बचनेके निमित्त आत्महत्या करके प्राणोंको छोडदूंगी"।

इसप्रकारके पत्रको वांचतेही राजासिंह अपने साहसी सवारोंको संगले चुपचाप रातदिन बराबर चलकर अर्वली पहाडके नीचे २ हो अचानक रूपनगरमें आपहुँचे उनके आनेके पश्चात्ही बादशाही लश्करभी आ पहुँचा। वह उसके साथ अत्यन्तही शूरतासे लडे और पराजितकर पीछेको मारहटाया। इस जयके होतेही राजसिंहने राजकुमारीको अपने साथले अपने राज्यमें आय उससे ब्याह

किया । आर्यराजकुलकी स्त्रियें कैसी कुलाभिमानी तथा धर्माभिमानी थीं, और क्षत्री उनका कितना आदर सत्कार करते थे वह इस वर्णनसे भलीप्रकार जानाजाता है ।

यशवंतसिंह राठौरकी रानी ।

महाराज यशवंतसिंहजी उज्जैनकी लडाईमें मुराद तथा औरंगजेबकी मिलीहुई बृहतसेनासे युद्धकरके हारगये, और वहांसे अपने राज्यकी ओर लौटे, परन्तु उसकी रानीने कि जो उदयपुरके रानाकी पुत्रीथी, पतिको हारकर पीछे आताहुआ सुन तत्कालही शहरका द्वार बंद करदेनेकी आज्ञा दी और द्वारपालोंसे कहा कि उसको शहरमें न आने दें । साथही यह भी कहलाभेजा कि,–"रानी ऐसे कायर पुरुषका मुँह न देखेगी । फ्रांसदेशका निवासी बर्नियर कि जो उससमयमें इसदेशकी रीति भांति देखनेको आयाथा वह अपने ग्रंथमें लिखताहै कि यशवंतसिंह अत्यन्त वीरतासे लडे । परन्तु जब उनके समीप केवल पांचसौही लडैये रहगयेथे, तब उन्होंने जाना कि अब युद्ध करनेमें केवल वृथा प्राण देनेके अतिरिक्त दूसरा कुछभी फल नहीं है । और इससे कुछ कार्यकी सिद्धि न होगी । इस विचारसे युद्धभूमिको छोड अपने राज्यकी ओर पीछे लौटे । जब रानीने यह सुना कि राजा हारकर पीछे लौटे हैं, तब इस आपत्तिके समयमें उसको अपने रक्षक सिपाही भेजकर धैर्य बँधाना था परन्तु ऐसा न कर किलेका द्वार बंद करवादिया और द्वारपालोंको आज्ञा देदी कि राजा किलेमें न आने पावें । यह रानीको उचित न था । फिर भी रानी क्रोधके आवेशमें आकर कहने लगी कि,–"वह उदयपुरके रानाके समान तेजस्वी पुरुषका दामाद होनेके योग्य नहींहै मेरा पति युद्धमें पीठ दिखाकर भगा आताहै ? रणमें पीठ दिखानेवाला क्या मेरा पति होसकता है ? मेरा पति होता तो वह शत्रुको संग्राममेंही

जीतकर आता अथवा वहींपर कट मरता, परन्तु पीठफेर काला मुँह करके घर न आता । जो रणमें पीठ दिखाकर भागता है वह क्षत्री नहीं वरन् कायर है । ऐसे कायर पतिकी अपेक्षा यदि पति न होता तो ही मेरे निमित्त उत्तम था । मैं नहीं जानती थी कि मेरा पति युद्धमें अपयश व कलंककी गठरी बांधकर पीछेको लौटेगा । उसको तो ऐसाही उचित था कि युद्धमें शत्रुओंके साथ लडकर मरही जाता; कारण कि क्षत्रियोंका यथार्थ धर्म और यथार्थ शोभा यहीहै । " उसने अपने निमित्त राजमहलके एकभागमें चंदनकी चिता बना रक्खीथी और इस आशासे राह देखती रहीथी कि मेरे पतिपर अप्सरा गण स्वर्गमें जातेही वरमालाको पहिराय फूलोंकी वरषा करेंगी । परन्तु ऐसा होनेके पहिले अर्थात् अप्सराओंके मोहमें फंसनेके पहलेही मैं प्राणप्रियकी सेवामें उपस्थित रहूंगी । क्योंकि उसको निश्चयथा कि मेरा पति रणमें पीठ न फेरेगा । परन्तु शत्रुओंकी सेनामें अधिक उत्साह होनेके कारण उसको पराजित होना पडा । रानीने जब सुना कि पति युद्ध छोडकर आताहै तो उसकी सब आशा निराशामें मिलगई । इस निराशासे वह क्रोधित सिंहिनीके समान गर्जने लगी और क्रोधके मारे ऐसा स्वरूप होगया कि उसकी ओर देखना कठिन था, उसके कडवे वचनोंसे सभी थर्राने लगे ! वह नो दश दिवसतक अन्न जलका त्यागकर क्रोधमें पडीरही और उसने पतिका मुखतक न देखा ।

पुत्रीकी इस दशाको सुन उसकी माता उदयपुरसे आई और अनेक प्रकारसे समझाय शांत करके कहा कि-'अब दूसरे समय राजा अपनी सेनाको संभाल औरङ्गजेबके साथ लडनेको जाँय और बडी वीरतासे लडकर शत्रुसे अपना बदलालेंगे । ' इस वाक्यको सुनकर रानीका क्रोध शांत हुआ और तब उसने राजाको मुख देखा ।

इस वृत्तान्तसे पाठक भलीप्रकार समझ सकेंगे कि आर्यावर्त्तकी राजपूत स्त्रियें कितनी शूरवीर थीं और अपने नाममें कलंक न लगनेके

कारण राजपूतोंको कितना उत्साह दिलाती थीं ! वे पुत्र अथवा पतिक
रणसंग्राममें जाकर मरजाना तो अच्छा समझती परन्तु पीठ फेरनेके
किसी समय भी अच्छा न समझती थीं। कठिनवाक्य कह कहकर शूरोंके
चिढातीं और अल्प जीवनके निमित्त संसारमें अपयश कमानेकी अपेक्ष
रणमें मरना उत्तम समझकर उन्हें समझाती थीं। यश कमानेके निमित्त
कौनसा कामहै कि जिसको मनुष्य नहीं करते ? यथार्थ महात्मा और
सत्पुरुष इसहीसे यश प्राप्तकर अमर होरहेहैं ।

गुन्नौरकी रानी ।

राजपूत स्त्रियोंकी वीरता, धर्मशीलता, पतिव्रता, उदारता और
स्वरूप सौंदर्यताके अनेक उदाहरण हैं तथापि एक रानीका योग्य वृत्तांत
यहां लिखतेहैं ।

एकसमय भूपालके समीपस्थ गुन्नौर नामक स्थानको मुसलमानोंने
छलसे अपने अधिकारमें करलियाथा, वरन् वहांकी रानीके धर्म व प्रति
ष्ठाको नष्ट करनेपरभी वे तत्पर होगयेथे । दीनता और नम्रताक
अनादरकर महलके नीचे खडे हो एक मुसलमानने वहांकी रानीसे
कहा,–' हमारे साथमें व्याह करना कबूलहै या नहीं ? ' समय ऐसा
कठिन आगयाथा अस्वीकार करना व्यर्थथा; क्योंकि यह तो
प्रगटहीथा कि जो अस्वीकार कि किया जायगा तो बलपूर्वक पकडकर
उसे अनेक प्रकारके दुःख देतेथे। रानीने जब आंख फैलाकर देखा कि
अब किसी प्रकारसेभी छूटनेका उपाय नहींहै, तब चित्तमें कोई दूसराही
विचार स्थितकर खांसाहबसे कहला भेजा कि ' आपके साथ व्याह
करना मुझे स्वीकारहै, परन्तु दो घंटेका अवकाश मिलना चाहिये कि
इतनी देरमें विवाह सम्बन्धी सब सामग्री प्रस्तुत करलूं ।'
तदनन्तर तत्कालही महलका चौक झारा बुहारा गया, वहांपर खांसाहब
रानीके भेजे हुये सुन्दर वस्त्र और आभूषणोंको धारणकर, माला तथा पगडी-

परका मूल्यवान् रत्न जटित तुर्रा पहिन नियत समयमें वहां आयकर विराजमान हुए।रङ्गमण्डपमें रानीका मुख देखतेही खांसाहवतो मोहित होगये और मनही मनमें कहने लगे कि-" वाहवाह! जैसी इस रानीके बदन और जवानीकी तारिफ सुनीथी, उससेभी बढकर पाया! या पर्वरदिगार! आज मेरे ऊपर बडी भारी मिहरवानी की है ! रानीने खांसाहवको सत्कारपूर्वक बिठाया तो खाँ साहव मनमें इतना अधिक फूलगये कि मानों इसही समय उनके बहिश्त मिलगई । वह बारम्बार डाढी फट-कारने और मूछोंपर ताव देने लगे । उनकी प्रसन्नता इतनी बढगई कि उस समय यह भय था कि कहीं इन्हें हर्षसे सन्निपात न होजाय । कामातुर होकर बारंबार मनहीमनमें मगन होरहेथे और प्रसन्नता पूर्वक रानीसे वार्त्तालाप करतेथे । मिलनेमें थोडे समयका विलम्ब देख अत्यन्त व्याकुल हो मनहीमन अपनी बडाई माररहेथे । परन्तु थोडीही देरके उपरांत रंगमें भंग होगया । खाँसाहवका मुख नीला पीला होने लगा; गर्मीसे मूर्च्छा आने लगी और प्यासके मारे लगे पानी पानी पुकारने ! घबडाहटके मारे वस्त्र फाड२कर दूर फेंकने लगे कि तत्कालही उनपर पंखा झलाजाने और गुलावजल छिडका जाने लगा । परन्तु इस समय कुछभी उपाय न होसका,जो होनाथा वह तो होही गया।जब रानी ने खांसाहवकी ऐसी दशा देखी तब अपना घूंघट हटाकर कहनेलगी,- "अजी खांसाहव अबतो आपका अन्तसमय आगया ! हमारी तुम्हारी विवाहविधि और मृत्युक्रिया साथही होवेगी। जो वस्त्र आप पहिरे हुएहैं। वह विषमें रँगेहुए हैं हमारा धर्म और प्रतिष्ठा नष्ट करनेके लिये आपने कुछ उपाय नहीं छोडा, इसही कारण आपकी यह दशा हुईहै । खाँ-साहव अब अपने अल्लाहमियांको पडे २ याद करिये !" रानीका इतना कहनाथा कि सब सुननेवाले भयभीत होगये । उस समय रानीभी अपने ऊपर आपत्तिका आना विचार महलके बुर्ज (गुमटी) से नर्मदानदीमें कि जो महलके नीचेही बहतीथी कूदपडी और उसीमें डूबकर स्वर्ग धामको गई ! उसके स्मरणार्थ एक समाधि भूपालकी सडकपर बनाई

गईहै, कि जिसमें उसकी प्रतिमा स्थापितहै। सर्वसाधारण मनुष्योंका इस प्रतिमापर इतना विश्वासहै कि उसके दर्शन करतेही तत्काल ज्वर चलाजाताहै । वर्षाऋतुके उपरांत इस प्रान्तमें शीतज्वर अधिकतासे फैलजाताहै परन्तु इस देवीके दर्शन करनेवालोंको फिरसे ज्वरका डर नहीं रहता और रोगी भला चंगा होजाताहै ।

अहिल्याबाई ।

वर्तमान कालमें कोई महान् स्त्री, महारानी अहल्याबाईसे अधिक विख्यात् नहीं हुई यथार्थमें वह ऐसे दैवी गुणोंसे विभूषितथी कि जिस समय जिसदेशमें उत्पन्न हुई उस देशको एक दिव्य भूषण मानतीथी; वह उच्चसन्मान, प्रौढ प्रतिष्ठा, तथा निर्मलयशकी पात्र हुईथी ! निःसंदेह भारतवर्षमें सीताजी, द्रौपदी, कुन्ती तथा शकुन्तला इत्यादिका यश निर्मल चन्द्रमाकी चांदनीके समान विस्तारित होरहाहै, उसका यथार्थ कारण यहीहै । कि बडे२विद्वान कवियोंने उनके गुणानुवादोंका गानकर संसारमें उनके नामोंको प्रसिद्ध कियाहै।परन्तु इस महाराष्ट्री महारानीके निमित्त कि जिसने मल्हाररावके एक बृहत्राज्यको बराबर तीसवर्ष तक चलाया तथा प्रत्येक कार्य बुद्धि,बल,न्याय,धर्म और शीलताके साथ साथ पूराकिया, किसीभी कवीश्वरने भलीप्रकारसे कुछ परिश्रम न किया। उसको परलोक गये लगभग ११०वर्ष हुए परन्तु आश्चर्यहै कि स्वदेशी विद्वानोंमेंसे एकभी मनुष्य आजतक ऐसा न हुआ कि जिसने इस प्रतापी, प्रजापालक तथा नीतिधर्म संस्थापक महारानीका इतिहास लिखाहो ! एक परदेशी ग्रन्थकारने इस महान स्त्रीके सदाचार सद्गुण, सुनीति और सुबुद्धिकी प्रशंसाकर आदर सहित वर्णन किया है । कि जिससे युगोंतक उसका नाम स्थिर रहेगा और संसारमें उसका यश गाया जावेगा ।

परदेशी ग्रन्थकार अपने ग्रन्थमें लिखताहै कि अहल्याबाईका जन्म सन् १७२५ई०में सेंधियाके कुलमें हुआथा । उसके विषयमें और कुछ

अधिक जानकारी नहीं है परन्तु जो कुछ जाना गया है वही लिखताहूं। अहल्याबाईके शरीरका रंग कुछ सांवलासा था। उसका रूप ऐसा प्रशंसनीय न था कि जिसके ऊपर स्त्रियें सदा अभिमानिनी बनी रहती हैं। कहाजाता है कि रघुजी पेशवाकी रानी बाजीरावकी माता अनंताबाई अत्यन्तही रूपवतीथी और उसको अपने रूपपर अत्यन्तही गर्व था। एकसमय वह धारानगरीमें आईथी कि उसने अहल्याबाईके गुणोंको सुन तथा उसके यशको फैलता देख अपनी एक दासीको बुलाकर कहा, 'जा देखआ, कि उसका रूप कैसाहै ? आज्ञा पातेही दासी अहल्याबाईको देखनेगइ और उसको देख अपनी रानीसे आकर कहा कि, 'अहल्याबाई कुछ बहुत रूपवती नहींहै परन्तु एक दैवी दिव्यता उसके मुखपर प्रदीप्तमान होरही है।' अनन्ताबाई उसकी बातोंको सुन चुपचाप होगई और कहने लगी कि,'वह चाहे जैसी गिनी जावे परन्तु रूपमें तो मेरी बराबरी करही नहीं सकती,। अहल्याबाई कुछ ऐसी कुरूपभी न थी कि उसके देखनेसे घृणा उत्पन्नहो। सरल श्यामलता उसके शरीरपर थी,तथा आकृतिभी देखनेमें शोभायमानथी। मुखपर भोलापन और साधुत्व भलीप्रकार झलक रहाथा,वह अत्यन्त उदारचित्त और दयालुथी,। ईश्वरने उसको रूपवती बनानेके बदले दिव्य गुणवती बनाय उसे भूषित कियाथा, कि जिस आभूषणके सामने और सब आभूषण तुच्छ हैं। जो आंतरिक भूषणोंसे विभूषितहै उसमें चाहे बाहरी आभूषण न हों तो भी वह बाहरी आभूषणोंकी अपेक्षा अत्यन्त शोभायमान होता है।

मरहठे राज्यकुलकी दूसरी स्त्रियोंकी अपेक्षा अहल्याबाईने कुछेक अधिक विद्याभ्यास कियाथा, इसका कुछ भलीप्रकारसे प्रमाण नहीं मिलता, तैसेही उसने बाल्यावस्थामें विद्या सीखीथी या युवावस्थामें यहभी नहीं जानाजाता। परन्तु इतनातो अनुमानसे जानाही जाताहै कि बाल्यावस्थामें शिक्षापाये बिना कोईभी मनुष्य ऐसा सद्गुणी, विद्वान तथा निपुण नहीं होसकता। अहल्याबाई अत्यन्तही

धर्म नियमसे पुराणादिक ग्रन्थोंको सुनती और योग्य ग्रन्थोंका पा
करतीथी । इसका विवाह मल्हारराव होल्करके पुत्र खंडेराव होल्कर
साथ हुआथा, परन्तु वह अपने पिताके जीवित समयमेंही मालीरा
नामकपुत्र तथा मच्छा बाई नामक पुत्रीको छोडकर मरगया । अर्था
अहल्याबाईके केवल एक पुत्र और पुत्रीथी । जिससमय अहल्याबा
विधवा हुई उससमय उसकी अवस्था केवल बीस वर्षकी थी । पति
मरनेके पीछेही उसने रंगीन वस्त्र पहिनने छोडादियेथे । दक्षिण देश
बहुधा विधवा स्त्रियें सफेदही वस्त्र पहिनती हैं, इसही रीतिके अनुसा
वहभी बिना किनारीके सफेद वस्त्र पहिनतीथी, इसपरभी एक माला
अतिरिक्त वह किसी प्रकारके आभूषणको न धारण करतीथी । यद्या
इन्द्रियोंके सुखभोगके निमित्त सबप्रकारकी सामग्री प्रस्तुतथी पर
उसने अपने मनको सांसारिक विषयोंमें प्रवृत्त होने नहीं दियाथा उस
के शांत चित्तपर दृढ वैराग्य स्थिर होगयाथा इसकारण उन विषयों
सदा सुखपूर्वक विमुख रहती थीं ।

जब अहल्याबाईके श्वशुर मल्हारराव होल्करका देहांत हुआ, त
उसका पौत्र मालीराव (अहल्याबाईका पुत्र) गद्दीपर बैठा; परन्तु व
महीनेके भीतरही पागल होकर मरगया । अहल्याबाईकी पुत्री मच्छ
बाई दूसरे कुलमें ब्याहीथी, इसकारण होल्करकी गद्दीका अधिक
केवल अहल्याबाईकोही रहा । मल्हाररावके मुख्यमंत्री गंगाधर य
वन्तका यह विचारथा कि अहल्याबाई अपने कुलमेंसे किसीको गोद
ले और उसको गद्दीपर बिठावे तो अच्छाहै। अहल्याबाईने इस विषय
कहा कि-"मैं गद्दीके दोनों अधिकारियोंकी सम्बन्धीहूं । एककी
और एककी माताहूं, अतएव मैंही स्वयं राजकार्य करूंगी।" मैं अ
जीवनकालमें किसीकोभी राज्यका अधिकारी न बनाऊंगी । प
गंगाधरको पेशवाके सेनापति रघुजीने मिलकर यह यत्न किया
यह बाई किसीप्रकारभी गद्दीपर न बैठ सके । परन्तु अहल्याबा
उनसे कहला भेजा कि मेरे साथ झगडा करनेवालेको अप्रतिष्ठाके अ

रिक्त और कुछभी न प्राप्त होगा। पीछे रघुजीको युद्ध करनेमें तत्परहुआ देख अहिल्याबाईनेभी युद्ध करनेकी तयारी की। अपने हाथीपर हौदा धरवा और अस्त्र शस्त्रको धारण कर युद्ध करनेको सवार हुई। उसने कहा कि यद्यपि युद्ध करनाही पडा तो स्वयंही संग्राममें सेनाके साथ लडकर शत्रुओंको हटादूंगी। सेंधिया तथा पेशवाने रघुजीसे कहला भेजा कि स्त्रीसे युद्ध करनेमें हम तुम्हें कुछभी सहायता न देंगे, तथा पेशवाने रघुजीसे यहभी कहाथा कि "अहल्याबाईके गद्दीपर बैठनेमें तुम किसी प्रकारकी बाधा तथा रोक टोक न करो॥" अंतमें यह महानआर्या होलकरके राज्यसिंहासन पर सन् १७८५ई० में बैठी, जिस दिन वह गद्दीपर बैठी उसही दिन राजकोषके समस्त धन पर तुलसीदल रख उसे परमार्थमें लगानेका संकल्प किया। तुकोजी होल्करको सेनापति नियत किया, औरभी बहुतसे फेरफार राज्यप्रबंधमें किये। स्वयं स्त्री होनेके कारण जो काम अपनेसे नहीं होसकता था वही काम कारबारियोंको सौंपा। शेष समस्त अधिकार अपनेही हाथमें रक्खे। यद्यपि भूतमन्त्री गंगाधरने उससे द्वेष किया था तौभी उसने पहली राजभक्ति और राज्यसेवाको विचारकर उसके दोषोंको क्षमाकिया और फिरभी उसकोही अपना मन्त्री बनाया; वरन् जिस प्रांतमें तुकोजी होलकर सूबेदारथा उसही प्रांतके समान उसेभी एकप्रांतका सूबेदार बनाया। वह बराबर बारह वर्षतक दक्षिणमें रहा तौभी ऐसा काम न किया कि जिससे उसकी राज्य भक्तिमें शंका उत्पन्नहो। अहल्याबाई उसको पुत्रके समान जानती थी और वह अहल्याबाईको माताके समान मानताथा। जबतक वह जीवितरहा तबतक उसकी अत्यन्त प्रतिष्ठा रही और उसके मरनेके उपरांत उसके अधिकारपर उसका पुत्र नियत हुआ।

मालवा तथा मेवाके सूबोंके राजकाय झगडोंको अहल्याबाई स्वयंही निबटातीथी, उसके समस्त कामोंमें न्याय तथा शीलता झलकतीथी। अहल्याबाईके मनमें सदैव यही इच्छारहतीथी कि देशको सबप्रकारसे

उन्नतिहो तथा प्रजाके जानमालकी रक्षा होकर वह सब सुख चैनसे रहे। वह अपने यहां कुछभी सेना न रखतीथी उसको अपनी सेना तथा प्रजाकी राज्यभक्ति के ऊपर दृढ विश्वासथा;वह कहाकरतीथी कि,परदेशी शत्रुओंकातो मुझे कुछ भयही नहीं है। वह स्वाधीन राजात था सर्दारोंका आदरपूर्वक सन्मान करतीथी और उनको अपना अंगभूत मानतीथी, और योग्यता अनुसार मानभी देतीथी। अपने प्रजा महाजन, व्यौपारी तथा जमींदारोंकी बढती देखकर सैदव प्रसन्न रहतीथी और उनके धनकी ओर कभीभी कुदृष्टिसे न देखतीथी। वरन् उन सबपर अधिक कृपाकर उनको रक्षाका पात्र समझती थी।इसही कारण प्रजाका भी उस पर अत्यन्त भक्तिभाव था।

प्रजाका भक्तिभाव बढते २ इतना होगयाथा कि उसके राज्यमें भील लोगोंनेभी लूटमार करने आदिके नीच कामोंको छोड दियाथा। उनकी ओर अहल्याबाईभी प्रीति तथा सन्मानकी दृष्टिसे देखतीथी और उनकी सभ्यताको देखकर सन्तुष्ट रहतीथी। किसीसमय जब यह जंगली मनुष्य किसी कारणसे विमुखहो उपद्रव करते तो उनके ऊपर अपना बल व पराक्रम प्रगटकर न्यायानुसार यथोचित दण्डदेती। अपने धर्म तथा दूसरेके धर्ममें कुछभी भेद दृष्टि न रखकर किसीको दुःख न देती क्योंकि वह जानतीथी कि किसी मतपर अन्याय करना शास्त्रकी विधि नहीं है। वह सबपर सदैव दयासेही बर्ताव करतीथी।इसके धर्मराज्यमें किसीको किसीप्रकारकाभी दुःख नथा। जो कदाचित् विस्तार पूर्वक इसके राज्य प्रबन्धका वर्णन लिखाजातातो एक बडाभारी ग्रन्थ बनता। परन्तु तौभी इतना कहनाही चाहिये कि इसका धर्मराज्य भारतवर्षमें न्याय और प्रजापालनका एक दिव्य दृष्टान्तहै।

अहल्याबाईके समयमें उसके राज्यपर उदयपुरके रानाके अतिरिक्त दूसरे किसीनेभी चढाई न की थी। रानाके साथ यह बाई ऐसी वीरतासे लडीथी कि अन्तमें रानाने उससे सांधिकरनेको कहला भेजा

और उसकी सब बातोंको मान अपने उदयपुरकी ओर लौट गये । अहल्याबाईके राज्यमें विशेष कहने योग्य बात तो यहीथी कि उस के राज्यका प्रबन्ध ऐसी उत्तम रीतिसे था कि किसीभी समय किसी प्रकारकाभी उपद्रव या असन्तोष उत्पन्न न हो, प्रजा सुखसे रहतीथी। सब मनुष्योंके साथ वह योग्यता पूर्वक वर्त्ततीथी । परिश्रमी और गुण-वान् जनोंकी अपेक्षा लुटेरे मनुष्योंकी ओर वह अधिक दया और न्याय पूर्वक वर्ताव करतीथी । देशी राज्योंमें सदैव कामदारोंके बदलनेके समय कुछ न कुछ झगडा हुआही करताहै, परन्तु अहल्याबाईके राज्य में ऐसा नहीं होताथा, क्योंकि वह अपने अधिकारियोंको बहुतही कम बदलतीथी। जबतक उसने राज्यकिया तबतक एकही दीवान गो-विंद पण्डित गन्नुही रहाथा । खण्डेरावने बराबर बीसवर्षतक इन्दौरकी नौकरी कीथी । कहाजाता है कि महारानी अहल्याबाई अपनी प्रजाको अनयुक्त तथा सुखचैनमें मग्नदेख जितना प्रसन्न होतीथी उतना प्रसन्न अपने राज्यकोशके द्रव्य आदिसे न होतीथी । भारतवर्षके छोटे मोटे बहुतसे राज्योंके प्रतिनिधि कि जो अहल्याबाईके राज्यमें रहतेथे,उनकी संमतिको दूसरोंकी सम्मतिकी अपेक्षा बहुत मानतीथी । अहल्याबा-ईके प्रतिनिधि पूना, हैदराबाद, श्रीरंग पट्टन, नागपुर तथा लखनऊमें रहतेथे । उनका लेनदेन समस्त भारतवर्षके बडे बडे राजा महाराजा-ओंसे हुआ करताथा । उसने बहुतसे गढ और किले बनवायेथे, और बहुत द्रव्य व्ययकर विंध्याचल पहाडको काट सडक बनवाईथी । सम-स्त राज्यमें लक्षों रुपया व्ययकर धर्मशाला, मन्दिर तथा बडे२ इहकूप बनवाये । इनके दानका वर्णन राज्यमेंही नहीं वरन् बडे २ दूर देशोंमें होरहाथा । बडे २ तीर्थ स्थान जैसे काशी, मथुरा, प्रयाग, जगन्नाथ, द्वारका रामेश्वर तथा केदारनाथ आदि स्थानोंमें उसने मंदिर बनवया सदावर्त बिठलादियेथे, कि जो आजतक बराबर चल रहेहैं और जिनसे साधुसन्तोंका बडा उपकार होरहा है । काशीजीमें श्रीविश्वनाथजीके मंदिरको कि जिसका समस्त शिखर सोनेसे मढाहुआ है, अहल्याबाई-

हींने बनवायाहै । इन्दौरका प्राचीन नगर नदीके दोनों किनारोंपर था परन्तु अहल्याबाईने सन् १७९८ ई० में उसको डूबजानेसे वहां दूसरा नया नगर बसाया ।

आश्चर्यकी बातहै कि एक स्त्रीने किसप्रकार राज्यका बडा भारी भार उठाय कठिन परिश्रमसे बराबर तीसवर्षतक एक समानही न्यायकर अपना कामकाज चलाया ! वह प्रातःकालमें उठ नित्यनेम तथा पूजा पाठकर नित्य नियतकाल तक हरिकथा सुनतीथी । फिर अपनेही हाथसे सुपात्रोंको भोजन तथा दान दक्षिणा दे भोजन करतीथी । उसके वंशमें मांस खानेका निषेध नहीं है, परन्तु अहल्याबाई परमवैष्णव थी इससे केवल अन्नके अतिरिक्त यह दूसरा कुछभी न खातीथी ! भोजनके उपरांत थोडी देरतक सोकर दो बजे तइयारहो राजसभामें जाबैठती, और सायंकाल तक सब राज्यकार्य करतीथी । दक्षिणियोंमें स्त्रियोंका पर्दा करवाने तथा घरमें बन्दकर रखनेकी चाल नहीं है।यह रीति बहुधा भारतवर्षके उन्हीं देशों- में प्रचलित है क्योंकि उस ओर मुसलमानोंका अधिक उपद्रव न था । मरहटोंमें अबतकभी प्राचीन आर्य्योंकी कितनीही रीतें देखनेमें आती हैं । वे अपनी स्त्रियोंको शिक्षा देनेमें भारतवर्षके दूसरे देशोंके मनुष्यों के समान तुच्छ नहीं जानते, प्रसन्नता पूर्वक लडकियोंको पढना पढाना सिखातेहैं । इन मनुष्योंमें धनवनोंकी स्त्रियें घोडेपर चढकर चाहे जहां फिरसकतीहैं उनको किसीप्रकारकी रोकटोक नहींहै । उसही रीतिके अनुसार अहल्याबाईभी बिना परदेके दर्बारमें बैठ राज्यका सब काम- काज करतीथीं । प्रजाकी पुकार बडे ध्यानसे सुनती तथा न्यायपूर्वक उसका निबटारा करतीथीं । छोटे बडे सबही उसके निकट जासकते थे; किसीकोभी रोकटोक न थी कि जिससे सब कोई अपना दुःख प्रगट करसकतेथे । " ईश्वरके समीप मुझे इन सब कामोंका उत्तर देना पडेगा । " वह इस निश्चयसे सब काम बडे विचार पूर्वक और ईश्वरका भय रखकर करतीथीं । संसारमें ऐसे बहुतही थोडे मनुष्यहैं कि जिनको

सत्यासत्यका विचार और ईश्वरका भयहो। सभा विसर्जन होनेके पीछे कुछेक समय जप पूजनमें बैठ कथाको सुनतीथी; तदनन्तर भोजनकर रात्रिको नवसे ग्यारह बजेतक कामकाज करतीथीं, तदनन्तर शयन करनेको जातीथी। व्रत तथा उत्सवके दिन अतिरिक्त इन नियमोंके अपने अन्य कामोंमें लगी रहतीथी, क्योंकि उसदिन ईश्वरका पूजन तथा भजन कीर्त्तन अधिक करतीथीं।

अहल्याबाईके समस्त कामका जो में उसके चित्तकी उदारता, शीलता, दया, तथा धर्म अधिक प्रशंसनीयहैं। वह नित्य दीन, दुःखी तथा दरिद्री मनुष्योंको भोजन करातीथी और तेवहारके दिन उनको अनेक प्रकारके पदार्थ खिलातीथी, ग्रीष्मऋतुमें जब सूर्यकी तपनसे मालवेमें जलकी त्राहि २ पडतीथी, तब स्थान २ पर पानी पिलानेके पौसले बिठाती; कि जिससे दीन तथा यात्रियोंको सुख हो। जाडेकी ऋतुमें कङ्गालोंको वस्त्र देती थी पशु पक्षियोंपरभी दयाकी दृष्टिसे देखतीथी। कितने एक स्थानोंमें पशुओंको पानी पिलानेका प्रबन्ध कियाथा; पक्षियोंके चुगानेको खेतके खेत मोल लिये जातेथे। आजकलकी नई विद्या सीखेहुए अपनेको शिक्षित जाननेवाले कहतेहैं कि अहल्याबाई वृथा द्रव्य व्यय करतीथीं; परन्तु इसमें तो कुछभी संदेह नहींहै कि उसके किये हुए कामोंसे सहस्रों नहीं वरन् लक्षों प्राणियोंको लाभ पहुंचाहै, उसने बडे २ दया तथा धर्मके काम कियेहैं। अगणित मनुष्योंपर उसका उपकार हुआहै। उसके समस्त काम पराई भलाई, परोपकार तथा प्रजापालनके निमित्तही हुए थे। एक समय उसके एक कारबारीने मेलकमसाहबसे कहाथा कि,—“आप भलीप्रकारसे जानते हैं कि आजतक महराणीका सुयश और सन्मान किसप्रकारसे फैलरहाहै? केवल उनके नामको लेतेही मनुष्योंके चित्तमें एक परमोपकारीका स्मरण हो आताहै। इस समयमें इस जातिके राजाओंमें ऐसा कोई नहींहै कि जो इनसे विरुद्ध काम करनेमें एक

महात्माका निरादर करनेकी समानता तो क्या वरन् एक घोर पाप करनेकी समान न समझताहो ! उनमसे ऐसा कोईभी नहींहै कि जो अहल्यावाईके शत्रुओंके विमुख युद्ध करनेको न तइयार होजावे ! पेशवा सरकार, नव्वाव निजाम तथा टीपू सुलतानभी राणीजीका गुण गातेहैं । सारे हिन्दू तथा मुसलमान ईश्वरसे यही प्रार्थना करतेहैं कि इस धर्मात्मा महारानीका राज्य अचल रहे और उसका प्रताप दिन प्रतिदिन वढे ।

वृद्धावस्थामें अहल्यावाईको एक वडा भारी दुःख पडा, अर्थात उसकी पुत्री मंच्छावाईका पति दैवेच्छासे पूर्ण युवावस्थामें मरगया । उसके मृतक शरीरके साथ सती होनेको मंच्छावाई जव तइयार हुई तव माताने अनेक प्रकारसे उसे समझाकर कहा कि,–" बेटी ! मेरा कहना मान, और सती न हो, क्यों कि इस संसारमें अव मुझे तेरे विना दूसरे किसीकाभी सहारा नहींहै । इस वृद्धावस्थामें तुझकोही देखकर जीतीहूं । जो तू न रहेगी तो फिर मेरा दुःख दर्द कौन पूँछेगा? बेटी ! मानजा और मेरे दुःखकी ओर दृष्टिकर ! "

मंच्छावाईका मातामें अत्यन्त स्नेहथा तौभी अपने भयंकर विचारको न छोडकर उससे कहा कि,–" प्रियमाता ! तुम अव वृद्ध होगई हो, इसकारण संसारमें वहुतही थोडे दिन रहोगी । मेरा पति तथा पुत्र दोनोंही परलोकको गये,और फिर जव तुमभी न रहोगी तो फिर यह मेरा पहाडके समान जीवन किसप्रकार कटेगा। इसका विचारकर मुझे सती होनेदो।अर्थात् इससंसारमें पतिके साथ मुझे प्रतिष्ठा सहित जानेदो। फिर ऐसा अवसर मुझको न मिलेगा, इसकारण मतरोको।"

अहल्यावाईने देखा कि अव यह किसी प्रकारसेभी न मानेगी और मेरे समझानेका प्रभाव इसके चित्तपर होताही नहीं, तव अन्तमें हारमान कर सती होनेकी आज्ञादी । मंच्छावाई श्मशानभूमितक पतिके शवके साथ जाय चिताके सन्मुख खडी हुई, वहींपर दो ब्राह्मणभी अहल्यावाईका हाथ पकडे खडेरहे । अहल्यावाई अपना कठिन हृदय

कर शांत चित्तसे अपनी इकलौती सन्तानका जलना देखनेको खड़ी रही। परन्तु जब मेंच्छाबाई पतिके साथ चितापर बैठी और चितामसे अग्निकी लपटें उडने लगीं तब सहस्रों मनुष्य सतीका नामले जयरकार करनेलगे। अहल्याबाई यह दृश्य देखकर अत्यन्त विलाप करने लगी, और बलपूर्वक उन ब्राह्मणोंसे अपना हाथ छुडाय चिताकी ओर जाय अपनी पुत्रीको अग्निमेंसे खींचने लगी। परन्तु उस प्रचण्ड अग्निम उसका पता कहांथा ? अंतमें अहल्याबाई मूर्छित हो पृथ्वीपर गिरपडी। तदनन्तर चिताको ठंढी होजानेपर रानीजी नर्मदामें स्नान कर घर आई। अहल्याबाईने शोकातुर हो तीन दिनतक अन्न जल न ग्रहण किया, वह केवल मुख बंद किये पडीही रही। जब सावधानको चित्तमें सन्तोष आया तब सतीके स्मरणार्थ वहां एक दिव्य मन्दिर बनवाया।

सन् १७९० ई० में अहल्याबाईका ६० वर्षकी अवस्थाम परलोक वास हुआ। दिन और रात्रिके परिश्रमसे तथा राजकाजकी चिन्ताओंसे उसका शरीर निर्बल होगयाथा। तथा नित्यके व्रतोंसेभी उसका शरीर जर्जर होगया इन्हीं कारणोंसे वह शीघ्रही मरगई। अहल्याबाईकी नीति निपुण, धर्मपालकता, चित्तकी दृढता, ब्रह्मचर्य्य, इन्द्रिय निग्रह तथा प्रजापालन सम्बन्धी सिद्धांत वर्णन करने योग्यहैं। उसकी भलाई बुराई तो इतनेहीसे प्रगट होगई होगी अतएव अधिक लिखनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। उसम एक बडा भारी प्रधान सद्गुण यह था कि अपनी मिथ्या प्रशंसा कुछभी न भाती थी। यद्यपि कोई उसकी स्तुति करता तो उस्की ओर विरक्तता दिखाती। एकसमय एक विद्वान पंडित उसकी स्तुतिका एक बडा उत्तम ग्रंथबनाय निकट लेगये। अहल्याबाईने उसे आदिसे अन्ततक ध्यान देकर सुना, और फिर अन्तमें कहा कि,—"पण्डितजी मैं एक अधम पापिनीस्त्री हूं, किसी समयभी ऐसी प्रशंसाके योग्य नहीं।" तदनंतर अपनी स्तुतिका वह ग्रन्थ पण्डितसे ले नर्मदामें डुबा दिया, और पंडितको कुछभी पुरस्कार दिये बिना विदा

किया।अकबर बादशाह अत्यन्त बुद्धिमानथा,परन्तु उसने अपनी प्रशंसा करनेवालेके उत्साहको न घटाया अर्थात् अबुलफजलने उसकी मिथ्या स्तुतिका जो ग्रन्थ लिखाथा उसको वैसाका वैसाही रहनेदिया । परन्तु यह अनुपम आर्या तो उससे इस विषयमें भी अधिक बढगई ।

अहल्याबाईके सदाचार और शुभगुणोंके सम्बंधमें मेलकम साहब लिखते हैं कि,–"जो कुछ इसके विषयमें लिखाहै उसमें इतना तो प्रमाणितही है कि उसकी सत्यता और यथार्थतामें किसीप्रकारका भी संदेह नहीं दिखाई देता" परन्तु यह अत्यन्तही आश्चर्य्यकी बातहै कि एक स्त्री इतनी गम्भीर और सांसारिक विषयभोगोंसे विरक्तहो। यद्यपि वह स्वधर्मके विषयमें अत्यंतही दृढथी परन्तु उसमें परधर्मकी ओरसे कुछभी ईर्षा न पाई जातीथी । किसीभी धर्मवालेको तुच्छ न गिनती, किसीके धर्ममें किसीप्रकारकाभी विघ्न न किया । वह प्रत्येक धर्मवालोंकी ओर उपकारकीही दृष्टिसे देखती रही; दूसरेके आत्माको संतोप देनाही अपना कर्त्तव्य कर्म समझती रही । वह सदैव ईश्वरकाही भय रखकर सब काम करतीथी दूसरेके अवगुणोंको क्षमाकरती पुरुषके शरीरमेंभी ऐसे गुण दुर्लभ होतेहैं कि जो एक स्त्रीके शरीरमें स्वाभाविकही विराज रहेथे । मालवा देशके मनुष्य इस अहल्याबाईको इन महान्गुणोंसे विभूषित और ईश्वरकी आंशिक मानतेहैं । यदि हम ध्यान पूर्वक देखें तो यह परमसाध्वी अहल्याबाई नीति और धर्मानुरागी राजाओंमें शिरोमणि अथवा इस सिद्धांतकी परम दृष्टांत रूप हुई है । सिद्धांत यहहै कि "जो राजा ईश्वरका भय चित्तमें रखकर अपनी प्रजाका पालन करताहै वह सम्पूर्ण धर्म करता है, और उसीको संसारमें निर्मल यश प्राप्त होताहै ।"

अत्यन्त शोचनीय बात है कि भारतवर्षके वर्तमान इतिहासोंमें अहल्याबाईका वर्णन नहीं पाया जाता । यदि कोई इतिहासकार इस रानीके नीति, रीति, गुण, धर्म और न्यायका यथार्थ वर्णन लिखता तो मेलकमसाहबका लेख कि जो उसने अन्य राजाओंके पक्षमें लिखाहै

मिथ्या होजाता ! उसका दृढ लेख है कि कोईभी भारतवर्षीय राजा निर्मलनीति तथा सुंदर प्रबंधपूर्वक राज्य नहीं चलासका। फिर यहभी कहाहै कि टॉरिन्टन साहबनेभी अपने ग्रंथमें तुलसीबाईका वर्णन आक्षेप करके लिखा है। परन्तु अहल्याबाईका नाम तक कि जो भारतवर्षकी एक दिव्य आभूषणथी उसे नहीं लिखा। कितनेही एक स्थानोंमें अभागे देशियोंके विषयमें ऐसे उलटे लेख आगये हैं कि जिनसे विचारे परदेशियोंको विस्मय होताहै। वह है तो कुछ औरही और वह समझते कुछ औरहीहैं। अतएव उन विपरीत बातोंको निकाल सत्यका निरूपण करना चाहिये।

हम ऐसी आशा रखतेहैं कि कोई देशी विद्वान इस महारानी अहल्याबाईका विस्तारपूर्वक इतिहास खोजकर इकट्ठा करे और मनुष्योंमें उसको विस्तारितकर अपनी कीर्तिको अमर करे। क्योंकि भारतवर्षके नवीन बादशाह और राजाओंमें जैसे अकबर बादशाह पराक्रमी होगयाहै वैसेही स्त्रियोंमें महारानी अहल्याबाई भी होगईहैं।

कृष्णाकुमारी।

कृष्णाकुमारीके समान करुणाजनक अथवा दुःखहृदयद्रावक वृत्तांत भारतवर्षके इतिहासमें दूसरा कोई न होगा। उदयपुरके राना कि जो राजपूतोंमे सबसे ऊँचे कुलके मानेजातेहैं, उनकी कृष्णाकुमारी नामक कन्याथी। उसकी मा अनहलवाडेके चावडा वंश की थी। कृष्णाकुमारीका जन्म सन् १७९२ई०में हुआ था। यह [illegible]कुमारी अत्यन्त स्वरूपवानथी। उसकी मृदुचाल, मंदभाषण, तथा सर्वांगकी लावण्यता तो ऐसी मनोहर थी—कि बहुतसे मनुष्य उसको राजस्थानका कमल कहते थे।

मेलकम साहब अपने ग्रंथमें लिखते हैं कि—उसके सगेभाई युवराज राजसिंहको देखकर उसकेही रूपरंगका अनुमान किया जाताथा।

देखनेसे उसकी मुख मुद्रापर एक प्रकारकी मीठी कोमलता देख पडती थी, और मुखकी आकृति देखनेसेही जान पडताथा कि वह अत्यन्त तीव्र बुद्धिमान होगा। कृष्णाकुमारीके विवाहका सम्वंध जोधपुरके महाराजसे हुआथा, परन्तु व्याह होनेके पहिलेही महाराजकी मृत्यु होगई, इसकारण जयपुरके महाराजके साथ उसका व्याह ठहराया गया और उसको श्रीफल आदि भेजकर तइयारी करानेको कहलाभेजा इतनेमें जोधपुरकी गद्दीपर बैठनेवाले राजकुमारने संदेशा भिजवाया कि,-कृष्णाकुमारीका सम्वंध इसराज्यके स्वामीसे होचुका है, अतएव उसका पाणिग्रहण मेरे साथ होना चाहिये। इसप्रकारसे जोधपुर तथा जयपुरके राजा इस कृष्णाकुमारीसे व्याह करनेके निमित्त उदयपुरमें आये और दोनोंही रानाको धमकाकर कहने लगे कि,-हमैं अपनी पुत्री न व्याहोगे तो हम तुम्हारे राज्यका नाशकर डालेंगे।उदयपुरके राना इन सब राजाओंसे वंश और पदवीमें ऊंचे गिने जातेथे परन्तु उससमय उनमें इतना वल और पौरुष न था कि उनसे युद्ध कर सकें। दोनों राजा युद्धके निमित्त केवल अपनीही सेना नहीं वरन् दूसरे लुटेरे मनुष्योंकोभी इकट्ठा कर लाये इसके अतिरिक्त दोनों सेनाओंके मनुष्य उदयपुरके राज्यमें लूटमार मचाने लगे। इससे राना कायरहो वडे विचारमें पडगये कि अब क्या करूं? किसको प्रसन्न रखकर किसको अप्रसन्न करूं? उनके चित्तमें अत्यन्तही खेद उत्पन्न हुआ-वह कहने लगे कि इस कन्याके कारणही मुझे यह विपत्ति भोगनी पडीहै। राजाको अत्यन्त खेदित देख अमीरखांने कि जो अत्यन्त कठोर हृदयथा सम्मति दी कि, " सब दुःखोंकी जड इस कन्याके कारणही इतना उपद्रव हुआ है अतएव उसकोही दूर कर दियाजावे तो यह सब बखेडे दूर होजावें। " इस सम्मतिको मानकर पिताने अपनी कमलके समान कोमल और निर्दोष लडकीके मारनेको पहिले तो अनुचित समझा परन्तु फिर अंतमें उस निर्दयी म्लेच्छकी सम्मतिमें आप अपनी पुत्री को मार डालनेका निश्चय किया। परन्तु इस भयंकर घोर पापके

करनेको कोईभी वधिक न मिलताथा। अंतमें राजाने एक नातेदार दौलतसिंहकी ओर देखा कि यह कार्य तुम करके उदयपुरकी लाज रख सकोगे। कायर क्षत्रीका यह विचार सुनतेही वह कांप उठा और सिंहके समान गर्जन करके कहने लगा,-"उन मनुष्योंको धिक्कारहै कि जो एक निर्दोष कन्याकी रक्षा न कर उसके वध करनेकी सम्मति देते हैं! ऐसी नातेदारी मिट्टीमें मिलजाय कि जहां एक अधम कार्य करनेको प्रेरित किया जाताहूं!!" पीछे राजाने इसकामके निमित्त एकभाईको बुलाय समझाकर कहा कि,-'बिना यह काम किये उदयपुरकी लाज किसी प्रकारभी नहीं रहसकती, केवल एक यही उपायहै कि कन्याको मारडालाजाय!' तदनंतर उस घातकी वधिकने कृष्णाकुमारीको वर्छीसे मारना स्वीकार किया, परन्तु वह जब कृष्णाके महलमें गया और जहाँ वह नवयौवना कुमारिका लक्ष्मीके समान विराजतीथी वहांपर पहुंचा तो उसका पत्थरके समान कठिन हृदय उस कोमलांगनाके देखतेही मोहके समान पिघलगया। और निरपराधिनी लडकीके कलेजेमें वर्छी मारनेके बदले वह पीछेको हटा। तत्काल उसका हाथ कंपकंपाउठा और वर्छी हाथमेंसे छूटगई। तदनन्तर लज्जितहो उसने सब भेद कृष्णकुमारी तथा उसकी मातासे प्रगट करदिया,-और वहाँसे नीचा मुखकर पीछेको लौट आया।

माता वात्सल्यवशसे अपनी निरपराधिनी कन्याकी हिंसा करवानेवालेको सहस्रों कुवचन कहने लगी और शोकग्रस्तहो चिल्ला २ कर रोने लगी परन्तु यहवीरकन्या कृष्णाकुमारी अपने वंश, पिता और देशके कारण स्वयंही मरनेपर तइयार होगई। उसने विषखाकर मरणकी शरणजानेका दृढ निश्चय किया। तदनन्तर एक सेवकने रोते २ राजाकी आज्ञासे विषका प्याला लाकर कृष्णाकुमारीको दिया वह परमधैर्यशील बाला अपने पिताकी आयु तथा सम्पत्तिकी वृद्धिके निमित्त अत्यन्त शांतचित्तसे परमेश्वरकी प्रार्थना करते २ उस प्यालेके विषको पीगई। मृत्युके भयसे उसकी आंखसे एकभी आंसू बाहर न निकला।

माता जब दुःखित होकर दुर्वचन कहनेलगी तब स्वयंही माताको समझाने लगी कि,–"हे माता ! तू इतना अधिक शोक क्यों करतीहै ? क्या यह बात अच्छीनहीं है कि मैं जन्मभरके दुःखासे छूटजाऊंगी ? दुःखित अवस्थाम जीवन वितानेकी अपेक्षा मरनेका डर मेरे चित्तमें अधिक नहीं है माता ! क्या मैं तेरी पुत्री नहीं हूं कि जो मृत्युका डर करूं?जन्मसेही काल अपनी आँखोके सामने फिरा करता है। संसारके आनेमें कुछ देर नहीं लगती अतएव प्राण निकलनेमें मुझे कुछभी डर नहीं है जन्मके उपरांत मरणतो होताही है । पिताजीकी अत्यन्त कृपाथी कि मुझे इतने वर्षोंतक जीवित रहनेदिया" ।

वह इसप्रकार माताके साथ वातचीत कर रहीथी कि इतनेमें राजाने जाना कि इतने विषसे उसके प्राण शरीरसे नहीं निकलेंगे । यह विचारकर एक दूसरा प्याला भरकर उसको दिलवाया, वह उस प्यालेकोभी वह अत्यन्त धैर्यसे तत्कालही पीगई । परन्तु इतनेसेभी उसके प्राण न गये । तब राजाने एक अत्यन्तही तीक्ष्ण विष उसको भिजवाया। कृष्णाकुमारीने यह कहा कि,–'मेरा जीव ऐसा निर्लज्ज होगया है कि दो २ वार विष देनेपरभी वाहर नहीं निकलता ।' ऐसा कह तीसरी वारका विषभी अत्यंत धीरजसे पीगई । अंतमें उसरात्रिको यह कोमल कुमारी इस शांतभावसे सोई कि फिर न उठी ।

इसप्रकारसे निठुर तथा निर्दयी मनुष्योंने मिलकर इस निर्दोष लडकीका वधकिया अपनी मिथ्या प्रतिष्ठाके बचानेके कारण अविचारियोंने इस परम सुन्दरी कन्याके प्राणलिये । जब धीरे २ उदयपुरकी प्रजामें इस निर्दोष लडकीके वधका समाचार फैला तब चारोंदिशामें रानाकी निंदाकाही शब्द सुनाई पडने लगा । इस राजकुमारिके गुण तथा स्वरूप सौंदर्यका वर्णन उसके मरनेके पीछे अत्यंतही होनेलगा, और रानाकी इस निष्ठुरता और निर्दयताको जान मनुष्य उनको धिक्कारने लगे। प्रजाके अंतःकरणमें अत्यंत खेद हुआ,इतनाही नहीं वरन् रानाके शत्रुओंके मनमेंभी अत्यंत ग्लानि और दुःखहुआ।

कृष्णाके मरनेपर उसकी माताभी उसके दुःखसे दुःखीहो थोडेही दिनों में मरगई । क्योंकि सुकुमारपुत्रीके वियोगके दुःखको वह न सहसकी।

इसवातको आज वर्षों वीतगये, परंतु अवतक उसका शोकमय वृत्तांत, विस्तारपूर्वक कहनेवालों और सुननेवालोंकी आंखोंमें आंसू लाये विना नहींरहता । कविशेक्सपियरने वहुधा धर्मशील स्त्रियोंका वृत्तांत लिखाहै, परंतु उनमें गुण तथा साहसके विषयमें कृष्णाके समान किसीही स्त्रीका वर्णन न हुआहोगा । अत्यंत आश्चर्य्यकी वातहै कि एक सोलहवर्षकी कन्यामें इतना अधिक धैर्यहो कि जिसने वंश, पिता तथा देशके कारण अपने प्राणोंका कुछभी मोह न किया । धन्यहै उसके साहसको !

विषपीनेके समयभी कृष्णा हँसतीही रहीथी। उसने पहिलेहीसे जान रक्खाथा कि राज्यम यह सब उपद्रव मेरेही कारण होरहेहैं । यम राजका चक्र उसके मस्तकपर वार वार फिर रहाथा । यह अपने काल को वहुत दिनसेही देखनेलगीथी। उसको भीतर वाहरसे अपनी मृत्युके चिह्न देख पडने लगेथे। अपने हाथसे प्राण त्याग करनेमें आत्महत्याके महापापको होता हुआ विचार वह प्राणनहीं छोडतीथी और फिर इतनी धैर्यवानभीथी कि उस अपने आंतरिक भावको माता पिताके समीपभी प्रगट न होने दिया । अपने रूपको ओरभी उसको अत्यन्तही धिक्कार हुआथा और इसही कारण वह अपनी मृत्युको चाहतीथी। जब विषका प्याला इस राजकुमारीके हाथमें दिया गया तव वह उसको ल हँसते २ पीगई और अनाथनाथकी शरणहुई ।

तुलसीवाई ।

तुलसीवाई भी होल्करके वंशमें एक विख्यात स्त्री होगई है। परन्तु उसमें और अहल्यावाईमें इतना वडा अंतर है कि जितना अंतर सोने और पीतलमें होताहै । परमधार्मिक अहल्यावाईके नामके साथ दुराचारिणी तुलसीवाईका नाम लेनेसे अहल्यावाईका निरादर करनेके

समान पाप होताहै, परन्तु वर्तमान कालके इतिहासोंमें बहुधा हंसके दूधके समान असार वस्तुमेंसेभी सार ग्रहण करनेके अभिप्रायसे तुलसी बाईका वर्णन हुआहै, अर्थात् हमकोभी इस स्थानपर उसका वर्णन लिखनेकी आवश्यकता हुई है।

इस महारानी तुलसीबाईका जन्म सन् १७९७ई० में हुआथा। उसके माता पिताका कुछभी पता नहीं चलता। परन्तु दूसरा पता मिलताहै वह यह है कि,–'मानभाव' पंथका एक साधू आदिजी बाबामहेश्वर नामके स्थानपर रहता था। यह पंथ दक्षिण देशमें कृष्णभट्ट नामके किसी ब्राह्मणने निकालाथा और उसनेही उसे इसदेशमें फैलायाथा इस मतवाले वेदको मानतेहैं, परन्तु पुराणोंको नहीं मानते। कहतेहैं कि,–मल्हाररावकी रानी हरषाबाई उसकी शिष्याथी। बाबाजीका मान उसदेशमें विशेषथा इसकारण मनुष्य उनपर बहुत पूजा भेंट चढातेथे। वह पालकीपरही सवार होकर बाहरको जाते और नित्य अपनी सेवाके निमित्त बहुतसे नौकर भी रखतेथे। इन्हीं बाबाजीके आश्रममें तुलसीबाई बाल्यावस्थासे युवावस्थाको प्राप्तहुईथी। इस मानपंथवालेने विवाह नहीं किया था इसकारण यहभी शंका उत्पन्न होतीहै कि वह अनाचारसे उत्पन्न हुई होगी, और प्रगटमेंभी यही जान पडताहै कि वह गुप्त कुकर्मोंका परिणाम होगी। जो हो, तुलसीबाई उसकी चेली कहलाती थी और उसने उसके पास कुछ पढना लिखना सीख लिया था। इन मनुष्योंमें स्त्रियोंके पढानेकी प्रथा नहींहै इसकारण तुलसीबाई महापण्डिता अथवा सिद्धा मानी जाने लगी। ईश्वरने उसको रूप और लावण्यभी दियाथा और इसके साथही साथ सुहावनी मधुरवाणीभी दीथी। देखनेमें तो वह अत्यन्त गुणवान जानपडतीथी परन्तु भीतरही भीतर दुराचारता और कठोरतासे इतनी भरीथी कि अंतमें उसकी कुछ भी प्रतिष्ठा न हुई। तुलसीबाईका विवाह बाबाजीने एक पुरुषसे करदिया था इसकारण वह उसको ले दक्षिण देशमें रहताथा। एकबार शामराव नायक नामक किसी मरहठेने उसके रूप लावण्यको देख यशवंतराव

होल्करसे कहा कि,–"वह सुंदरी यथार्थमें आपहीके योग्यहै ।" अंग्रेजी राज्यके पहिले इसदेशके कितनेही राजा बादशाह दूसरोंकी रूपवती स्त्रियोंको बेधडक अपने महलोंमें डाललेतेथे और फिर ऐसा प्रसन्न होते कि मानों पृथ्वीमेंसे गडाहुआ धनही उनको मिलगया है ।

होल्कर इतना अन्यायीथा कि एक समीपवर्ती मनुष्य अपनी बहू बेटियोंको उसके पास भेजकर उसे प्रसन्न रखतेथे । कहाजाताहै कि गणपतराव दीवानकी स्त्रीके ऊपरभी होल्कर मोहित होगयाथा । परन्तु वह बिचारा दीवान किस शक्तिसे उससे विमुख हो सकता है ? राज्यमें जो उसकी प्रबलता बढीथी उसका कारण उसकी स्त्रीहीथी क्योंकि राजाको उसने अपना वशवर्त्ती बना लियाथा ।

एक राजदूत तुलसीबाईको बलपूर्वक उसके पतिके समीपसे छीनलाया और यशवन्तराव होल्करको लाकर देदी । यशवन्तराव उसके ऊपर इतना मोहित होगया कि अपने पाहिले विवाहका कुछ विचार न कर तुलसीबाईको महलमें डाल आनंद उठानेलगा और उसका पति बंदीगृहमें पडकर सडनेलगा । कुछ समयबीतनेके उपरांत तुलसीबाईको अपने पतिका पूर्व स्नेह स्मरण हुआ और कृपादृष्टि करके उसको बंदीसे छुडाया तथा होल्करने उसको स्त्रीके बदलेमें एक घोडा और मार्ग व्यय देकर बिदाकिया ।

यशवन्तराव होल्कर तुलसीबाईके ऊपर अत्यन्तही प्रसन्न रहताथा इसकारण उसको अपनी मुख्यरानी बनालिया बिना उसकी सम्मति लिये वह कुछभी कार्य न करताथा । कुछ दिन बीतनेके उपरांत यशवंतराव विक्षिप्त होगया तब रानी तुलसीबाई अपनी सौतिके छोटे बच्चेको गद्दीपर बिठाय उसके नामसे राज्य करने लगी । उसके पहिलेही अहल्याबाईका यशस्वी राज्य होगयाथा, इसकारण राज्यसिंहासनपर स्त्रीके बैठनेसे मरहठोंको कुछभी अप्रसन्नता न थी । अहल्याबाई खुले दर्बारमें बैठतीथी, परन्तु तुलसीबाई पर्देमें रह अपनी परम विश्वासिनी मीनाबाई द्वारा राजकाज करने लगी । पर्देमें रहकर राजमन्त्रि-

योंसे वातचीत करती तथा रुक्कपर्वाने आदि लिखातीथी। तुलसीवाई के पर्देमें रहनेका यह कारण बतायाजाता है कि वह नवयौवना और सुन्दरीथी, यह बाततो एक ओर रही बरन् उसको एक बडाभारी भय यहभी था किसी मनुष्योंमें उसका दुराचार न प्रगट होजाय। पहिले तो उसने एक बलराम सेठियाको अपना मुख्य मन्त्री बनाया, समस्त राजकाज उसको सौंप दिया, परन्तु फिर पीछेसे यह जाना कि यह इतने भारी कार्यके योग्य नहीं है। क्योंकि उससे राज्यका प्रबंध इतना बिगडगया कि राज्यकरक वसूल होनेमें बडी २ कठिनाइयां पडनेलगीं। खजानेमें इतनी कमी पडगई कि सिपाहियोंको समयपर वेतन न मिलसका। उपद्रवी मनुष्य जहां तहां उपद्रव मचाय प्रजाको दुःख देनेलगे, बरन् मरहठे और पठान कामदारोंमें दोपक्ष बँधगयेथे। एक दूसरेकी निंदा तथा घात करनेम परस्पर तत्पर रहतेथे। निर्बल राजनीतिके कारण राज्यम रिश्वत तथा लूटपाट मचरहीथी और प्रजाके सुखका तो नामभी न रहा, प्रजा दुःखसे त्राहि २ करनेलगी। दो प्रधान पक्षोंमेंसे एक मण्डलकी सामर्थ्य तो इतनी बढगईथी कि उसने यशवन्तराव, तुलसीवाई तथा उसके पुत्रको केवल दीनके समान अपने आधीन करालिया, बरन् वे उन सबको मारनेके निमित्त एकदिन शिकार खेलनेके वहाने जंगलमें लेगये। समय पाकर एक भले मरहटे सर्दारने उन मनुष्योंके दुष्टविचारको जानलिया उसने तत्कालही उनके पीछे पड इन तीनाके प्राण बचाये। दूसरे दिन वे उपद्रवी मुश्कें बांधकर राजसभाम लायेगये तुलसीबाईने तत्कालही उनके शिर काटदेनेकी आज्ञादी।

सन् १८११ ई० में यशवन्तराव होलकर विक्षिप्त होकर मरगया। तुलसीवाई उसही मल्हारराव नामक बालकको गोदमें ले राज्यकरने लगी। दो मासभी राज्य करते न बीतने पायेथे कि इतनेमें कितनेही एक राजकीय उपद्रवियोंने उसको मार डालनेका विचार किया, परन्तु रानी गुप्तचारोंसे भेद पातेही सावधान होगई। उसके सिपाहियोंको बहुत दिनसे तनख्वाह नहीं मिलीथी इसकारण वे वे दिल हो

बारंबार धमकातेथे इसीसे उसे प्रत्येक समय प्राणोंका भय लगा रहता था। इससे तुलसीबाईने विचार किया कि,-"राज्यकी कुछ पृथ्वी गिरवी रख सेंधिया सर्कारसे रुपया ऋणले फौजको शेष वेतन बांट दूं।" परन्तु उसके शत्रुओंने कि जिनकी इच्छा उसके गद्दीपर बैठे रहनेकी न थी उसकी इच्छा न होनेदी। अंतमें एक विपरीत बात यहभी हुई कि तुलसीबाईका अपने मंत्री गणपतरावसे खोटा सम्बन्ध रहना प्रगट होगया। इसकारण समस्त राज्य उसका शत्रु हुआ। दुराचारके प्रगट होतेही भारतवर्षमें होल्करके वंशकी अत्यन्त अपकीर्ति हुई। तुलसीबाई सेनाको बिगडा हुआ देख गणपतराव और छोटे राजकुमारको गढमें चलीआई। वहां पठानोंने उपद्रव मचाया और उन तीनोंको घेरकर छोटे राजकुमारको उनके हाथसे छीनलेनेका प्रयत्नकिया। परन्तु ज्योतिबालायक नामक प्रधान मनुष्योंने बडी शूरताईसे उन्हें इस आपत्तिसे छुडाया। उसने एक नीचेके स्थानपरसे गढकी दिवारपर चढ किलेके रक्षकोंके ऊपर एक साथ आक्रमणकर उनमेंसे अनेकको घायलकर व कितनोंको मार डाला। जब नायक किलेके रक्षकोंको पराजित करवायके सन्मुख पहुंच उसको मस्तक झुकाने लगा, तब वह अद्भुत प्रकारसे बैठा।इधर राणी मुसलमान उपद्रावियोंके भयसे एक हाथमें कटार और दूसरे हाथमें बालकको गोदमेंले इसविचारमें बैठीथी कि, "जो उपद्रवी पठान बालकको छीनेंगे तो स्वयं अपने हाथसेही इस बालकको मार डालूंगी परन्तु उन मनुष्योंको न दूंगी।"तुलसीबाई इसही विचारमें बैठीथी कि इतनेमें अपने स्वामीभक्त सर्दारको देख उसने उसका अत्यन्तही सत्कार किया। दूसरी बार जब शत्रु बाईपर गोला बरसाने लगे तब वहभी उनके सामने बडे साहससे लडी। इतनेम एक गोला राजकुमारके हाथीके हौदेमें आलगा और समस्त सेना नाश होनेलगी। रानीने तत्कालही राजकुमारको उस हाथीपरसे उतार गणपतरावके हाथीपर चढा दिया और स्वयं रणभूमिसे भाग १६ कोसपर जाकर श्वांस ली।

इसप्रकार सन् १८२७ ई० तक होल्करके राज्यमें बडाभारी उपद्रव होतारहा। इससमय अंगरेजी सेना मध्यदेशतक जा पहुंचीथी। तुलसीबाईने विचारा कि गुप्तरीतिसे राजकुमारको ले अंगरेजकी शरणमें जाऊं। उसका यह विचार लाभकारकथा परन्तु उससमय पेशवा अंगरेजोंसे छलकपट कररहाथा। इसकार्यमें रानीका दीवान गणपतरावभी मिलाहुआथा। शत्रुओंके द्वेष तथा दीवानके समझानेसे रानी इसविचारको छोड बैठी, परन्तु उसके मनमें यह बात दृढथी कि किसी प्रकारसेभी अवसर पातेही अंग्रेजोंके साथ जा मिलूंगी। जब अंगरेजोंकी सेना महीदपुरके समीप आई तब बाईके दुष्टसेवकोंके मनमें भय उत्पन्न हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि बाई अपने विचारको पूर्ण करे। सेनाके पठान उसके बडे भारी शत्रुथे उन्होंने जान लियाथा कि जो कदाचित् बाई अंग्रेजोंके साथ जा मिलेगी तो फिर लूट मार न होने पावेगी। इसकारण उन्होंने छलबलकर राजकुमार मल्हाररावको अपने वशमें करलिया और तुलसीबाईको बंदी करडाला। गणपतराव उसकी सहायताको आया, परन्तु जब उसने देखा कि होल्करका पठानोंके हाथसे छुडाना अत्यन्तही कठिनहै, और सब सर्दार बाईके विरुद्धहैं तथा उसको गद्दीपरसे उतारनेका विचार कररहेहैं, तब वह घोडेपर सवारहो वहांसे भगा परन्तु मुसलमान उसके पीछे दौडे और उन्होंने उसे शिप्रानदीके निकट जापकडा। मुसलमानोंने पहुंचतेही उसे घोडेसे गिराय कटारसे घायल किया और घूंसोंसे मारमार मूर्च्छित करडाला, अंतमें बांधकर लश्करमें लेआये।

गणपतरावकी तो यह दशा हुई,अब तुलसीबाईकीभी दशा सुनो— तारीख २२ दिसम्बर सन् १८१७ ई० को प्रातःकालमें तुलसीबाईको पालकीमें बिठलाकर बंदीगृहसे बाहर लायागया। हत्यारोंकी दुष्ट इच्छाको वह जानगईथी इसकारण चिल्लाचिल्लाकर रोनेलगी, इससे कितनेही एक मनुष्य सोतेसे चौंकपडे, परन्तु किसीसे इतना साहस न होसका कि उस अबलाको छुडाता। छुडाना तो एक ओर रहा, किसी-

ने जीभतक न हिलायी। अन्तमें शिप्रानदीके किनारेपर लेजाकर एक मुसलमान सर्दारने पालकीके नीचे पटका दिया और तलवारसे उसका शिर काट उसके मृतक शरीरको नदीमें वहादिया। इससमय तुलसीवाईकी अवस्था केवल ३० वर्षकी थी। स्त्री चाहे जैसा अपराधकरै परंतु आर्य्यधर्मावलम्बी स्त्रीके ऊपर हाथतक नहीं डालते। परन्तु इन मनुष्योंमेंसे किसीनेभी उस स्त्रीके मारनेमें दया न की। तुलसीवाई परम सुन्दरी और बुद्धिमान थी उसकी वाणी अत्यन्त मधुर और सुहावनी थी। उसको घोडेपर वैठनेका भली प्रकारसे अभ्यास था। वह घोडेपर वैठ कितनेही एक राजकुलके सर्दार तथा राजकुलकी स्त्रियोंके साथ घूमनेको निकलतीथी। यदि उसके आचरणोंकी ओर ध्यान दियाजाय तो उसके हृदयमें दयाका चिह्नतक न था वह वडी ही कुकर्मिणीथी। सदैव इन्द्रियोंके भोग विलासमें लिप्तरहतीथी इसमें कुछ अचम्भेकी वात नहीं है। क्योंकि जव स्त्रीके हाथमें राज्यके धनसहित स्वतन्त्रता आतीहै वह लोकलाज तथा धर्मके भयको चित्तसे उठादेती है, तव यही दशा होतीहै।

वैजावाई।

यह मरहठे सर्दार दीवान श्रीजीराव घटककी पुत्रीथी। मि० मेलकम साहवने कृष्णाकुमारीके भाईको देखकर उसके रूप तथा यौवनके विषे जैसा अनुमान कियाथा, वैसेही वैजावाईके भाई हिंदूरावके चित्रको कि जो दिल्लीके अजायव घरमेंहै देखकर हमभी वैजावाईके रूप और यौवन आदिका विचार करसकतेहैं। यद्यपि हिन्दूराव अत्यंत रूपवान न था परन्तु उसके शरीरका वंधा अत्यन्त सुन्दर तथा प्रेक्षणीय था। वह कुछ श्यामवर्णका था, परन्तु उसके नेत्र अत्यन्त तेजस्वी जान पडतेथे।

वालकपनमेंही वैजावाईका विवाह दौलतराव सेंधियासे होगयाथा इसके विवाहमें इतनी धूमधाम हुईथी कि पहिले और किसी राजाका

विवाह इस धूमधामसे नहीं हुआथा । कहाजाता है कि उसके विवाह-के व्ययसे खजाना इतना अधिक खाली होगयाथा कि सैनिक मनुष्यों-को वेतन चुकानेमेंभी कठिनता पडी थी । वैजाबाई अत्यन्तही उदार चित्त तथा वीरस्त्री थी। सेंधियेसर्कार दौलतसिंह उसका इतना अधिक आदर सत्कार रखतेथे कि विना उसकी सम्मति लिये कोईभी कार्य न करते । सन् १८२८ ई० म महाराजका परलोकवास हुआ । उनके कोई सन्तान न थी और न उसने अपने जीवनमें किसी बालकको गोदही लियाथा इसकारण वैजाबाई स्वयंही अपने पतिके मरनेपर गद्दीपै बैठी । वह इस प्रतापवान रानीकी ऐसी इच्छाथी कि अपने पिताके वंशमेंसे किसीको गोदलेलूं, परन्तु कितनेही एक संयोग ऐसे आपडे कि वह अपनी इच्छाको पूर्ण न करसकी ।

अंतमें अपनी इच्छा विना उसने अपने पतिके कुलमेंसे मुगतराव-नामक बालकको गद्दीके निमित्त स्वीकार किया । इससमय उस गोद लियेहुए पुत्रकी अवस्था केवल ११ वर्षकी थी । जबतक वह राजकाज संभालनेमें असमर्थ रहा तबतक वैजाबाईने अत्यन्त कुशलता पूर्वक संतोषदायक राज्यप्रबंध किया । परन्तु जब मुगतराव समझदार हुआ तब उसने स्वयं गद्दी चाही । वैजाबाईने इस राज्यका भोग स्वतंत्रता पूर्वक किया था इसकारण उसे राज्यगद्दी न देनी चाही पीछे एक दिन एक मुगतराव महलोंमें निकल सरकारी रेजीडेंटके समीप पहुँचा । धीरे २ बात बढगई और बाई तथा मुगतराव युद्ध करनेके निमित्त तत्पर होगये, परन्तु सर्कारने बीचमें पड दोनोंका निवटेरा करदिया कि "मुगतराव राजगद्दीका अधिकारीहै और बाई उसकी अनसमझ अवस्थातक राज्यसंभालनेके निमित्त नियत हुईथी । परन्तु मुगतराव समर्थ हुआ अतएव बाईको राज्यगद्दी देदेनी चाहिये । इसबातसे सन् १८३३ ई० में मुगतराव सेंधिया "आलीजाह" की उपाधि धारणकर ग्वालियरकी राज्यगद्दी विराजमान हुआ ।

बैजाबाई कुछ दिनों वहां से अपना धन तथा नौकर चाकर ले आगरे में आ बसी थी परन्तु वह ग्वालियरके समीपथा इसकारण सदैव भय रहता था कि वह कहीं लश्करके उपद्रवी मनुष्योंको भडकाकर उपद्रव न खडा करदे ! सर्कारने उसके योग्य पदके अनुसार पिंशन नियतकर फरुखाबादमें जाकर रहनेकी आज्ञादी । कुछ समय बीतनेके उपरांत महाराजा ग्वालियरने बाईको इस प्रतिज्ञापर राज्यकी आयमेंसे वार्षिक देना स्वीकार किया कि वह अपनी जागीर (दक्षिण) में जाबसे। सन् १८५७ ई० के बलवेमें बाईने उपद्रवी मनुष्योंसे सेंधियाके कुटुम्ब-की रक्षाकी और अंतमें वह अपने प्राणबचाय शिप्रानदीके किनारे गई तदनंतर थोडेही दिनोंमें उसका परलोक वास हो गया ।

फैनी पार्कसाहबकी स्त्री कि जो बैजाबाईके मिलनेको आईथी उसने अपनी यात्राके वृत्तांतमें लिखा है कि, "जिस समयमें बाईसे मिलनेको गई उस समय वह जरीके कामवाली गद्दीपर बैठीथी। एकओर उसकी एक पौत्री गजराजभी बैठीथी और दासियें दोनों ओर आदरपूर्वक खडी थीं। गद्दीके ऊपर रानीके सामनेही सेंधियाकी तलवार रक्खीथी, इससे उसका दृश्य औरभी रमणीय होरहाथा । बैजाबाईके माथेके समस्तबाल सफेद होगये, परन्तु उसका मंदहास्य अत्यन्त प्रियकरथा । निःसंदेह वह अपनी युवावस्थामें एक महामोहिनी होगी। उसके छोटे२ हाथ पैर सुडौल तथा कोमलथे और वाणी अत्यन्त मधुरथी। वह रंगीन रेशमी वस्त्र धारण कियेथी और हाथमें केवल सोनेकी एक २ चूडी थी । दूसरा कोईभी आभूषण न पहिनतीथी । विधवा होनेके कारण शारीरिक कष्ट, तप, जपतपादिक किया करतीथी इसीसे वह दुर्बल देख पडतीथी परन्तु उसके मुखकी कांति अत्यन्त देदीप्यमान थी । उसकी चाल और लक्षण अत्यन्त प्रशंसनीय थे कि जो महान् राजकुलकी थोडीही स्त्रियोंमें होतेहैं, उसकी पौत्री गजराज एक अत्यन्त रूपवती बालिकाथी । उसके नेत्र बडे चमकीलेथे तथा शरीरकी लावण्यता अत्य-न्तही मनोहरथी । मरहठी स्त्रियें केवल दोही वस्त्र पहिनती हैं एक तो

२० हाथकी लम्बीसाडी होतीहै वह पैरसे मस्तकतक कमरमें लपेटकर पहिनती हैं कि जो अत्यन्तही सुन्दर जानपडती है । इसके अतिरिक्त हाथकी कोहनीतक चोली पहिनतीहैं । गजराज श्यामरंगवाली जरी-साडी पहिनेथी और माथेके केशोंका अद्भुतरीतिसे जूडा बांधे हुएथी । कटारके आकारके चन्द्रमाके आकारके तथा फूलोंके आकारके स्वर्ण भूषण शिरके बालोंमें गुहेथी तथा कानोंमें हीरेसे जडित सुवर्णके लो-लक पहिनेथी । आंखोंमें अंजन लगाएथी तथा हाथोंमें मेंहदी दियेथी कि जिससे वह अत्यन्तही सुशोभित देखपडीहै । गलेसे कमरतक हीरे तथा मोतियोंके आभूषणोंसे लदीथी । उसकी नाकमें छोटीसी नथनी झूलरहीथी कि जिससे उसके मोती मूंगेकी समान उसके रक्त होंठोंके ऊपर पडकर अत्यन्तही शोभा देरहेथे । वह हाथोंमें अनेक प्रकारके रत्न-जडित कंगन तथा पैरोंमें सोनेके तोडे पहिनेथी । वह बहुतही थोडा बोलतीथी मिलापके समय वह मुझसे बहुतही थोडा बोली । उसकी चाल अत्यन्तही गम्भीरथी और प्रकृति अत्यन्त शांत जान पडतीथी। मेरे साथकी एक मेरा साहबने उसके हाथोंमें फूलोंका गुच्छा दिया तो उसने प्रसन्नतापूर्वक लेलिया । उसके देखनेसे जान पडताथा कि मरहठोंकी स्त्रियां बडी शूर होतीहैं । महाराणी बैजाबाईके चारोंओर सुनहरी साडियें पहिने उसकी दासियें खडीथीं, कि जो अत्यन्तही मूल्य-वान दुशाले ओढरहीथीं । यह समस्त दासियें जब बैजाबाईके पीछे २ चलतीथीं तब वह अत्यन्त सुन्दर देखपडतीथी ।"

चंदा ।

बहुतसे मनुष्य अबभी ऐसे होंगे कि जिन्होंने रानी चंदाको अपनी आंखोंसे स्वयं देखा होगा । वर्तमान समयमें जो विख्यात स्त्रियें होगई हैं उनमेंसे बहुतसी दक्षिण, मालवा तथा राजपूतानेमें हुई जान पडतीहैं ।

रानी चंदा सिक्खमहाराज रणजीतसिंहकी छोटी रानी और दलीप-सिंहकी माताथी । इस राजाका सन् १८३९ ई० में परलोक वास-

हुआ तब रानीकी अवस्था तरुणथी और दलीपसिंह दूधपीते हुए बालक थे । सितम्बर सन् १८४३ ई० म दलीपसिंह पांचवर्षकी आयुमें राज्यासनपर बिठाये गये, राजकाजके प्रबन्धके हीरासिंह दीवान नियत हुआ । हीरासिंहके रहते हुए रानीचंदाने किसी राज्यप्रबंधमें हाथ न डाला; क्योंकि हीरासिंह बहुत समयसे पूरा राज्यभक्त और विश्वास पात्र नौकर था । हीरासिंहके मरने पर जवाहिरसिंहको दीवानकी पदवी दीगई, परन्तु उससे खालसा की सेनाके सिपाही बिगडगये, और रानी चन्दानेभी राज्यकी खटपटका वृत्तांत भलीप्रकारसे जानलिया इन झगडोंके होतेही रानीसमस्त राज्यका भार अपने हाथमें लेकर अपने पुत्र दलीपके नामसे राज्यकार्य करने लगी । नवम्बर सन् १८४५ ई० में लालसिंह दीवान और तेजसिंह सेनापति नियत किया गया । लालसिंह रूपवान, नवयौवन और जातिका ब्राह्मणथा । वह रानीका अत्यन्तही प्रियपात्रहुआ अतएव रानीने धीरे २ उसको दीवानके पदपर नियत किया । इस विषयमें कितनोंहीको उसके सम्बंधमें अधार्मिक शंका उत्पन्न होगईथी परन्तु इतिहासोंमें सेनापति और राज्यप्रबंध कारोंके ऊपर कितनीही बार ऐसे कलंक लगाये गये हैं कारण:जैसे उनबातोंके ऊपर कुछभी ध्यान नहीं दिया जाता तैसेही हमभी उनके कलंकों और अवगुणोंको दूरकर चंदाके चरित्रोंमेंसे उसके बुद्धिचातुर्य तथा राज्यनीतिज्ञपनकी उत्तमताकोही खोजेंगे ।

राजा रणजीतसिंहके मरतेही खालसा सिक्खोंने भलीप्रकारसे अपना जमाव किया और समस्त पंजाब प्रांत उनके अधिकारमें आगया इसकारण वह अपनी इच्छानुसार जिसको चाहते उसको गद्दीपर बिठा सकते और जिसको चाहते उसको उतार सकते थे । उनको तो केवल राजारणजीतसिंहकाही भयथा वह भयभी राजाके मरतेही न रहा । राज्यसम्बंधी कठिनकामोंको रानी चंदाने अत्यन्त सावधानी और चतुराई से किया परन्तु उसकोभी यह भय लगाही रहताथा कि कहीं खालसा सेनावाले पुत्रको राज्यगद्दीसे न उतार दे इसकारण विचार किया कि

इस विघ्नकारक सेनाको देशकी रक्षाके निमित्त दूसरे देशोंपर चढाई करनेके मिषसे बाहरही रखना उचित है । जिसप्रकार फ्रांसके शहंशाह ने अपने देशवासियोंका ध्यान पृथक् २ स्थानोंमें बंटजानेके लिये अपनी सेनाको विक्टर–ई–मेन्युअलकी सहायताके निमित्त और नवीन राजाको गद्दीपर बिठानेके निमित्त अलजीरिया और मेक्सिकोमें छोड दियाथा, वैसेही उसनेभी राज्यकार्य चलाया । उपद्रवी मनुष्योंसे लाहोरकी रक्षाकरनेका बहाना निकाल सिक्खोंको बनारस तथा दिल्ली लूटनेके बहानेसे उधरको भेजा । प्रथम सिक्खोंकी चढाईमें सर्दारोंने कितनेही छल कपट और हीले हवाले किये जिनसे जानाजाताहै कि अंग्रेजी राज्यके विरुद्ध उनके युद्धकरनेकी इच्छा न थी, और इसही बहानेसे उन्होंने अपने प्राण बचानेका निश्चयकिया होगा । जो हो, रानीने महाबलवान ब्रिटिश राज्यपर चढाईकरनेको सेनाभेज अचल कार्य न किया । यह बाततो सब जानतेहीथे कि ब्रिटिश सिंहके सामने भिडजानेसे जयनहीं मिलेगी और जो कुछ थोडा बहुत देश है वहभी छीन जायगा। मनुष्योंके कथनानुसार अन्तमें वही हुआ । युद्ध करनेसे रणभूमिमें आधे सिक्ख सिपाही कटमरे और पंजाबप्रांतमें अंगरेजोंका झंडाफहराने लगा । ऐसा होने परभी लार्ड हार्डिंगने उसप्रांतमें शीघ्रही अंगरेजी राज्यहोनेकी चेष्टा न की । दलीपको नाममात्रका राजा कर समस्त राज्यका प्रबंध रेजीडेंटको सौंप दिया । रानी चन्दाको प्रतिवर्ष डेढलाखकी वार्षिक पेन्शनदेकर उससे यह प्रतिज्ञा कराई गई कि राज्यमें कुछ बखेडा नकरे । परन्तु यह अभागीरानी शांतचित्तसे कैसे समय काट सकती थोडेही दिनोंके उपरांत वह अपनी अवस्थाको अप्रतिष्ठा और हीनता रूप समझ अनेक प्रकारकी अप्रसन्नता प्रगट करनेलगी ।

न्यायी अंगरेज सर्कारने जब लालसिंहका दो हजार रुपया मासिक नियतकर उसको रानी चन्दासे पृथक् कर अपने राज्यमें रखनेका प्रबन्धकिया तब रानी चन्दाको अत्यन्त क्रोध हुआ और इसकार्यको

रोकनेका विचार करने लगी। अन्तमें मईसन १८४८ ई०में उसके दो नौकर सर्कारीसेनाम जायदेशीसैनिकोंको उलटी सम्मतिदे डराने लगे, परन्तु वह दोनोंभी पकडे जाकर फांसीकी लकडीमें लटकायेगये। फिर धीरे २ यहभी प्रगटहुआ कि लाहौर दर्बारकेही वह दोनों सर्दार इस नीचविचारमें रानीके संगीथे। कहाजाता है कि ज्ञानसिंह कि जो अगन्यु साहबके संग मुलतान गयाथा उसका यह विचारथा कि अवसर पाकर मुलतानका किला अपने स्वाधीनकर सिक्खोंकी सेनाको इकट्ठा करूं। रानी चन्दानेभी काबुल, कंदहार, कश्मीर, राजपूताना तथा दूसरे हिंदू राजाओंको इस उद्योगके निमित्त अपनी ओर मिलालियाथा,और सन १८५७ई० में बाजीरावने जो उपद्रव मचायाथा वहभी उसकी अविचार इच्छासे हुआथा। कहाभी है कि,-"विनाशकाले विपरीतबुद्धिः" तैसेही उसकोभी यह विपरीत बुद्धि सूझी। इसकारण सब सिक्खसेना अंगरेजोंसे विगडनेको तइयार होगई और उससेनामें ऐसा एकभी सर्दार नजानपडा कि जो सर्कारको लाभ पहुंचानेवालाहो। बहुतोंकी तो ऐसी इच्छाथी कि एकबार फिर सिक्खोंके नामका डंका वजाया उन्हीं की पताका खडीकी जावे परन्तु इन सब बातोंका उचित समयमेंहि भेद खुलगया और अंगरेज सर्कार सावधान होगई। तत्कालही उसने रानी चन्दाकी पेन्शन बन्दकर केवल ४००० रुपया वार्षिक नियत किया और लाहौरसे बाहर थोडीदूरपर शाकुपुर नामक स्थानमें उसे वंदीकरके रक्खा।

मि० फेफिककैरी साहबने ऐसा अभिप्राय प्रगट किया कि, जबतक चन्दा पंजाबमें रहेगी तबतक देशमें उपद्रव और अशांति फैली रहेगी। इसकारण उसे सुशिक्षित सेनाके साथ सतलजसे पार उतार बनारसमें लायागया। उसको बनारस लाते समय सर्कारको बडाभारी भय और निश्चयथा कि राज्यके सर्दार तथा बडे २ राज्यकर्मचारी सिक्ख चंदाको पंजाबसे लेजातीसमय अवश्य उपद्रव करेंगे, परन्तु उन्होंने ऐसा दृढ प्रबंध किया कि जिससे कोईभी चूंचां न करसका।

सन् १८४९ ई०में रानी चंदाके देश निकाला होनेसे सिक्खोंको वहुतही वुरालगा और वे अनेक प्रकारके विचार करनेलगे । रामनगरके युद्धमें जो पत्र शेरसिंहको सेनाकी ओरसे लार्ड डैलहौसीको मिलाथा, उससे जानाजाताहै सिक्खोंके अंगरेजोंसे विगडनेका मुख्यकारण यह चंदाही-थी । वहुत दिनभी न वीतनेपायेथे कि इतनेमें चंदाने ब्रिटिशसिंहके पंजेसे निकल नैपालमें जाय महाराजकी शरणली ! टोकरेमें छिपकर वह इसप्रकार चौकी पहरेसे निकलगई कि जैसे औरंगजेवके वंदीगृहसे महाराजशिवाजी निकल आयेथे । नामदार सरकार अंगरेजने नैपाल-के महाराजसे कहलाभेजा कि रानीचंदाको हमारे यहां भेजदो, परन्तु शरणागतको शत्रुके हाथमें देना वुद्धि, न्याय और धर्मसे विरुद्धहै विचा-रकर महाराजने नम्रतापूर्वक सरकार अंगरेजसे कहलाभेजा कि,–आप चंदाके विषयमें कुछ चिंता न करें मैं स्वयंही अपने यहां उसे सावधानी से रक्खूंगा । अंतमें सिक्खोंका राज्य नाश होगया और पंजावको खालसाकर सर्कार अंगरेजने उसे अपने अधिकारमें कर लिया ।

अंतमें चंदाको तथा उसके वालकपुत्र दलीपसिंहको राजवंदीकी समान हिन्दुस्तानसे इंग्लैंडको भेज दियागया । वहां उनको पांचलाख अस्सीहजारकी वार्षिक पिंशन मिलनेलगी और इंग्लैंडके जागीरदारों-के समान उनको नार्फोकनामक परगनेमें रक्खागया । विलायत जानेपर दलीपसिंहने अपने सिक्ख-धर्मको छोड ईसाई धर्म स्वीकार किया और वहींपर एक अंगरेजकी लडकीके साथ विवाहकिया, यद्यपि चंदा कितनी एक वातोंमें अविचारी और साहसीथी परन्तु तौभी वह अपने धर्ममें इतनी श्रद्धावानथी कि उसने पुत्रके ऐसे आचरणोंको देख उसे एक साथही छोडदिया और मरनेके समयतक उससे पृथक् रहा । अपनी प्यारी पंजावभूमिके वियोगसे खिन्न हृदय होकर रानी चंदा थोडेही वर्षोंके पीछे इंग्लैंडमें मरगई, वैसेही दलीपसिंहभी सन् १८९३ ई०में दुःखितहो पेरिसमें मरे । पंजावके मनुष्योंकी रानी चं-दापर अत्यंतही ममता और श्रद्धाथी । पंजावी मनुष्य अवतकभी इसके

नामको सुनकर खेद करतेहैं और उसके कितनेही एक गुणोंको सुनकर गदगद होजातेहैं।

झांसीकी रानी।

भरतखंडकी प्रसिद्ध वीरस्त्रियोंमें झांसीकी रानी लक्ष्मीबाई गत उन्नीसवीं शताब्दीमें वीरनारी चंदाके पीछे अर्थात सबसे अंतिम रानी होगईहै। झांसी नगर बुंदेलखंडके पहाडीप्रदेशमें बसाहुआहै, जहांके राजा गंगाधररावकी यह रानीथी।

इसमें असाधारण धैर्य, शौर्य और बुद्धिकी कौशलता थी, जिसके विषयमें सरमाल्कमके समान विद्वान अंगरेजने अपने उच्च अभिप्रायको प्रगट कियाहै; परन्तु तौभी उसके चरित्रोंसे इतना तो जानना ही चाहिये कि उसके अविचारी साहससे अङ्गरेजोंके विरुद्ध जो पागलपन किया, वह ठीक न किया। क्योंकि अन्तमें सब विपत्ति उसकेही ऊपर आपडीं और अपयश पाया।

सन् १८५३ ई०में रानी लक्ष्मी बाईके स्वामीने आनन्दराव नामक लडकागोदलिया और पुत्रको छोड परलोक गमन किया। राजाने पहले ही ब्रिटिशरेजीडेण्टको जतादियाथा कि जो कदाचित् ईश्वरकी इच्छासे मेरा मरण होजावे तो मेरे इस बालकके ऊपर तथा मेरी विधवास्त्रीपर कृपादृष्टि रखना। दैवयोगसे इसही समयमें नागपुर तथा सतारेके राजाभी परलोकवासी हुए; और उनका राज्य सर्कारी राज्यमें मिला दियागया। इसकारण कितनेही एक रजवाडोंमें खलबली पडगई कि सब पुराने रजवाडे चले जांयगे। इतनेमें अर्थात सन् १८५७ ई० में बडाभारी बलवा हुआ; जिसने बलवान ब्रिटिश राज्यको यह बात प्रगटकरदी कि आपत्तिके समयपर एकानिष्ठतासे देशी रजवाडेही सहायता देनेवालेहैं और वही राज्यके स्तम्भहैं।

राजा गङ्गाधररावका परलोकवास होतेही रानी लक्ष्मीबाईने अपने गोदलिये हुए पुत्रको गद्दीपर बिठानेकी इच्छा की; परन्तु लार्ड डेलहौसी

ने यह वात नहीं मानी और राज्यको अंगरेजी राज्यमें मिलादिया। इसकारण रानी निराश होकर अत्यन्त दुःखित होगई। कहाजाताहै कि उसको नित्यके आवश्यकीय व्ययके निमित्तभी कठिनता होनेलगी थी वरन् उसके ऊपर ऋणभी होगयाथा, जब ऋण देनेवाले महाजनों ने रानीके ऋणके व्याजकी सर्कारमें सूचना दी तब उसकी पिंशनसे रुपया काटकर महाजनोंको चुकाने जानेका निश्चय कियागया। परतंत्र रानीने इसबातसे दुःखित हो गवर्नरजनरलसे प्रार्थना की कि वर्तमानमें मेरा राज्य सर्कारके आधीनहै अतएव सर्कारसेही मेरे ऋणका व्याज चुकाया जावे। मेरी तुच्छ पिंशनसे कैसे पूरा पडेगा ? पहिले तो मेरी पिंशनही इतनी थोडीहै कि मेरा नित्यनैमित्तिक व्ययही उससे पूरा नहीं पडता फिर उसमेंसे व्याजका रुपया काटकर महाजनोंको दिया जायगा तो फिर मैं अपने दिन किसप्रकारसे काटूंगी? परन्तु इस प्रार्थना का कोई संतोषकारक उत्तर न मिला।

तीनवर्ष बीतनेपर सिपाहियोंने बलवा किया। झांसीकी सेनाक सिपाहियोंको बहकाकर उसने आगे किया और उनकी सहायतासे ता० ४ जुलाई सन् १८५७ ई० को, जिस किलेमें अंग्रेजोंने अपने कुटुम्ब सहित शरणलीथी उसको जा घेरा। इतनीभारी भीडके सन्मुख लडना व्यर्थ जान, प्राण बचानेकी आशासे उन्होंने किलेका द्वार खोला कि बाहर निकलजावें, परन्तु रुधिरके प्यासे सिपाहियोंने धर्म तथा न्यायका बिना विचारकिये बडाभारी अनर्थ किया। कहाजाताहै कि इस भयंकर उत्पातमें केवल एकही पुरुष जीवित निकलाथा। इन निरपराधियोंके वध करनेका अपराध रानी लक्ष्मीबाई पर लगायाजाताहै और उसकीही आज्ञासे इस घोर युद्धका होनाभी मानाजाताहै।

तदनन्तर रानी लक्ष्मीबाईने पुनर्वार झांसीका राज्य स्थापितकिया और फिर युद्धका होना विचारकर रामचन्द्रके समयकी बीस तोपें पृथ्वीमेंसे निकालीं तथा लगभग चौदहसहस्र मनुष्योंकी सेना इकट्ठा की

इस बातको हुए एकवर्षभी पूरा न वीतने पाया कि अंग्रेजोंकी फिरसे जय होनेलगी। सरह्यूरोजकी सेनाने ता० २५वीं अप्रेल सन् १८५८ई०के दिन झांसीको चारों ओरसे घेरलिया और गोलीकी वरषा बाहरसे होने लगी। झांसीके सिपाही दिल खोलकर सर्कारी सेनासे लडे और उनकी स्त्रियोंनेभी तोपखानोंमें रहकर उनका अगलाभाग लिया। इससमय तीन-हजार सिपाही रानी लक्ष्मीबाईने अपने महलकी रक्षाके निमित्त खडे कर रक्खेथे, परन्तु बलवान ब्रिटिशराज्यके प्रतिदिन बढतेहुए बल, ऐश्वर्य और प्रतापके सामने उनकी वीरता, पौरुष, साहस तथा बुद्धि कुछभी काम न आई। दूसरे दिन झांसीनगरको और तीसरे दिन गढ जीत लियागया; तोभी थोडेसे स्वामिभक्त सवारोंकी सहायतासे रानी प्राण लेकर भागगई। दो हजार सैनिक सिपाहियोंके साथ वह काल्पीकी सडकके ऊपर उतरी और ता० २६ वीं मईको वहांसे चलकर ग्वालि-यरमें आई और वहांकी विगडीहुई सेनासे जामिली। ग्वालेयर विजय होनेके पीछे वहांसे भागकर शिप्रानदीके किनारेकी ओर गई, परन्तु मार्गमें एक अंग्रेजी सेनासे युद्ध हुआ। अन्तमें ता० १७ वीं जून सन् १८५८के दिन रानी अत्यन्त वीरतासे लडकर कटमरी और उसकी सब सेना बिखरगई। उस दिन चार तोपें अंगरेजोंके हाथमें आईं। कहाजाताहै कि इस युद्धमें लक्ष्मीबाईके साथ उसकी बहिनभी लडा-ईमें मारीगईथी और वहभी उसकीही समान पराक्रमी थी।

निःसंदेह रानी लक्ष्मीबाई, इस शताब्दीमें भारतवर्षके बीच महावीर और बुद्धिमती होगईहै। उसके राज्यका प्रबन्ध सब प्रकारसे भलाथा, परन्तु बलवाकरवाने तथा सेना बिगडवानेका कलंक उसके ऊपर आया, इसमें कुछभी सन्देह नहींहै। इतिहासोंमें उसका यह अपयश सदैव चलाही जायगा। अतएव यह कहना चाहिये कि नामदार सरकारकी न्यायशीलतामें तो कुछ कचाई नहींहै, परन्तु इस रानीकी निर्मल-वृत्ति बिगडकर राज्यभक्ति घटानेका जो प्रसंग हुआ वह डल्हौसीके अन्यायसेही हुआ।

सौवीरकी रानी।

मारवाडकी दक्षिण दिशामें सौवीरनामक एक शहरहै, वहांके शाश्वतनामक राजाने प्रतिष्ठित कुलकी एक तेजस्वी रानीसे विवाह कियाथा, जिसका नाम विदुलाथा। विदुला रूप और गुणमेंभी तेजस्वीथी। क्षत्रीपनका यथार्थ आवेश बालकपनसेही उसमें जानपडताथा। सौवीरके राजा और विदुला, परस्परके अत्यन्त प्रेमी, परोपकारी, राज्यरक्षक और दीर्घदर्शीथे। युवावस्थामेंही एक पुत्र होनेके उपरांत सौवीरके राजाने परलोक गमन किया, इस पुत्रका नाम सञ्जयथा। बालकपनमें ही संजयको राज्यगद्दी मिली इस कारण स्वार्थीजन उसके मुंहके सामने मीठी २ बातें कह उसीकी इच्छानुसार वर्ताव करने लगे। इससे वह बालक राजा राज्यका कारबार न चलासका और दुष्टजन प्रजाको दुःख देने लगे।

कुछदिनोंके उपरांत बालक सञ्जयके ऊपर उसकी असावधानता देख सिंधके राजाने आक्रमण करनेका निश्चय किया, शीघ्रतापूर्वक उसने सेना भेजी। महाबुद्धिमती और विद्वान रानी विदुला इस चढाईका समाचार सुनतेही कुमार संजयको बुलाकर कहने लगी,—"पुत्र! शाश्वत वंशके नामांकित क्षत्रिय राज्यकी निर्बलताको सुनकर सिंधका राजा चढाआताहै। राजाजीके मरनेपर उनके विरहसे दुःखित होरहीहूं परन्तु तू भोग विलास करताहै? तेरी अव्यवस्थित राजनीति सम्बन्धी बुराइयें मेरे सुननेमें आईहैं, अतएव अब सावधान होकर अपने कर्तव्यको पूरा कर और सिंधकी सेनाके सन्मुख अपनी सेना लेजाकर उससे युद्धकर तथा सौवीरका नाम रख!"

संजयके हृदयमें इसबातने अत्यन्त प्रभाव किया वह तुरंतही सेना सजाय युद्धकरनेको तइयार होगया। यद्यपि उसके मनमें पूर्ण साहस न था तथापि वह आगे बढा। शत्रुकी सेनाने उसे इतना घायल किया कि त्रासितहो वह बालकराजा पीछेको लौटपडा और विचारने लगा

कि,—"इस वडे रणसंग्राममें भिडना मानों विपत्तिसे भिडना है, मुझे तो विजयकी आशा नहीं जानपडती, तो अंतको मेरीही हार होगी।" कुमार तथा उसकी सेनाकी ऐसी दुर्बलता और असाहसिकताको देखकर सिंधीसेनाको आवेशआया, और वह सेना स्थान प्रतिस्थानपर लूटमार मचाने लगी। इधर संजयको लौटा हुआ देख राजमाता विदुला बोली;— पुत्र! जीवनकी चेष्टा क्यों की जाय? अपयश लेकर जीना तो मरनेही के समान है। बेटा! जब तूही हारमानकर शत्रुकी शरण होगा तब तेरी माताकी रक्षा कैसे होगी? क्या तू मेरी पराधीनता देख सकेगा? आज अपना राज्य गया और कल हम भिखारीसेभी तुच्छ गिनेजावेंगे। पुत्र! क्या तू शत्रुओंके असह्य वचनोंको सहसकेगा क्या उनकी आज्ञा-के आधीन होगा? शत्रुको बलवान् जान उसको पीठ दिखाना यथार्थ क्षत्रियत्व नहींहै वरन् यह कायरपनेकी बात है।

संजयका शरीर शत्रुओंके शस्त्रोंसे घायल होगयाथा। अपने प्राणोंके शीघ्रही चले जानेका उसे निश्चयथा। यद्यपि उसका शरीर कुछ अधिक शिथिल न था परन्तु बिना सहायताके वह मनहीमनमें दुःखित होरहा था। वह मातासे कहने लगा,—"जो अब युद्धमें जाऊंगा तो फिर पीछेसे मेरे लौटनेकी आशा न रखना; क्योंकि जो तुमने कहा वह तो में स्वीकार करताहूं, परन्तु मेरी सेनामें और मुझमें क्या शक्ति है सो कौन जानताहै?" विदुलापर इन हृदय वेधक वचनोंका बडाभारी प्रभाव पडा, क्योंकि उसका हृदय प्रेम रहित न था। परन्तु तौभी उस धैर्य-धारी वीरांगनाने आग्रहपूर्वक यह कहा—"पहिले धर्म और पीछे प्रेमहै। यद्यपि मेरा तुझपर अत्यन्त प्रेमहै परन्तु प्रेमवश हो जो अपने धर्मको चूक किसी ऐसी घोर आपत्तिमें जापडूं, तो उसका एक पलको भी सहन न होसकेगा। अतएव तू सावधान होकर साहसकर और हर हर कर युद्धमें आगे बढ! परमकृपालु प्रभु हमारी प्रतिज्ञा देखकर सहायता करेंगे और क्षत्रीकुलकी लज्जा रक्खेंगे, राम और परशुरामके समान क्षत्रियराजाओंनेभी प्रयत्न और साहसके बलसेही विजयपताका

फहराईयो, अतएव तू शरीरकी रक्षाका लोभकर मोहके वशमें न हो । नाशवंत शरीरतो नाशहोनकोहो बनाहै, क्षत्रियोंको मरनेका भय न रखना चाहिये । बेटा ! शीघ्रतापूर्वक रणमें जा और शत्रुओंका नाश कर ।"

माताकी आज्ञामान बाल युवराज संजय मनमें दृढ निश्चयकर एकसाथ रणभूमिमें चलागया । उसके यथार्थ आवेशको देख सेनाकोभी साहस आया और दैवेच्छासे इस दारुणयुद्धमें सिंधा राजाकी हार हुइ । उसका समस्त सेना भाग गई, और इधर युवराज संजय हँसता २ आनंदपूर्वक आकर अपनी माताके पैरों पडा । उसने गोदमले हर्षसे आशीर्वाददिये । शत्रुके हाथमें गयाहुआराज्य आया विदुलाके दृढ आग्रह और मनोंबलसे फिर हाथ आया । दारुण विपत्तिमभी असाहसिक न होकर जो मनुष्य यथार्थ यत्न करता है, वह वीरनारी श्रीविदुलाके समान अथवा राजकुमार संजयके समान विजयी होताहै ।

मेवाडकी पानवाई पन्नाधाई ।

मेवाडके प्रतापी महाराना वाप्पारावके वंशधर राना संग्रामसिंहका जब परलोक हुआ, तब उनकी गद्दीका अधिकारी कुमार उदयसिंह केवल छः वर्षका था ।

इस समय उसके लालन पालन करनेका काम पानवाई नामक एक स्त्रीको सौंपा गया । वह पुत्रसेभी अधिक प्रेम कुमारपर रखताथा, यह मिथ्या नहीं वरन् यथार्थहीमें सत्यथा कि जो उसके चमत्कारिक वृत्तांतोंसे स्वयंही समझम आजायगा । कुमारको बालक देख कितन एक नीच राजद्वारी स्वयं गद्दीपर बैठनेका प्रयत्न करने लगे ।

'संग्रामसिंहका खवास (दास) बनवीर स्वयं गद्दीपति होनेका प्रयत्न करता हुआ कितनेही बखेडोंको करनेलगा । जब उसका कोईभी यत्न काम न आया तब अन्तमें उस दुष्टने राजकुमारके मारडालनेकी चेष्टा की, परन्तु दैवेच्छासे उसकी इस चेष्टाको एक नाई जान गया । वह शीघ्रतासे पानवाईके समीप जाय कहने लगा,—"बनवीर खवास राज-

कुमारके मारडालनेका यत्न कर रहाहै, वह आजही आकर तुझसे राजकुमारको मांगेगा, अतएव मैं तुझको सावधान करने आयाहूं।" इस आश्चर्यकारक बातसे पानबाईके रोम २ में विष फैलगया और क्रोधसे उसका रुधिर भीतरहाभीतर उबलने लगा। तथापि मनमार सावधानहो विचार करनेलगी विचार करते २ उसने राजकुमारको फूलोंके एक बडे टोकरेमें छिपाय गुप्तस्थानमे लेजानेके निमित्त उस नाईको सौंपा। थोडीही देरमें वह उपद्रवी बनवीर वहां आकर पूछने लगा,— "कुंवर उदयसिंह कहांहै ?" पानबाईने विना कुछ घवडाये जिस पालनेमें उदयसिंहके समानहा अपना पुत्र लेटाथा उस पालनेकी ओर उंगली दिखादी, हिंसक बनवीरने एकसाथही कमरसे तलवार निकाल कुंवरकी गर्दनपर आघात किया और अपने कार्यमें सफलता मानकर चलागया।

पापी बनवीरको उसके घोर कृत्यका पूरा२ फल मिलगया तथा उसकी अत्यन्त व अधम दशा हुई,क्योंकि न्यायी ईश्वर विनापाप पुण्यका बदला दिये नहा रहता। पुत्रको कटाहुआ देख पानबाई आंसू बहावहाकर रोने लगी। थोडी देरमेंही वह नाई जिसस्थानपर राजकुमारको रखआया था वहा गई और उसको देख अपने जलते हुए हृदयको धैर्यदिया। परोपकारी पानबाईने इसप्रकार अपने पुत्रको कटवाय अपनी राज्यभक्ति प्रकाशित की, वरन् एक होनहार राजाके प्राण बचायकर इतिहासमें अपना नाम अमर करगई।

रानी कलावती।

अपने स्वामियोंके निमित्त प्राण अर्पण करनेवाली वीर नारियोंमें रानी कलावतीकाही चरित्र अलौकिकहै अतएव उसकाभी वर्णन करना अत्यावश्यकीय है। यह राजपत्नी जो कि राजपूतानेके एक छोटे राज्यकी रानीथी अपने बडे पराक्रमद्वारा इतिहासमें अमर होगई है।

दिल्लीपति अलाउद्दीन खिलजीने जब उसके छोटे राज्यपर चढाई की तब रानी कलावती सैनिक वस्त्र व शस्त्रोंसे सज्जितहो अपने पति-राजा करणके साथ युद्धभूमिमें लडने गईथी, और एक शूरवीर सिपाहीकी समान उसने युद्ध कियाथा। आरंभमें जब खिलजीकी सेनाने एकसाथ विकरालरूप धारणकर राजा करणके ऊपर आक्रमण किया उससमय वह अपने पतिसे आगेवढ तत्कालही पतिके वदलेमें युद्ध करने लगी और शत्रुसेनामें इसप्रकार युद्ध किया कि उसका सेनापति अत्यन्त घायल होगया और राजा करणकी रक्षा हुई।

करणसिंह तथा कलावतीने अत्यन्त शूरताईसे शत्रुसेनाके वहुतसे सिपाहियोंको मारडाला,परन्तु तौभी खिलजीकी सेना कम न हुई।वरन् और २ भी शूर सिपाही आय २ कर वडी शूरतासे युद्ध करने लगे। पहिले युद्धोंमें विषसे बुझे हुए अस्त्रोंकाभी प्रयोग होता था। करणपर उससमय एक ऐसी तलवारका प्रहार हुआ कि जो विषसे बुझी हुईथी। इस कारण उसको वडी व्यथा हुई, परन्तु रानी कलावती साहस और दृढतासे सेनाके सन्मुख युद्ध करनेलगी। उसने अपना इतना वाहुवल दिखाया कि थोडीही देरमें शत्रुकी सेना कायर होकर नाश होगई और करण तथा कलावती अपनी राजधानीमें आये। करणके घावको भरनेकी वहुत औषधियें कीगईं परन्तु तलवारका विष इतना तीक्ष्णथा कि उन औषधियोंने कुछभी गुण न किया। जो यह विष समस्त शरीरमें फैल जाता तो निश्चयही प्राण चले जाते; परन्तु अभी उस विषका प्रभाव शरीरमें नहीं फैलाथा अतएव अत्यन्त वुद्धिमना हकीम और विद्वान वैद्योंने चिकित्सा करके कहा कि, "जो कोई इस घावके विषको चूसे तो राजाके प्राण वचें परन्तु विष चूसनेवाला तो मरही जायगा।" राजा करण ऐसे तुच्छ हृदयका न था कि अपने प्राण वचानेके निमित्त दूसरेको नाश करता।वैद्योंसे उसने स्पष्ट२कहदिया कि जहां मेरा मरना कल होताहो वहां चाहे आजही हो परन्तु यह उपाय तो मैं कभी न करने दूंगा हां यदि ऐसी कोई औषधिहो कि जिससे किसीका जीवभी न जाय

और मेरा बचाव हो तो उसको करो। वैद्योंने हांमें हां मिलाकर कुछ औषधियें कीं, परन्तु आरोग्य होनेके बदले राजा प्रतिदिन पीड़ित होनेलगा, क्योंकि धीरे २ उसके रुधिरमें विषका प्रवेश कर रहाथा। रानी कलावती पतिके दुःखमय चित्रको न देखसकी। उसने नम्रता-पूर्वक पतिसे स्वयं विष चूसनेकी प्रार्थना की परन्तु जो राजा एक दीन मनुष्यकेभी विष चूसनेसे निषेध करताहै, क्या वह अपनी प्राणप्यारीको विष चूसनेदेगा? राजाने उसके आग्रहको न माना वरन् रानीके भक्ति-भावकी प्रशंसा की। परन्तु पतिप्राणा कलावती इससे प्रसन्न न हुई। और प्राणपतिके दुःखको न देख सकी। अंतमें जब राजानिद्रावश हुआ तब स्वयंही उसके घावके सब विषको चूसलिया।

विषका विकार नाश होजानेसे राजा करण आरोग्य हुआ परन्तु अपनी प्रियपत्नीको मराहुआ देख उसके सद्गुणोंका स्मरणकर २ रोनेलगा। बाहरके एकविषैले घावसे तो उसको छुटकारा हुआ परन्तु हृदयमें वियोगके एक दूसरे घावसे वह ऐसा घायल हुआ कि जिसके आरोग्य करनेकी कोईभी औषधि न मिली। मरनेके समयतक 'कला-वती कलावती' कर उसने अपने जीवनको बिताया। दूसरे मनुष्योंके आग्रह करनेपरभी उसने दूसरी स्त्रीसे विवाह न किया। इस कला-वतीका जीवभी कोमल हृदय हिन्दूबालाओंके समान हृदयपर प्रभाव करनेवालाहै।

महारानी कर्मदेवी।

हिन्दू वीरांगनाओंके अद्भुत चरित्रोंमें मेवाडकी महारानी कर्मदेवीका वृत्तांतभी जाननेयोग्यहै। सन् ११८३ ई० अर्थात् आजसे ७०० वर्ष पहिले जब शहाबुद्दीनगोरीने भारतवर्षकी दूसरी चढाईमें शहर-दिल्लीपर आक्रमण कियाथा, उससमय अपने मित्र दिल्लीपति पृथ्वीराज चौहानकी सहायता अथवा स्वदेश रक्षाके निमित्त मेवाडके महाराना समरसिंह अपनी सेनाले पानीपतके मैदानमें आगे बढ़ये। इस युद्धमें पृथ्वीराज चौहान और राना समरसिंहने तीन दिनतक अपने पूर्ण

पराक्रमसे संग्राम कियाथा, किन्तु अन्तको चौथेदिन निरुपाय हो शरीर त्यागदिया । इसवार शहाबुद्दीनगोरीकी विजय हुई, उसने एक-वारही दिल्लीपर अधिकार करलिया। तदनन्तर मेवाडपरभी चढाई की। मेवाडमें हाहाकार मच उठा । मेवाडकी गद्दीका अधिकारी करण सिंह उससमय वालकथा और राज्य विना राजाके अनाथके समान होरहाथा।

राना समरसिंहके मरनेपर रानी कर्मदेवी गद्दीपर वैठकर अपनी वैधव्य स्थितिसे समयको वितारहीथी । परन्तु दुःखसे कायर होकरभी वह असावधान न थी यद्यपि उसके हृदयमें दुःखका घाव ताजाही था। मेवाडपतिके मरनेसे उसकी संचितकीहुई प्रतिष्ठाकी कीर्तिको रखनेके निमित्त रानी स्वयंही यत्न करने लगी और एक शूरवीर सिपाहीके वस्त्र पहिन युद्धभूमिमें जा खडीहुई 'समर्थको सहायता प्राप्तही होतीहै, इस कहावतके अनुसार वहुतसे राजपूत प्रचंड आवेशसे उभर कर रानीके साथ युद्धभूमिमें विराजमान हुए । प्रचण्ड युद्धके उपरांत रानीकोही अंतिम विजय मिली और राजपूतोंने शहाबुद्दीनके कुमार कुतबुद्दीनको आमेरसे आगेतक भगादिया । उसकी समस्त सेना कटगई और अन्या-याचरण तथा लूटमारके भयसे मेवाडकी प्रजाने छुटकारा पाया ।

इसप्रकार विधवा होकर वीरनारीने इस राज्यकी रक्षाकर यश प्राप्त किया धैर्य तथा पराक्रमके कारणही इतिहासोंमें उसका नाम अमर होगयाहै ।

मीनल देवी ।

चन्द्रपुरका राज्य कर्नाटक प्रांतमेंहै वहांके राजा जयकेशीकी पुत्री यह मीनलदेवीथी । अठारहवर्षकी अवस्थामें उसका व्याह गुजरातके राजा करणके साथ राजपूतरीतिके अनुसार खांडेसे हुआथा । इससमय वह एक कुलीन कुलवधूके योग्यही अनेक उत्तमगुणोंसे शोभितथी; और देखावभी साधारणरीतिसे भलाथा । जब वह विवाहितहो पाटन-

में आई, तब उसके स्वरूपका वर्णन जैसा भाटके मुंहसे करणने सुनाथा वैसा उसको न समझकर अत्यंत शोकित हुआ और क्षणभरमेंही उससे विमुख रहनेलगा। इसकारण रानी मीनलदेवी तथा राज्यमाता उदयमतिकोभी अति संताप हुआ और वह कुमारको प्रेममर्यादापूर्वक समझाने लगी; परन्तु करणके मनमें उसका कुछभी प्रभाव न हुआ। उसने नतो दूसरा विवाहही किया और न किसी दूसरीस्त्रीके प्रेमपाशमेंही पडा। संसारसे विरक्त होगया, उसको सैकडों मनुष्योंने विवाहकरनेको कहा परन्तु उसने किसीकीभी वात न मानी। कुमारकी ऐसी दशासे निर्दोष मीनलदेवीको महासंताप होनेलगा। वह रात दिन पडीहुई वारंवार श्वास लिया करती और भाग्यपर हाथ रख मनहीमनमें झुलसा करतीथी।खानपान या वस्त्र अलङ्कार कुछभी उसे भला न लगताथा।राज्य-सुख वैभव विषके समान लगतेथे और चित्त कहींभी न लगताथा।

किसीप्रकारसेभी कुमार करणके विचारमें परिवर्त्तन न होता देखकर मीनलदेवी तथा राज्यमाता उदयमतिने आगमें जलकर मरजानेका विचार किया। उनके इस विचारको सुनतेही योग्य प्रधानोंने समझा बुझाकर निषेध किया और इस घोर कृत्यसे रोकलिया और कोई यत्न करके स्त्री पुरुषके वीचमें प्रेम करादिया। यद्यपि मीनलदेवी वहुत रूपवान नथी परन्तु शिक्षित विद्वान बुद्धिमान और राज्यमंदिरकी शोभा वढानेवाली लक्ष्मीदेवीके समानथी, इन गुणोंका कुमार करणको पूर्ण अनुभव हुआ और दैवयोगसे या मीनलदेवीके प्रारब्धवलसे स्त्री-पुरुषोंमें ऐसा प्रेम उत्पन्नहुआ कि जैसा अनन्यप्रेम कुछही एक भाग्यशाली मनुष्योंको प्राप्त होताहै। गुणवती सति मीनलदेवी-नित्य मधुर २ गान गारकर नवीन २ आनंद उत्पन्न कराने लगी और करणके वैरागी चित्तको शुद्ध शृङ्गारी वनाडाला। राजनीति और राज-काजका मीनलदेवीको अच्छा अनुभवथा इसकारण राज्यप्रकरणी इतिहासोंकी सुन्दर वार्त्तासे पतिको प्रसन्न रखती; इसही प्रकार उसके हृदयमें अत्यन्त दयाभीथी इसकारण नित्य दान धर्मके कामोंका और उस से होतेहुए लाभोंका वर्णन सदैव करणसे किया करतीथी।

कुछेक दिनोंके उपरांत इस उत्तम भार्यासे सिद्धराज जयसिंहका जन्म हुआ । जब जयसिंह दशवर्षका था तब राजा करणका परलोकगमन हुआ । उस समय राज्यकार्य चलाने तथा कुमारके शिक्षित करनेका वृहत् कार्य मीलनदेवीने स्वयंहीं उठाया । पूर्ण राज्यभक्त, विद्वान और व्यवहार कुशल तीन सभासदोंकी परीक्षाकर राज्यकार्यके भारका कितना एक अधिकार उनके हाथमें सौंपा और स्वयंभी दृढतापूर्वक उनके कार्योंपर दृष्टि रखनेलगी । जैसा कुमारको विद्या पढाय शिक्षित करनेमे चेष्टा करती वैसाही उसका शरीर दृढ करनेमेंभी ध्यान रखती । इसकारण उसके मनोवलके साथ २ शरीर संपत्तिमेंभी अधिकता हुई सद्गुण सम्पन्न एक राजकुमार वनाथा । पन्द्रह वर्षकी अवस्थामें राज्य माता मीनलदेवीके साथ सिद्धराजने समस्त गुजरातमें भ्रमणकर प्रत्येक स्थानोंकी जानकारी प्राप्त करली और इसही वीचमें मनुष्योंके लाभ पहुँचानेको वावडी, कुए, तालाव, धर्मशाला आदि बनाकर धर्मके कार्यभी किये तदनंतर वह २ श्रेष्ठकार्य करने लगा कि जिससे प्रजा सन्तुष्ट और सुखीरहे । इस धर्मवीर कुमार सिद्धराजने इन सव वातों-को ऐसा कर दिखाया कि जिससे पवित्र राजमाता मीनलदेवीकी कीर्तिमेंभी अधिक वृद्धि हुई ।

इस वातको हुए आठसौ वर्षसेभी अधिक वीतगये, परन्तु उसका स्मरण स्तंभरूपी कार्य समस्त गुजरातकी पवित्रभूमिमें अवतक वैसाका वैसाही स्थिरहै । विरक्त हुए पतिके मनको समाधान करनेमें, उसकी ओर अचलभक्तिभाव रखनेमें, विद्यानीति धर्मसे प्राणपतिको प्रसन्न करनेमें, वालकको शिक्षित और शूर करनेमें तथा व्यवहार कुशल बनानेमें, निर्मल नीतिके अनुसार धर्मकरनेमें तथा परमार्थके यथार्थ काम कर जनहितकारी होनेमें महारानी मीनलदेवी धर्मपत्नियों तथा राज्यपत्नियोंमेंभी दृष्टांतरूप होगई हैं । सिद्धराजकी उदारता और धार्मिक वृत्तिको देख अनुभवी मनुष्य दानेश्वरी राजा करणकी उपमा

देने लगे और माता मीनलदेवीकी स्तुति कर २ अन्य बालकोंके उद्देश्यसे कहने लगे कि,–

जननी जनमहि हरिभगत, क्या दाता क्या शूर।
नाहिंतो रहवहि बांझनी, नाहिं खोवे निज नूर।

सर्दार बाई।

गुजरातकी राजधानी अनहलपुर पाटनसे ईशानकोणकी ओर बसेहुए रानीपुरनामक नगरमें कल्याणवंशके राजपूत रहतेथे। उसवंशके और उसेही नगरके राजा खेमराजकी पुत्री यह सर्दारबाइ थी. उसके जन्मआदिका स्पष्ट २ वृत्तांत नहीं जान पडता, परन्तु वह समय सन् १२०० ई० का था। इस समय गुजरातका सूबा दिल्लीके बादशाहके अधिकारमें था परन्तु तौभी राजपूतोंके अधिकारमें बहुतसे छोटे बडे स्थानथे।

पाटनमें बादशाही प्रतिनिधि (सूबेदार) रहमतखां कर देनेवाले राजाओंसे कर उगाहनेको कुछ थोडीसी सेना लेकर रहताथा।एकसमय वह कर उगाहते २ रानीपुरमें आ पहुंचा और शहरके बाहर सेनासहित अपना डेराडाला। खेमराजने उसका भलीप्रकारसे सत्कार किया। सूबेदारके आनेसे एक दिन शहरके बाहर खेल तमाशे होरहेथे। उसके देखनेके निमित्त शहरके समस्त मनुष्य बाहर गये, केवल स्त्रियेंही स्त्रियें वरन् उनमेंभी मुख्यकर कुलीन स्त्रियेंही शहरमें रहगईथीं। पुरुषोंके बाहर जानेपर स्त्रियोंको स्वच्छन्दतापूर्वक भ्रमणका समय मिला। इससमय अवसर पाय एक नवयोवना बालाभी अपने साथ एक दो सहेलियों तथा अपने छोटेभाई बहिनको ले महलकी समीपस्थ फूलवाटिकामें सन्ध्याके समय बैठीथी। सूबेदार रहमतखांभी इसही समय शिकार करके लौटा आताथा उसके साथ केवल एक सवारथा। शहरकी शून्याकार स्थितिके देखनेकी इच्छासे तथा स्त्रियोंके स्वरूप देखनेकी लालसासे वह अपने घोडेको शहरमेंसे लेगया। जब वह रंगमह-

लके समीप आया तो पहिले उसकी दृष्टि इसही नवयौवनापर पडी। उसके देखतेही आँखें पलही उठीं और शहरकी दूसरी सुन्दरताको न देखतेहुए अन्धेके समान अपने डेरेको चलागया । सवारको आताहुआ देख उस वालाने महलमें जानेके निमित्त शीघ्रता की, परन्तु देखते २ वह विचारी यवनोंकी दृष्टिको विषय होगई । शीघ्रता करनेसे उसके माथेकी साडी खिसकगई इसकारण रहमतखां उसके मुख और वेणीको भलीप्रकारसे देखसका । वह अपने डेरेमें तो गया परन्तु चित्ततो उस सुन्दरीकीही ओर खिंचगयाथा इसकारण व्याकुलचित्तसे इधर उधर घूमने तथा अपने सेवकोंद्वारा उसके प्राप्त करनेके यत्नको खोजने लगा। अन्तमें खेमराजके पुत्र मूलराजकी मूर्खतासेही अपनी कार्यसिद्धि के होनेका विचार किया, कौतुक समाप्त होनेके पीछे वृद्धराजा खेमराज-को तो नगरमें भेजा और मूलराजको अपने डेरेमें चित्त वहलानेके निमित्त रहजानेको कहा, अतएव मूलराज वहीं रहगया । तदनन्तर उस यवनने उसे भली भांतिसे खाने पीनेकी लहरमें चढाय, मदिरा पिलाय जुआ खिलानेको बैठाला । हारजीत होते २ जुआ वढगया, और एकपर एक वाजी होने लगी । अन्तको एक वाजीमें रहमतखांने कहा कि,–जो इसवार तुम जीतो तो मैं तुमको उत्तरदेश जीतमें देदूंगा और जो मैं जीतूं तुम अपनी वहिन मुझको जीतमें देदो । नशेमें उसने इस दारुण प्रतिज्ञाको स्वीकार किया । खेलते २ वाजीके अन्तमें मूलराज हारा । तदनन्तर कुछ कालमें जब चित्त स्वस्थ हुआ तब वह अपने घरगया ।

जिस समय मूलराज घर आया उस समय अर्द्धरात्रि होगईथी। उसकी रानी रूपादे पतिके आनेकी वाट देखरहीथी। मूलराजको झूमते झामते आता हुआ देख रानी मनमें कुछेक हँसी, परन्तु नियमा-नुसार उसका सत्कार न किया । वह विछौनेमें लेट तो रहा,परन्तु अपने किये हुए कृत्यके विचारमें ऐसा पछिताया कि उसे निद्रातक न आई । वह इसही धुनमें पडगया कि यह वात अपनी स्त्रीसे कहूं या नहीं।

सोचते २ अन्तमें विचार किया कि प्रातःकालतो यह सब बात प्रगट होही जायगी, अतएव अब कहनेमें हानिही क्याहै ? ऐसा निश्चयकर उसने छावनीमें बीती हुई सब वार्ता शोकातुरहो रानीसे कही इन बातों के सुनतेही रानी रूपादेके रोम २ में क्रोध व्याप्त होगया और मूलराज का तिरस्कार करतीहुई बोल उठी; अरे विक्षिप्त ! तेरे जीवनका धिक्कार है ! तुझसे विवाहकर मैंने अपने कुलको लजाया, एक नीचसे नीच मनुष्य भी ऐसा कार्य नहीं करता कि जैसा तूने राजपूत होकर किया है, तूने समस्त राजपूतोंके कार्योंमें कलंक लगादिया। जिस कल्याणवंशमें आजतक एक भी छिद्र न था, उसम तुझ सरीखे कायर मनुष्यने एक बड़ीभारी अपकीर्ति लगाई । तुझसमान स्वामीकी रानी कहलानेकी अपेक्षामें अपने वैधव्यपनेको भला गिनती हूं ! जा ! आजसे अपना मुख काला कर, अब तुझे अपनी सूरत न दिखाना जबतक शूरराजपूतोंके अङ्गके टुकड़े २ न होजा-यंगे तबतक सूबा और तेरे समान कायर पुरुष सर्दारबाईकी ओर आंखतक नहीं उठा सकते हैं ।

रानी रूपादे उसका इसप्रकारसे तिरस्कारकर वहांसे उठ तत्काल राजमहलमें चलीगई। दूसरे दिन प्रातःकाल रहमतखांने सर्दारबाई को बुलाभेजा और पालकी, म्याना, बाजा तथा सिपाही राजमहलके नीचे आ खड़े हुए । सर्दारबाईने प्रातःकाल उठकर झरोखेसे देखा तो सुखपाल तथा सवारोंको देखकर आश्चर्यमें होगई। उसने अपनी भौजाई रानी रूपादेको बुलाकर पूछा कि, "यह क्या तमाशा है।" देखतेही रानी रूपादे समझगई और विचारपूर्वक कहने लगी कि, "जो मैं ऐसा जानती कि यह होनेवाला है तो रात्रिकोही ससुरजीसे बातचीत करती, परन्तु तोभी कुछ खटका नहीं है, सूबा कुछ वृथाही राजाओं-की प्रतिष्ठापर हाथ न डालेगा। यदि डालेगा तो बड़ी विपत्ति होगी।" ऐसे विचारमें निमग्न हुआ देख सर्दारबाई उससे बारंबार पूछने लगी तब अंतमें रानी रूपादे बोली कि,-"बहन ! तुमसे कुछ कहनेको भी

जीभ वाहर नहीं निकलती और विना कहे कार्य भी नहीं चलता।" यह कह रात्रिका समस्त वृत्तांत सुनाया भौजाईकी वातें सुनातेही उसके मनमें भयहुआ सारा शरीर कांपनेलगा, परंतु उसमें यथार्थ रजपूतपन था इसकारण धैर्य्य धरकर वोल उठी "भाभी? यह कुछ सरल वात नहीं कि वह मुझे अपनी कर मेरी लाजले क्योंकि राजपूत अवभी जीवितहैं।" ऐसा कह वह अपने घरकी एक कक्षामें जा वैठी और वहां पछिताने लगी। वह अपने रूप और लावण्यको धिक्कार देनेलगी और भाईकी मूर्खतापरभी शोचकिया।

रहमतखांके वारंवार मनुष्य जव भेजनेपरभी कुछ कार्य न निकला तव उसने खेमराजको पत्र लिखा और उसमें अपनी जीतमें प्राप्त हुई, उसकी कन्याको मांग पठाया! पत्र पहुंचतेही राजपूतोंमें खलवली पडगई और वे सव अपनी लाज तथा कीर्ति रखनेको शस्त्रवांध वाहर निकलआये और उत्तरमें केवल सर्दारवाईके निमित्त आयेहुए तुर्कको वांधरक्खा! छावनीमें इसवातका समाचार पहुंचतेही रहमतखांने कुछ मुसलमानोंको ले रानीपुरपर आक्रमणकिया। दुर्गका द्वार वंद कर राजपूत लडतेथे और शत्रुओंको घुसने नहीं देतेथे। जव किसीप्रकारसेभी रहमतखां युद्धमें नजीतसका और उसके वहुतसे सिपाही मारेगये तव मूलराजके तोडनेका विचार किया। उसको भय तथा लोभ दिलाया। अंतमें मूलराजने पृथक हो फूटकर दुर्गका जीर्णभाग वतादिया, कि जिसको तोडकर यवनशहरमें घुस-पडे। इस व्यवस्थाके जानतेही राजपूत पीछे लौटे। इतनेमें वहभी द्वारखोल टीडिदलके समान आय परस्पर तलवार चलानेलगे। सर्दारवाईके महलके आसपास खुलेशस्त्र हाथमें ले राजपूतवालागण क्षत्रियाणिभी खडीथीं। मुसलमानों तथा क्षत्रियोंने वडाभारी युद्धकिया परन्तु अंतमें उन सव मनुष्योंको हटाय यवनलोग महलमें घुसे क्षत्रानियोंभी भाला, कुहाडी, तलवार तथा संगीनआदि जो अस्त्र शस्त्र हाथमें आये उनको ले वहादुरीसे लडनेलगी। उसमें मूलराजकी रानी रूपादेने

मुख्यभाग लियाथा । जिसने आँगनसे बाहर पैर नहीं निकाला, वह माँथेपर खुले हुए केश फैलाये, कालिकाके समान स्वरूप दिखातीहुई, असुरोंसे युद्ध करती स्वयंही शस्त्रोंका प्रहार कररहीथी । उसके समस्त वस्त्र रक्तसे भीगगयेथे और 'मारो ! मारो' के अतिरिक्त और कोई दूसरा शब्द मुखसे बाहर नहीं निकलताथा । वह भ्रकुटी चढाय क्रोधपूर्वक असुरोंके मस्तकोंको खपाखप काटरहीथी । कितनीदेरतक बराबर कडा युद्ध होतारहा परन्तु उन शूरवीर बालाओंने पीठ न दिखाई । इतनेमें मूलराजभी घोडेपर बैठाहुआ चौकमें आपहुंचा । उसको देखतेही जैसे देवी महिषासुरके मारनेको उछली वैसेही बडे आवेशसे रानी रूपादेने• हाथमें नंगीतलवारले उछलकर उसपर प्रहार किया । उसने प्रहारतो किया परन्तु दैवयोगसे वह घोडेकी गर्दनपर लगा और मूलराज बचगया । अपनीस्त्रीकी तलवार चमकती हुई देखकर मूलराज बोल उठा,– "हैंहैं ! राणीरूपादे ! यह क्या ? यह तो मैं हूं।" ऐसा कह वह अपनी तलवारले उसे रोकनेगया, परन्तु उसका एकभी शब्द न सुनकर रानीने फिर उसपर प्रहारकिया । परन्तु उस प्रहारकेभी खाली जानेपर रूपादेने कहा,-"जा कायर ! तेरी आयुने तुझको बचायाहै । तुझ जैसे कायरके ऊपर फिर प्रहार करना मेरी समान राजपूतानियोंको नहीं शोभादेता, नहीं तो देखलेती कि तू कैसे जीवित जाताहै !"

इतनाकह उसने अपने हाथसे अपने पेटमें कटार मारली । क्योंकि यदि ऐसा न करती तो दुष्टोंके हाथमें जीवित बंदी होजानेका समय आन पहुँचाथा । अंतमें राजपूतोंके हारजानेपर रहमतखां हाथीके ऊपर बैठ महलमें आया और वहां पहुंचतेही वृद्धराजा उसकीरानी, सर्दारबाई तथा मूलराजको बंदीकर अपने डेरेको गया और वहांसे एक साथ पाटनकी ओर सिधारा ।

चारोंको बंदी बनाय रहमतखां पाटनकीओर चला । वह योग्य स्थानोंपर डेरा करताथा चारोंजन पृथक् २ रक्खे जातेथे, उन सबपर चौकी पहरा रहता था । सर्दारबाईके ऊपर उसका चित्त लगाही रहाथा, परन्तु छेड़ीहुई बाघिनके सामने जानेका उसको साहस न हुआ ।

जब मार्ग चलते हुये तीनदिन बीतगये तब चौथे दिन रहमतखांने सर्दारबाईसे कहला भेजा कि,—"आजरात मैं तुम्हारे डेरेमें रहूंगा ।" यह सुनकर सर्दारबाई पाहिले तो दुःखितहुई परन्तु फिर पीछेसे धैर्य धर उसके छलनेका उपाय रचा । सूबेदारको प्रसन्नतापूर्वक अपने डेरेमें आनेको कह स्वयंभी शृंगार करनेलगी । इस समाचारके सुनतेही खांसाहबने भी अपने बनावमें न्यूनता न रक्खी सायंकालको सज सजाकर सर्दारबाईके डेरेपर पहुंचे । तम्बूके भीतर जातेही वह स्तब्ध हो जड़के समान निश्चेष्ट सा खड़ाहो रहा सर्दारबाईने कपटपूर्वक उस खड़ेहुएका सत्कारकर पलंगपर बिठाया और स्वयं उसके सामनेखड़ी हो रही । खांसाहब अपनेको बहिस्तमें समझनेलगे । हास्यविनोदकी बातोंहीबातोंमें सर्दारबाईने उसे पागल बना दिया और अपने फंदेमें फँसा कुमारीने कहा कि, "बिना इसका प्याला पिये प्रेमका रंग नहीं उत्पन्नहोता, अतएव मद्य मँगाना चाहिये । कुमारीके यह कहतेही शराब और गिलास लानेकी आज्ञादी आज्ञाहोतेही गिलास और शराब आ पहुँची । सर्दारबाईने गिलासभरकर खांको दिया आनन्दकी लहरमें उसने भलीप्रकारसे शराब पी । जब सर्दारबाईसे पीनेको कहा तब सर्दारबाईने उत्तर दिया कि मुझे इसके पीनेकी टेव नहींहै अतएव क्षमा कीजिये, यह सुनकर रहमतखां कह उठा कि टेव पड़नेपर तो इसे प्रसन्नता पूर्वक पिया करोगी जिस दुष्ट इच्छासे यह बैठाथा, उसकी वही मनोवृत्ति चंचलहुई और वह सर्दारबाईका स्पर्श करनेको उठा। परंतु सर्दारबाई तत्कालही खिसक गई और बोली कि,—"आजका दिन जानेदो; क्योंकि मेरे लियेहुए व्रतमें केवल आजकाही दिन शेष है कलसे कार्य आपकी इच्छानुसार होगा ।" अतएव उसकी बातको न टालकर सूबेदार शान्त हुआ, और मद्यकी लहरोंमें निमग्न होताहुआ पलंगपर जा सोया ।

सर्दारबाईने पहिलेसेही संकल्पकर रक्खा था कि इसके निद्रावश होतेही मैं भागजाऊंगी मेरे भागजानेसे वृद्ध माता पिताकी दुर्दशा

तो होगी, परन्तु मेरा सतीत्वधर्म तो नष्ट होनेसे बचेगा । खांको निद्रावश देख उसने चुपचाप बाहर आकर देखा तो जहां तहां पहरेदार भी सोरहे थे। उसने एक सिपाहीके वस्त्र उतार धीरेसे तम्बूमें आय पहिन लिये। फिर पीछे तम्बूको फाड़ उसमें एक छिद्रकर धीरे २ वहांसे चली गई ! वह रातोंरात दशबीशकोस निकल गई। प्रातःकाल होते २ वह एक पहाड़ी नालेके समीप पहुंची, तब उसने अपने वस्त्रोंको छोड़ जोगनका वेश धारण किया। इतनेमें फिरते २ उसे एक वृद्ध संत पुरुषका आश्रम मिला, वहां जाकर गुप्तरीतिसे आश्रम लिया।

प्रातःकाल होतेही खां उठकर देखताहै तो केवल वस्त्रही वस्त्र तम्बूमें पडे हुएहैं और सर्दारबाईका पता नहीं ! यह देखतेही पहरेदारों पर अत्यन्त क्रोधित हुआ, परन्तु अब क्या वशहै ? तत्कालही उसने कितने एक सवारोंको तइयारकर उनके साथ मूलराजकोभी उसकी खोजको भेजा और स्वयं पाटनकी ओर गया।

योगिनीका वेशधारण किये सर्दारबाई महात्माके आश्रममें भस्म लगाये बैठीथी। इतनेमें कोई एक राजकुमार शिकारसे श्रमितहो विश्राम लेनेको वहां पहुंचा। वह इस नवयौवनाबालाको जोगिनी बना हुआ देख विस्मित हुआ, परन्तु उससे कुछ पूछनेका अवकाश न मिला। इतनेमें महात्मा समाधिसे उठ अपने नित्यकर्म करनेके निमित्त आश्रमसे बाहरगये। एकांत समय देख राजकुमारने बालासे उसका वृत्तान्त पूछा। यह सुनतेही वह कुमारी गद्गद होगई और उसके नेत्रोंमें जल भरआया, उसने उससे अपनी समस्त विपद् कहानी कह सुनायी। पूछनेसे पहिले दुःखमें भाग लेनेका राजकुमारने वचन दियाथा इसकारण सर्दारबाईका वृत्तान्त सुनतेही वह दुःखिततो हुआ परन्तु क्षत्रियपुत्र होनेके कारण आवेश चढ आया, उसने सर्दारबाईके सन्मुख प्रतिज्ञाकी कि, "आजसे तीन अठवाडेके उपरान्त पाटनमेंसे बादशाहीकी जड न उखाड डालूं तो फिरसे शस्त्र न बांधूगा।" उसकी वीरतासे भरी ऐसी वाणी सुन सर्दारबाईके मुखपरसे शोककी घटा हटगयी और दोनोंजन

दाम्पत्यभावमें अनुरागीहुएउसही समय उसने मानासिक ि
कार किया । इतनेमें योगिराजने वाहरसे आकर राजकुमा
दी । पृथक् होनेमें यह निश्चय हुआ कि,—"सर्दारवाई तीन
पीछे आरासुरी अम्बा माताके मार्गमें इस राजकुमारकी
इसप्रकारसे प्रतिज्ञा कर वह चन्द्रावतीनगरीका राजकु
हं चला । आरासुरीधाममें पहुंचनेके निमित्त जो वचन हुअ
वीतजानेपर दो तीन दिनके उपरान्त उस योगिनीने यो
आश्रमको छोडा । चलते २ सायंकाल होगईथी और वह
एक नालेको पारकर रहीथी, कि इतनेमें उसने घुडसवारों
देखा । देखतेही उसके चित्तमें संदेहहुआ और समझलिय
मेरेही पकडनेको आते होंगे, सवार कुछ उसके पकडनेको
परन्तु अनायास भेंट होगई । नाला उतरते समय ज्योंही
पीछेको देखा तैसेही एक मनुष्यको संदेह हुआ, दूसरेने पी
और तीसरेने उसको पकडलिया । पीछे उसको बांधकर थे
गांवतक लाये । वहां उसे लकडीके एक छिद्रवाले दृढ संदू
संदूकको गाडीके ऊपर डाल वहांसे चलते हुए ! मार्गमें
आया, वहां सव सिपाही खानेपीनेको वैठेउससमय वह स
का परामर्श करनेलगे कि इस पराक्रमका पुरस्कार किसेमि
परामर्शमें वात वढते २ एक दूसरेसे झगडा होनेलगा । झ
परस्परमें मारपीट की नौवत आगई अंतमें एक वलवान
सवको मारकाटकर गाडीमें वैठे हुए गाडीवान तकको मार
मियांजी अकेले वैठे हुए अपने पुरस्कारका विचार
कि इतनेमें एकचीता पीछेसे आय मियांजीपर आक्रमण
भोग लगागया । रात्रिमें उसशिकारी पशुने सर्दारवाईपर
किया, परन्तु सन्दूक दृढथी, इसकारण वह गाडीपरसे गिरनेप
और सर्दारवाई ईश्वरेच्छासे वचगई दिन चढतेही वहांपर
नोंके झुंडके झुंड आने लगे । उनके उपद्रवको देख पहाडी

नामक जंगली मनुष्य वहांपर आये और उस संदूकको देख आश्चर्य करने लगे। पहिलेतो वहलोग चौकन्ने हुए परन्तु फिर सर्दारबाईके बुलानेसे समीप आये और उसको वैसीकी वैसीही संदूकमें बन्दकिये अम्बाभवानीके समीप लेगये वहां पहुँच सन्दूक पुजेरीको जा सौंपा। पुजेरीने ज्योंही सन्दूकखोला त्योंही सर्दारबाईने निकल कर पुजेरीको अपना हार देदिया। पुजेरीने भाडंडोंको कुछ दे दिलाकर बिदाकिया और सर्दारबाईको गुप्तरीतिसे अपने अधिकारमें रक्खा।

नियतसमय पूर्णहोजाने पर वचन पालनेमें तत्परहुआ वैरीसिंह पहिलेस्वयं न आया वरन् दश राज पूतसवारोंको सुखपालले अम्बाजीमें सर्दारबाईके लेनेको भेजा। पुजेरीने उन्हें सर्दारबाईको न दिया। इसकारण वैरीसिंह स्वयंही आया, परन्तु पुजेरीने उसेभी पहिले तो कुछ खोज न दी परन्तु जब उसको पूर्णनिश्चय होगया तब वह वैरीसिंहको पृथ्वीके भीतरकी एक सुरंगमें लेगया। वैरीसिंहने राजकन्याको उसके वस्त्र दिये और पहिनकर बाहर आनेको कहा, परन्तु यह बात सर्दारबाईने स्वीकार न की, वह पुरुषका वेशधारण कर युद्धमें साथचलनेको तइयारहुई। वरन् अपनेही हाथसे रहमतखांको मारनेका प्रणकिया। आरासुरी अम्बाभवानीकी स्तुतिकर दोनोंने अपने २ घोडोंको आगे चलाया और अपनी सेनासे मिल एक साथ पाटनमें आये।

उसही दिन सर्दारबाईके माता पिताको रहमतखांने फांसी देनेकी आज्ञादीथी क्योंकि उनसे मुसलमानी धर्मको ग्रहण करनेकेलिये कहा परन्तु उन्होंने स्वीकार न किया। मनुष्य तथा खाँसाहब मैदानमें और यह दोनों मनुष्य फांसीके तख्तेपर खडे किये गयेथे। इस दृश्यको देखतेही वैरीसिंहने अपनी सेनाके दो भागकर एकमें सर्दारबाईको और दूसरेमें स्वयं रहकर उन सबपर आक्रमणकिया। उनमेंसे सर्दारबाईने अपनी सेनाको आगे बढाकर रहमतखांको घेर लिया और स्वयंही उस दुष्टके शिरको अपने हाथसे काट गिराया। मुसलमानगण भागने लगे परन्तु उसने सबको बीन २ कर मारा और माता पिताको छुडालिया।

फिर पाटनके ऊपर अपनी जीतका डंका वजवाय दुहाई फेरवादी। मनुष्योंने इस शूर राजकुमारी सर्दारबाईका पट्टाभिषेककर उसकोही गद्दीपर बिठाया। सर्दारबाईके माता पिताने बैरीसिंहके पराक्रम तथा उपकारकी ओर दृष्टिकर मानसिक लग्नसे जुडेहुए जोडेका प्रत्यक्ष विवाहकर दिया। यद्यपि पट्टाभिषेक सर्दारबाईकाही हुआथा परन्तु राज्यका भार खेमराज तथा बैरीसिंहकेही हाथमें था और वही राजकाज चलातेथे।

गुजरातकी बादशाहीका जाना और मुसलमानोंका हारना सुनतेही गुजरातकी लक्ष्मीसे विमुखहुए मुसलमानोंने फिरसे गुजरातपर चढाई करनेका निश्चयकिया और बादशाहने निश्वस्त सर्दार खुसरूखांको पैंतीसहजार मुसलमानोंकी एक वडी सेनादे युद्ध करनेको भेजा। थोडे ही दिनोंमें खुसरूखां चन्द्रावतीमें आ पहुँचा, क्योंकि बैरीसिंहके पिताने भी अपना राजकाज उसकेही हाथमें सौंपदियाथा, इसकारण चन्द्रावतीको ही मुख्यनगर वनायाथा। वह अपनी स्त्री सर्दारकुंवरकोले वापके राजमेंही रहताथा। चन्द्रावतीके समीप आकर खुसरूखांने छावनी डाली और वहांके राजाको यह संदेशा भेजा कि;-यातो कर (खिराज) दो या युद्ध करनेको तइयारहो।" चन्द्रावतीके राजपूत इस वातको सुनतेही युद्ध करनेको तइयार होगये परन्तु करदेना स्वीकार न किया। देखतेही देखते दशहजार राजपूतवीर इकट्ठे होगये और उन्होंने पहाडी मनुष्यांकोभी इसयुद्धका संदेशा भेजा इससे वे भी देशरक्षाके निमित्तयुद्ध करनेको नीचे उतर आये। पांचदिनतक दोनों ओरसे घोर युद्ध होतारहा, परन्तु मुसलमानोंकी सेनासे राजपूतगण विजय न पासके। अंतमें वैरीसिंहकी सेनामें जंगली मनुष्योंकी भरतीहुई, अतएव सेनाका वल वढजानेसे सातवें दिन संध्याको मुसलमानोंकी सेनाहारी। इसकारण खुसरूखांने संधि करनेका वाजा वजवादिया। उसके मनमे ऐसाही निश्चय होगया कि हठी और शूर राजपूतोंके सामने विनाकपट किये में नहीं जीतसकता, अतएव अभी युद्ध वंदरक्खूं और फिर सहायताके

निमित्त सेनाको बुलवाय इनसे युद्धकरूं। यह विचार कर उसने युद्ध बंद करदिया। दो तीन दिनतक युद्ध बंदरहा, इतनेमें सहायताके निमित्त औरभी मुसलमान सेना आपहुंची। सेनाके आजानेपर मुसलमानोंने रात्रिके समयही राजपूतोंपर आक्रमण किया। राजपूत विचारे अभी भोजनपानीभी न करने पायेथे कि इतनेमें युद्ध आरंभ होगया। वैरीसिंहने साहसकर आगे बढ बहुत युद्धकिया तथा राजपूतोंको अत्यंतही उत्साह दिलाया। जिसप्रकार राजपूत उत्साहितथे उसही प्रकार मुसलमानभी आवेश्रम भरेहुएथे। अंतमें बहुतसे राजपूत कटगये और किलेके बाहर रहेहुए सब राजपूत वहीं पर प्रातःकाल होते२मारेगये। वैरीसिंहके भाई मानसिंहने भागकर वैरीसिंहके मारेजानेका समाचार कहा।

मानसिंहके इसवचनको सुनतेही सर्दारबाई मूर्च्छितहोकर पृथ्वीपर गिरपडी मानसिंहने उसपर जल छिडक पंखाकर सावधानकिया। जब मूर्च्छासे जागी तब मानसिंह उससे कहनेलगा कि,—"तुम इतना अधिक—शोक किसकारण करतीहो ? तुम्हारी गद्दी कहाँ जायगी ? रानियोंकी तो गद्दीही सबकुछहै, अतएव शोककरना छोडदो इन्द्र न रहे तो उसमें इन्द्रानीको क्या ? अर्थात् मेरा भाई मरगया तो क्या हुआ ? मतो तइयारहूं ? अब तुम मेरी राजरानीहोगी और मेरे साथ रहकर उससेभी अधिक सुख पाओगी।" मानसिंहकी ऐसी लंपटतायुक्त बातें सुन सर्दारबाईके रोम २ में क्रोधाग्नि फैलगई और वह लाल नेत्रकर बोलउठी कि,—"जो लंपट ! तेरा भाई मरगया है। और शत्रु शिरपर गाजरहाहै ऐसे समयमें इसप्रकारके नीच वचनकहतेहुए तुझे लाज नहीं आती ? तुझ समान कुलांगारको धिक्कारहै जैसे खरहा सिंहनीके भोगनेकी आशा रखता है वैसेही तेरी आशाभी है। सिंहकी गद्दीके ऊपर तेरे समान सियार शोभा नहीं देसकता। जा दुष्ट, मुंहकालाकर ! क्या करूं तू मेरा देवर है ! नहीं तो इस प्रकारकी बात करनेवालेका शिर अभी मेरे हाथसे काटा जाता।" इतनेमें किलेपरसेभी समाचार आया कि:—"वैरीसिंह युद्धमें मारा गया

है अब राजपूत नये सेनापतिको चाहते हैं, क्योंकि मुसलमान पानीकी लहरोंके समान आगेहीको बढे चले आरहे हैं।"

मानसिंहको पीछे लौट आया हुआ देख उसकी माता तथा भौजाईने उसका अत्यन्तही तिरस्कार किया। वैरीसिंहके मारेजानेपर राजपूत कोई नया सेनापति चाहनेलगे, परन्तु नपुंसक व निंदापात्र मानसिंहने कुछभी न सुना। जब मानसिंहने कुछभी ध्यान न दिया तब सर्दारबाईने विचारा कि:-"मानसिंह तो कायर निकला, अतएव मुझकोही क्षत्रीपन रखना चाहिये" तदनन्तर सर्दारबाईने स्वयंही अपनी शूरता तथा पराक्रमके प्रगट करनेको सेनापति होनेका निश्चय किया। उसकी गोदमें आठ महीनेका पुत्रथा उसे सासकी गोदम डाल, आप अस्त्र शस्त्रोंसे सज्जितहो चुटैल हुई बाघिनके समान गर्जना करती हुई अपने केशोंको खोल बाहर निकली, उससमय देखनेसे जान पडताथा कि यह ब्रह्माण्डको निगल जायगी! वह अपने ऐसे स्वरूपको धारण कर, घोडेके ऊपर बैठ, नंगी तलवार हाथमें ले, एक सहस्रवीर राजपूतोंके साथ हो स्वयंही किलेकी रक्षा करनेको विजलीके समान सपाटा भरती वहां आपहुंची। समस्त सेना किलेके आगे आई सर्दारबाईने सबको विभक्तकर किलेके बुर्जबुर्जपर नियत किया। बंदूक तथा तीरकमठोंको ले राजपूत किलेपर तइयार रहे। और स्वयं १०० शूरसर्दारोंको साथले किलेके द्वारपर आखडीहुई। खुसरोखां अपनी सेनाको लाकर क्या देखताहै कि राजपूतभी युद्ध करनेको तइयार खडे हैं। और द्वारमें महाकालीके समान स्वरूपवान् राजपूतबालाभी सजी हुई खडी है। "पाटनकी गद्दीको इस राजपूतानीनेही उखाडा होगा। खुसरोखांको यही अनुमान हुआ तथा उसके विकराल स्वरूपको देखतेही वह बेतके समान कांपनेलगा और उससमय भयसे उसका मुँह बन्द होगया। राजपूतोंके यहांभी बहुत सेनाथी यदि वह मैदानम आकर लडते तो अवश्य जीतजाते परन्तु खुसरोखांने राजपूतोंके उत्साहको देख अपनी बृहत सेनासे किलेको घेरलिया। यह घेरा एक महीने

तकरहा, इसकारण विना अन्नके सब भीतरवाले मनुष्योंमें हाहाकार पडगया। अपनी प्रजाको इस दुःखित अवस्थामें देख सर्दारबाईको अत्यन्त दुःखहुआ। अंतमें उसने शूरसर्दारोंकी सभाकर सबके मारनेका निश्चयकिया। क्योंकि अब अंतमें विना पराजित हुए दूसरा कुछ यत्न ही नहीं है, तो फिर अब शेष क्या रक्खा जाय? और पीडित प्रजा को दुःखसे क्यों न छुटायाजाय? अतएव अपने शत्रुओंसे छाती अडाकर लडना राजपूतोंने स्वीकारकर अपने स्त्री पुत्रोंको मारडाला और मुसलमानोंको अपनी अंतिम शूरता दिखानेको तत्परहुए। तत्कालही किलेका द्वारखोलागया, जिसप्रकार वनमेंसे भूँखा वाघ बकरोंके झुंडपर टूटताहै वैसेही राजपूतगण महागर्जनाकर मुसलमानोंपर टूटे। मध्याह्नकाल तक बडाही घोर युद्ध हुआ, दोनोंपक्षकी बहुतसी सेना मारीगई, सहस्रों शिर पृथ्वीपर लोटने लगे। तदनन्तर युद्ध होते २ अन्तमें सर्दार कुंवर और चार राजपूत शेष रहगये, उनमेंसे राजपूत तो मारही डालेगये परन्तु सर्दारकुंवरको जीवित पकड लियागया। खुसरोखां जीवित सर्दारकुंवरके मिलजानेसे अत्यन्तही प्रसन्न हुआ और दिल्लीकी बादशाही मिलनेके समान आनन्द पाया।

शूरवीरबालाको खुसरोखां के तंबूमें बन्दी करके लायागया, वहां विवश अवस्थामें पडी रही, परन्तु मरते २ भी उसने अपने सतीत्वधर्मको न तोडा और खुसरोखां सर्दारकुंवरके पास आकर कहने लगा कि, "तेरे माता पिताको धन्यहै! तेरी शूरताके ऊपर मैं बहुत प्रसन्न हुआहूँ इसके बदलेमें तुझे आजसे अपनी पटरानी बनाऊंगा।

राजपूतोंकातो इस शहरमेंसे अब बीजतकभी नाशहोगयाहै, अब तुझे छुडानेको कोई आनेवाला नहीं। मेरीबात मानले। दिल्लीके सूबेका अब मुझकोही राज्यचलाना होगा, क्योंकि बादशाह मुबारक खिलजी तो केवल नाममात्रकोहीहै, इसकारण बादशाह या वजीर जो कुछ

है वह मैंहीहूँ । मुवारकके पीछे दिल्लीकी गद्दीपर मैंही बैठूंगा; और योंभी वादशाह मेरे हाथकी पुतली है। अब तू मुझसे क्यों लाज करतीहै, वहुतसी राजपूतानियें वादशाहके महलमेंहैं । जो मेरे वश हुई है उनके कुल तर गये हैं, तूभी अपने कुटुंविओंका उद्धारकर तू कहेतो तेरे वालकको पाटनकी गद्दीपर बिठादूँ और तर राज्यको दिल्लीसे स्वतंत्र वनादूँ । मैं तुझपर मोहित होगयाहूं अतएव मेरी प्रार्थना स्वीकारकर । "

खुसरोखांके इन वचनाको सुनतेही अशक्त अवस्थामें घायल पड़ा हुई सर्दारवाई उठ वैठी और आवेशमें आकर कहनेलगी;- " अरे दुष्ट ! दूररह मेरे शरीरका स्पर्श कर मुझे अपवित्र न कर । राजपूतानियोंका पाणिग्रहण करनेमें तुझे लाज नहीं आती ! करणघेलेकी कमलादेवी तथा देवलदेवीके समान मुझे न जानना; मेरे निमित्त तू अपनी आशाको छोडदे । जा, मेरे सामनेसे हट और अपने मुखको कालाकर । सावधान हो, अब ऐसी बात मुहसे न निकालना । "

इस प्रकार बातें करते २ वह फिर मूर्च्छित होकर गिर पडी । उसही समय खुसरोखां उसके समीपगया और अपनी कामनाके पूर्ण करनेकी इच्छाकी । दुष्टके हाथका स्पर्श होतेही वीरांगना सर्दारकुंवर जाग्रत होगई और अपनी कमरमें जा गुप्तरीतिसे कटारी छुपीथी उसे निकाल ऐसे वलसे आघात किया कि उसका कलेजा निकलपडा । खुसरोखां अचैतन्यहोकर गिरगया, उसही समय सर्दारवाई तम्बूसे निकल नगरकी ओर चलदी ! थोडी दूर पहुँचतेही मूर्च्छित होकर फिर गिरपडी । इतनेमें भाट चारण कि जो वहां आरहेथे उसे मूर्च्छित हुआ देख रुकगये । थोडीही देरमें जव मूर्च्छाजगी तव वह उन चाणोंसे कहने लगी,-"मेरे ऊपर पानी डालो, मेरा स्पर्श चाण्डाल ने किया है।" भाटोंने जल लाकर उसे स्नान कराया । उस समय वह

बोली कि, " तुम सबकी जय हो। मैं तुमको अपना पुत्र सौंपती हूं, मेरे बूढे सासुससुरको दुःख न होने देना यह कहते २ उस वीर बालाने अपने प्राण त्यागदिये।

वीरमती ।

रानी वीरमती टुकटोडाके राजा राजा राजकी पुत्री थी। साहस बल, पराक्रम, वीरता तथा पातिव्रतआदि गुणोंमें यह अत्यन्त प्रशंसनीय थी। उसका विवाह धारानगरके राजा उदयादित्यके पुत्र जगदेव वीरसे हुआ था । जगदेव बुद्धि, शौर्य्य, विनय तथा न्यायमें बाल्यावस्थासेही निपुणथा. इस कारण पिताके राज्यमें उसकी कीर्ति फैलने लगी। राजा उदयादित्यभी उसकी योग्यताका वर्णन सुनकर मनमें प्रसन्नरहताथा, परन्तु अपनी, दूसरी स्त्रीके वशमें होनेसे उसके पाटवीकुमार रणधवलके ऊपर बाहिरसे कपटका प्रेम दिखाता था। जगदेवकी माताको आवश्यकीय व्ययके अनुसार द्रव्य दिया जाता था इसकारण वह अपने पुत्रको वस्त्रालंकारसे सुशोभित रखनेमें शक्तिमान न थी। पुत्र साधारणही वस्त्र पहिनताथा, एक दिन पिताने उसे साधारण वस्त्र पहिरे देख दुःखित चित्तसे अपने आभूषण, वस्त्र, घोडा तलवार, कटारआदि शस्त्र दिये। उसके ऊपर राजाकी प्रीति जानकर दूसरी रानीने राजासे महाहठकी और उन दिये हुए पदार्थोंको लौटालेनेका आग्रह किया।

राजाने कहा;—हे रानी ! आग्रह न करो, दिये हुए पदार्थको नीच मनुष्यभी नहीं मांगते, फिर तो मैं देशपति होकर ऐसा कार्य कैसे करूं ? तब रानीने कहा कि, चाहे दूसरे पदार्थ रहने दो परन्तु घोडा कलँगी, तलवार तथा कटार तो मंगवाही लो। स्त्रीवश राजाने जगदेवसे उन पदार्थोंको लौटा मंगाया जगदेवने पिताकी आज्ञामानकर उन पदार्थोंको लौटा दिया परन्तु अपना अपमान हुआजान, विदेश जाय प्रारब्धकी परीक्षा करना निश्चय किया। बालक जानकर माताने उसे

रोंका परन्तु जगदेवकी तो पूर्ण इच्छा थी इसकारण वह आशीर्वाद ले विदा हुआ। मार्गमें ससुरका गांव आया, वहां अनजानसे एक बागमें घोडा बांधकर सो रहा। वह बाग राजाका था, इसकारण उसी समय राजकुमारी वीरमती सहेलियों समेत फिरनेको आई। कोई पुरुष घोड़ा बांधकर सोरहा है इस समाचारके पातेही राजकुमारीने एक दासीको भेजा कि जा देख आ, यह कौन है। दासीने जगदेवको देख राजकुमारी वीरमतीसे उसका समाचार कहा वीरमतीने एक वृक्षके पीछे खड़े हो दासीसे जगदेवके जगानेको कहा। दासीने उसे जगाकर पूछा,–'महाराज! आप यहांपर अकेले किसप्रकारसे आये हैं?तब जगदेवने अपनी सब व्यवस्था कहसुनाई। उसकी बातें सुनतेही वृंक्षकेपीछे खडीहुई वीरमती बाहरनिकल आई और अपनेकोभी परदेशमें ले चलनेकी प्रार्थना करने लगी। दोनों आनंदसे मिले और बैठकर बातचीत करने लगे। इतनेमें एक दासीने दौडकर यह सब समाचार राजाको जा सुनाये, राजा सुनतेही वहां आय उनको लेगया और लेजाकर विधिवत् विवाह करदिया। ससुर तथा सालेने जगदेवसे वहीं रहनेकी विनतीकी, परन्तु वीर पुरुष अपने ससुरके घरमें पडे २ खाना क्या अच्छा समझतेहैं! उसने पांच सात दिन वहां ठहर सिद्धराजके समीप पाटन जानेकी इच्छाकी, और जानेकी तइयारीभी करली। रानीवीरमतीभी उसके साथ जानेको तइयार हुई। दोनोंके निमित्त उत्तम घोडे सजाये गये और जगदेवका सालाभी कुछ सवारले थोडीदूर तक पहुँचाने गया। थोडी दूर चलकर दो ओरको दोमार्ग मिले उनमेंसे एक मार्गतो समीपकाथा, और दूसरे मार्गसे जाने में कुछ फेर पडताथा। समीपवाले मार्गमें दो बाघ लगतेथे इसकारण कोईभी उस मार्गसे नहींजाताथा, परन्तु जगदेवने उसही मार्गसे जानेका निश्चय किया। दोनोंने सबको पीछे लौटाय अपने घोडोंको उसही ओर चलाया। सात आठ कोश निकल जानेपर वीरमतीने एक विकराल बाघिनको देखा उसने देखतेही अपने पतिसे कहा, जगदेव एकही

बाणसे उसका वधकर आगेको चला। इतनेमें बाघभी दिखाई दिया। वह उसकोभी तीरके द्वारा मार देखते २ स्त्री समेत पाटन पहुंचे। वहां वह दोनों घोडे वीरमतीको सौंप आप किसी उत्तम स्थानके खोजनेको शहरमें गया।

वीरमती तालावपर बैठीथी कि इतनेमें एक जामोतीनामक वेश्याकी दासी पानी भरने आई। उसने उसको अकेले देख बातोंहीबातोंमें सब नाम, ठाम, ठिकानाआदि पूँछलिया और तत्कालही वहांसे अपनी स्वामिनीके पास गई। वहां जाय सब वृत्तांत कहा और उसकी सुन्दरताकाभी वर्णन किया। शहरके कोतवालका पुत्र बडाही कुबुद्धि और लंपटथा। उसके बुरे कर्मके निमित्त किसी स्वरूपवतीस्त्रीके लानेका भार जामोतीने अपनेही शिरपर लियाथा, इस शिकारको आया हुआ देख ठगबाजीसे अपने घर लानेकी इसने यह युक्तिकी कि अपने दश मनुष्यों तथा दास दासियांके साथ स्वयं सिद्धराजकी रानी बन एक झमझमाते हुए रथपर बैठ शीघ्रतापूर्वक उसके समीप पहुंची बरन् उसको भुलावा दे रथपर बिठाल अपने घर लेगई! जामोती धन वानथी इसकारण उसका घरभी बडा विशालथा. उसके घरको देख उसकी बातोंपर वीरमतीकोभी विश्वास होआया। जामोतीने उसका भली प्रकारसे सत्कारकर भोजनभी तइयार कराया। परन्तु वीरमतीने कहा कि जबतक जगदेव न आवेंगे मैं भोजन न करूँगी, इसबातको सुन जामोतीने कहा कि जगदेवजी तो राजाजीके समीप गयेहैं और वहांपर भोजन, नाच, तमाशा होरहा है,। इससमाचारको सुनकर वीरमती ने कुछ थोडासा भोजन किया। वीरमतीके भोजन करते न करते सायंकाल होगया–, परन्तु उस समय तकभी पतिके न आनेसे वह कुछ शंकित हुई। किन्तु जामोतीने ऐसा कपटजाल रचा कि उसकी शंकाको थोडी देरभी न ठहरने दिया। रात्रि होनेपर उसके निमित्त शयनगृह सजायागया, वहां वीरमतीको भेज दिया। वीरमतीके जातेही समझा रक्खा हुआ कोतवालका पुत्र एकसाथ

उसक समीप शयनगृहमें घुसा, उसके घुसतेही शयनगृहका द्वार बन्द करलियागया ।

परपुरुषको अपने समीप आताहुआ देख कपटका होना जान वीरमती घवडाई । 'मरूंगी या मारूंगी, परन्तु परपुरुषका मुँह न देखूँगी, ऐसी दृढताकर उसने एक नशेमें चकचूर हुए कोतवालके पुत्र लालियाकी कमरसे कटार खींचली और उस पापीको नीचे पटक छातीपर चढबैठी ! ! लालियाने कहा कि मैं अब तुझे न छेडूँगा तू मुझे छोडदे, वीरमतीने कपटीकी बातोंको सत्यमान उसे छोडदिया । परन्तु वह दुष्ट तत्कालही उस निर्दोष बालासे विमुखहो अन्यायाचरण करनेको तत्पर होगया । वीरमतीने—'शठं प्रति शाठ्यंकुर्यात् ।' इसवाक्यका स्मरणकर स्त्रीचरित्र रचा,—अर्थात् लालियाको प्यारके वचनोंसे फांस उसको पलंग पर बिठा स्वयं उसके सन्मुख हाथजोडकर खडी होगई । थोडी देरके उपरांत बातचीतकर ऊपरीप्रेम दिखाय शराबकी बोतल उठाय भलीप्रकारसे पिलाय और उसे उल्लू बनादिया । उसनेभी एकगिलास शराब भरकर वीरमतीके पीनेको दिया उसने इस बुद्धिमानीसे उस गिलासको ढुलकादिया कि लालिया कुछभी न जानपाया । वीरमतीने उसे शराबके नशेमें अचैतन्य देख शीघ्रतापूर्वक उसकी कमरमेंसे कटार निकाल उसकी छातीमें मारा और यमपुरीको भेजदिया, शरीरके टुकडे २ कर उनटुकडोंको दोचार कपडोंमें लपेट खिडकीमेंसे मार्गमें फेंकदिया, और स्वयं द्वारको भीतरसे बन्दकर सिंहनीके समान बैठीरही ।

रातको चौकीमें फिरनेवाले सिपाही फिरते २ वहां आपहुंचे और उन गठडीमें बँधे हुए टुकडोंको किसी चोरकेमालकी गठडी जान थाने परलेगये । प्रातःकाल होतेही सिपाही उन गठडियोंको कोतवालके सामने लेगये । कोतवालने उन्हें खोलकर देखा तो मृतक शरीरके टुकडे निकले । खोजखाजकर देखनेसे उसको स्वयंही अपने पुत्रका विस्मय हुआ तदनंतर जब उसको घरमें ढूंढा तब जान पडा कि,—'वह रातकोतो जामोती वेश्याके घर गयाथा ।, जब वहां जाकर खोजकराई गई

तव उसने स्वीकारकिया कि 'वह ऊपर सोताहै जब जागेगा तब भेज दिया जायगा ।' परन्तु उसका बुलावा बडा कडाथा, इसकारण दासी जगाने गई । दासीका बोल सुनतेही रानी वीरमतीने क्रोधितहो उत्तर दिया कि,–'रांड लुच्ची ! तूने अपने बापको स्वयंही मरवाकर मार्गमें फेंकवादिया है । निर्लज्ज ! चावडेकी बेटीसे यह कपट कर तुझे क्या लाभमिला ! नीच ! मेरे प्रमार पतिको जब यह वृत्तांत ज्ञातहोगा तब देखना कि तेरी कैसी बुरी दशा होती है ? मैं अपने पतिकोही भजने वाली स्त्रीहूं तुझको शाप देतीहूं कि तेरा सत्यानाश जायगा और तेरी कुत्ते कौवेके समान मृत्यु होगी । दुष्टा एक नीच मनुष्यको मेरे यहां भेजदिया ! अब देखना कि तेरी क्या दशा होती है मैं यथार्थ चावडेकी पुत्री तभीहूं जब तुम एकएकको इस आचरणका फल अपनेही हाथोंसेदूं ।

इतना सुनकर दासीतो मूर्छित होगई और जामोती तो मृतक तुल्यही होगई । सिपाहियोंने दौडे जाकर यह सब वृत्तान्त कोतवालसे कहा । उसको सुनतेही कोतवालके क्रोधकी सीमा न रही, वह शीघ्रतापूर्वक जामोतीके घरगया । वहांके किवाड भीतरसे दृढतापूर्वक बन्दथे केवल एक छोटीसी खिडकीथी, उसके ऊपर सीढी लगाकर एक सिपाहीको उसने चढाया । सिपाहीने जैसेही शिर खिडकीमें डाला वैसेही वीरम तीने तलवारसे उसको काटलिया, शिरके कटतेही धड पृथ्वीपर जा गिरा । एकके पीछे एक चढनेवाले पांच सात वीर सिपाहियोंके शिरको वीरमतीने काटः गिराया । कईएक सिपाहियोंके कटजानेसे सिपाही तथा कोतवाल कांप उठा । ऊपर चढनेका किसीको साहस न रहा । अन्तमें हारकर लुहारको बुलवाया और एक दूसरे सिपाहीसे महाराज सिद्धराजकोभी समाचार पहुंचाया । सिद्धराजने कहलाभेजा कि–"मैं आताहूं, अतएव सब थोडी देर तक स्थिररहो । कोई किसीप्र-कारका कार्य न करे ।"

उधर जगदेवने गांवमें एक सुन्दर घरको ढूँढ तालावपर आयदेखा ता वीरमती न मिली। कितने एक मनुष्योंके चरण चिह्न तथा अश्व और गाडी आदिकोंके चिह्नोंको देख जगदेवने जानलिया कि वीरमती किसीके द्वारा ठगी गईहै। इसप्रकारसे चिंता करते २ वह किलेकी आर गया और सिद्धराजसे अभियोग करनेका निश्चय कर लिया। किले में घुसतेही पहिले सिद्धराजके अश्वपालसे बातचीत हुई उसने विदेशी तथा चतुर पुरुष जानकर पूछा। तव उसने अपनेको राजपूतजना सव वातें कहीं। अश्वपालने जगदेवको अपनी अश्वशालामें रख लिया, उस नेभी उसकी नौकरीको इसकारण स्वीकार करलिया कि सिद्धराजसे शीघ्रतापूर्वक मिलसकूंगा।

कोतवालके सिपाहियोंको विदाकर सिद्धराज उस स्थानपर जाने को तइयार हुआ। सवारोंको संग चलनेकी आज्ञा हुई, उन सवारोंमें जगदेवभी था। सिद्धराज जामोतीवेश्याके घर आय, जिसकमरेमें वीर मतीथी—उस कमरेके द्वारके समीप जाय मुक्तकण्ठसे कहने लगा—'हे भाई या वहन! तुम कौनहो, किसकारण तुम्हें इतना उत्पात करना पडा?' जगदेवभी वहीं समीप खडाहुआ था। उसके शब्दको रानी वीरमतीने सुना। किवाडोंकी दरजोंसे देखकर वीरमतीको निश्चय होगया कि महाराज सिद्धराज स्वयंही हैं, जब उसे इसवातका निश्चय होगया तव उसने नामधामका परिचय, सबके वधका कारण इत्यादि सव वर्णन स्पष्ट २ कह सुनाया। उस समय जगदेवने जो राजाके पीछेही खडाथा आगे आकर कहा,—"चावडी! अव द्वार खोल, तुझे वहुत दुःख हुआ है।" वीरमतीने अपने पतिके शब्दको वारंवार सुन और पहिचानकर तत्कालही द्वार खोलदिया। सिद्धराजने जाना कि यही जगदेवहै, तद-नन्तर उसने वीरमतीसे कहा कि 'मैं तुमको अपनी पुत्रीके समान मानताहूँ।'

इसके उपरांत राजमहलसे सुखपाल मंगवाय यत्नपूर्वक उसको महलमें भेजदिया फिर कोतवाल तथा जामोतीवेश्याको कठोरदण्डदे

जगदेवको साथले राजसभामें गया। जगदेवने नौकरीमें रहकर अपने अनेकपराक्रम दिखाय सिद्धराजको प्रसन्नकिया। कितने एकवर्ष बीतनेपर परस्पर वैमनस्य होजानेसे सिद्धराजसे विदाहो पिताके राज्यमें कुटुंब सहित चलाआया और वीरमतीकी कीर्ति बढी।

कर्मदेवी।

साधुनाम धारणकर केवल वैराग्यवृत्तिसे पेटभर साधना करनेवाले किसी पुरुषका नहीं वरन्, एक अटल शूरवीर साधुनामके राजकुमारकी धर्मशीलपत्नी कर्मदेवीका चरित्रभी आश्चर्य्यकारक है। इस वीरबालाका जन्म अरीत नामक राजपूतानेके एक राजा माणिकरायके यहां सन् १३००ई०के अंतमें हुआथा और उसका सम्बंध (ब्याह) जैसलमीरके समीपस्थ युगलपुरके राजा रणंगदेवके पुत्र साधुसे हुआथा। कुमारी कर्मदेवीने जबसे इस राजकुमारके चरित्रोंको सुनपाया तबसे उसकेही साथ विवाह करनेका दृढ निश्चय किया। राजा माणिकरायका विचारथा कि इसका विवाह राठौरवंशमें कियाजावे, परन्तु पुत्रीके आग्रहके आगे उसकी कुछ न चली। अंतमें उसकीही इच्छानुसार साधुके साथ उसका विवाह कियागया। राजा माणिकरायने कन्यादानमें बहुतसा धन, वस्त्र, अलंकार आदिदे कर्मदेवीको विदाकिया।

राजकुमारसाधु इस ब्याहके होनेको अपनी रक्षाके निमित्त अपने साथ सातसौ भट्टीजातिके सवार रक्खेथे। कारण यह था कि जिस राठौर राजकुमारके साथ इस राजकुमारीके ब्याह होनेकी बात पहिलेपहिले चलीथी, उसने साधुको मार्गमें रोक उससे युद्ध करना आरंभ किया। दोनोंओरसे घोर संग्राम हुआ। साधु और अरण्यकमल कर्मदेवीके निमित्त चंदननामक स्थानपर लडे। अरण्यकमल चारसहस्र राठौरोंको लेआयाथा, अर्थात् उसका बल विशेषथा। इसयुद्धमें दोनोंओरके अधिक मनुष्य मारेगये, कर्मदेवीने इस युद्धको अपनी आंखोंसे देखा,

परन्तु उसका हृदय भयसे व्याकुल न हुआ, वरन् पतिका साहस बढाय उसे उत्साहित किया। इसकारण साधुको औरभी अधिक शूरता चढी, और अपनी सेना आधी प्रायः मरभी गईथी परन्तु तौभी शत्रुके छःसो सिपाहियोंको उसने काट गिराया। कर्मदेवीके धैर्य और अचलवृत्तिको देख साधुने सावधानहो पुनर्वार अपनी सेनाको शत्रुके सन्मुख चलाया। साधुने अरण्यकमलके ऊपर एक ऐसा प्रहारकिया कि वह उसके हाथपर लगा। उसने साधुके ऊपर एक ऐसा वार किया कि वह उसके मस्तकपर आकर लगा और वह अचेत होगया। अरण्यकमल तो उठ बैठा, परन्तु साधु अपनी प्राणप्यारीकी रक्षा करतेहुए अपने प्राण खो बैठा। कर्मदेवीपर घोर आपत्ति आपडी। वह विचारी निराधार होकर रोनेलगी; परन्तु दुःखको रोककर अपना क्या कर्त्तव्य, विचार पतिकी तलवार अपने हाथमेंले, उसके द्वारा अपने एक हाथको काट ससुरके यहां भेज दिया और दूसरा हाथभी जो कंकण और हीरा-मोतियोंसे अलंकृत था; महिलनामक राजकविके यहां पहुँचानेकी आज्ञादी। सिपाहियोंने उसकी आज्ञानुसार दोनों हाथ दोनों स्थानों पर पहुँचाये और कर्मदेवी स्वयं अपने पतिके मृतक शरीरको गोदमें रख युद्धस्थलमें सती होगई। युगल राजा रणगदेव पुत्रवधूका हाथ देख प्रसन्नहुआ। योग्य स्थानपर विधिवत् उसका अग्निसंस्कार कराया और इस वीरांगनाके स्मरणमें जिसस्थानसे हाथ आया था उस स्थानपर सुन्दर तालाव बनवाय उसका नाम कर्मदेवी रक्खा। वह सरोवर आज भी प्रसिद्ध है।

वीरत्रिपुटी।

आर्यनारियोंके उज्ज्वल उदाहरणोंमें चित्तौरकी तीन बालाओंके वृत्तान्तभी जानने योग्य हैं। इस त्रिपुटीमें एकही कुटुम्बकी तीन स्त्रियोंकी अद्भुत शूरता दिखाई गई है। उनमेंसे पहिली कर्मदेवी राज्य माता, कर्णवती उसकी पुत्री और कमलावती उसकी पुत्रवधू थी।

क्षत्रीपुत्र फत्ते, सोलह वर्षकी तरुणावस्थाका पराक्रमी वीर था। लगभग तीनसौ वर्ष पहिले जब मुगल सम्राट अकबरके बाहुबलसे जयमल्ल आदि राजाओंका पराजय हुआ और चित्तौर यवनोंके अधिकारमें गया तब राज्यमें बडी हलचल मच रही थी। इसही बातके ऊपर उपरोक्त वीर फत्तेने राज्यकी रक्षाके निमित्त अथवा अपने अक्षय यशके निमित्त मुगल सेनाके सन्मुख युद्ध करनेका निश्चय किया। कुमारने इस बातमें अपनी माता, बहिन या स्त्री किसीको भी कुछ प्रेरणा न की थी, परंतु जब रणभूमिमें जानेके लिये आज्ञाले विदा हुआ, तब यह तीनों अपना कर्त्तव्य जान पीछेसे सजकर शत्रुओंके सामने ढाल रूपसे जाकर खडी होगई थीं। फत्ते और मुगल सेनाके बीच बडाभारी युद्ध हुआ उसमें फत्तेकी सेनाने अधिक उत्साह दिखाया, क्यों कि पहिली तीनों वीररानियें सैनिक अस्त्र शस्त्र धारणकर उसकी सहायतामें लगी हुई थीं। उनकी गोली चलानेकी चतुराई देखकर अकबर बादशाहको बडा आश्चर्य हुआ और राजपूता-नियोंके बल पराक्रमको देख उनका वर्णन करता हुआ भविष्यकी चिन्ता करने लगा। उसने अपने बहुतसे सिपाहियोंको मरता और भागता देख उन्हें पुरस्कार देनेकी प्रतिज्ञाकर उत्साह बढाया और उन स्त्रियोंके पकडनेका भी बहुतसा यत्न किया, परन्तु उसका कोई भी यत्न सफल न हुआ। क्योंकि उसकी इच्छाके पूर्ण करनेवाले मनुष्यही उस समय उसके समीप न थे। तो भी मुगल सेना धीरे २ उत्साहित हुई और फत्तेकी बहिन कर्ण-वती शत्रुके अक्रमणसे घायल होकर नीचे गिर पडी। राजमाताने भी इस प्रहारको प्रत्यक्ष देखा, परन्तु धैर्य धरकर अपने कार्यसे पीछे न हटी। थोडी देरके उपरान्त दूसरी गोली फत्तेकी स्त्री कमलावतीके पैरमें लगी। वह घायल तो होगई परन्तु थोडी देरतक अपने बाहु-बलसे कार्य करतीही रही। अन्तमें वीरमाता कर्मदेवीभी घायल होकर नीचे गिरपडी।

इसप्रकार फत्तेकी माता तथा स्त्रीकी अंतिम दशा हुई, परन्तु तौ भी कुमारने अपने कार्यमें सावधान रहकर मुगलसेनाको पराजित किया तदनन्तर वह अपनी माता तथा स्त्रीके समीप गया। वहां जाकर देखा तो दोनों चुप थीं। प्रेमपूर्वक फत्तेने दोनोंके मस्तकोंपर हाथ फेर धीरज दिया। कमलादेवीने पतिको सन्मुख देख प्राणत्याग किया; और मातानेभी पुत्रको युद्ध करनेका संकेतकर आंखें बन्दकरलीं। पुत्रने माताकी इच्छाको माथेपर चढाय क्षत्रीधर्म पालनका निश्चयकिया। इतनेमें शत्रुओंका वल वढा और उसको पराजित होकर मरना पडा।

इस प्रसङ्गसे आर्यराजाओंके समान वीरवालागणभी कैसे पराक्रमका काम करतीं और वालक राजाकी सहायताको जाय राज्यका वचाव करती थीं इत्यादि वातें मिलसकतीहैं। वरन् राजपूतानियोंमेंसे कोई भी डरपोक, निर्वल तथा केवल अपनीही उमङ्गमें मस्तहुई स्त्रियें वहुत कम पाई जाती हैं।

सुरसुन्दरी तथा हेमन्तकुमारी।

लगभग एक शताब्दीके भीतर अथवा गतशताब्दीकी आर्यनारियोंमें सुरसुन्दरी अथवा शरत्सुन्दरी देवी तथा उसकीही पुत्रवधू हेमन्तकुमारी देवी विख्यात होगईहैं। शूरवीरतामेंही नहीं वरन् अधिक मनोनिग्रहमें उनका चरित्र वहुत रुचिकर और सन्तोषकारक है।

वङ्गालके राजशाही प्रांतमें पुनिया नामक नगरहै। यह सुरसुन्दरी देवी वहींके राजकर्त्ता जोगेन्द्रनाथकी रानीथी। दुर्भाग्यवश पन्द्रह वर्षकी ही तरुण वयमें पतिका मरण हुआ, इसकारण समस्त जीवन वैधव्यपनका दुःख भोगना पडा। पतिके मरने उपरांत मनको दृढ वैराग्यके वशकर वह अपना जीवन सफल करतीथी। उसने अपने समस्त वस्त्र आभूषण कङ्गालोंको देदिये और आप स्वयं एक वस्त्रसेही रहनेलगी। सौभाग्यवती सखियोंकी सङ्गति छोड अपनीही समान दुःखी वैरागिन

स्त्रियोंके साथ समय बितानेलगी। वह रात्रिको घासके बिछौनेपर ही सोती थी। कुछ मास पीछे एक लडकेको गोदले राज्यका सर्व अधिकार उसको दिया; और स्वयं उत्तम २ धर्मशास्त्रोंके सीखनेके निमित्त काशी गई। वहां गये उसको थोडाही समय बीताहोगा कि गोद लिये हुए पुत्रके परलोकगमनका समाचार मिला। इसकारण राज्यकी व्यवस्थाके विषयमें उसको अत्यन्त चिन्ता और शोक हुआ, परन्तु स्वयं केवल निर्लोभवृत्ति रखकर, राजकाजके निमित्त राजधानीमें जाय दूसरे पुत्रको गोद लिया और आप पहिलेकी समान काशीमेंही रही वहां सशास्त्रके सीखने और सत्पुरुषोंके समागममें संतोषपूर्वक समय बिताने लगी।

सुरसुन्दरीकी उच्च मनोवृत्ति, उदारता और धर्मशालताकी बडाई सुनकर गुणज्ञ सर्कारने उसको " महारानी " की उपाधि प्रदान की; और प्रोफेसर वर्डस्वर्थके समान विद्वानने उसकी बडाई लिखी। परंतु उसको मान पानेका कुछभी लालच न था। कुछ समयके उपरांत इस महारानीका परलोक हुआ। वह जबतक जीवित रही तबतक अपने प्राप्तहुए द्रव्यको देशकल्याणके कार्यमेंही लगातीरही, वह इसमेंही द्रव्यकी सफलता मानतीथी। पतिके जीवित कालमें उसकोही ईश्वर समझकर सेवा करती और उसके मरनेके उपरांत जगत्पतिकी भक्ति करके वह सती साध्वीके पवित्र पदको प्राप्तहुई।

सुरसुन्दरीके मरनेपर राज्यके ऊपर उसकी विधवा पुत्रवधू हेमन्तकुमारीका अधिकार हुआ। उसको राज्याधिकार होनेपर सर्कारने यह खोज की थी कि वह राजकार्य करने योग्य है या नहीं। इस बातपर हेमन्तकुमारीने दासीके साथ परदेमें रहकर सर्कारी मुन्तजिम (प्रबन्धकर्ता) तथा उसके साथ आयेहुए उत्तम २ मनुष्योंके सामने प्रत्येक प्रश्नके उत्तरको यथार्थ रीतिपर दिया; क्योंकि भूगोल, गणित और भूमिसम्बन्धी विषयोंमें वह निपुण थी। सबको उसकी बुद्धि-

मानी और चतुराईपर सन्तोषहुआ और साहब कलक्टरने भी अपने उत्तम अभिप्रायको पूर्णरीतिसे लिखा। हेमन्तकुमारीने अपना अधिकार मिलनेके विषयमें सर्कारसे प्रार्थनाकर यह जताया कि,–मेरी तीर्थरूप स्वर्गवासिनी सासुजीकी इच्छानुसार मुझेभी परोपकार करनेके निमित्त द्रव्यादिकी अधिक आवश्यकताहै, अतएव शीघ्रतापूर्वक मुझे मेरा अधिकार मिलजाना चाहिये । इत्यादि २ ।

सुरसुन्दरीदेवीकी समान इस देवीनेभी अपने प्राप्त हुए धन तथा वैभवको परमार्थमें लगाया । उसका नाम उत्तमविद्या, सदाचार और सौजन्यताके कारणही अचल होरहाहै ।

चन्द्रप्रभा ।

चन्द्रप्रभा देवदत्त नामक ब्राह्मणकी धर्मपत्नी थी । उसमें दैवी दया तथा क्षमा गुण इतना वढाहुआ था कि उसकी उपमा मूर्तिमान् शांति अथवा क्षमासे दीजासकती है । चन्द्रप्रभाका पति देवदत्त कुलीन कुलके गृहस्थका पुत्र था, परन्तु उसमें यह गुण कणमात्र न थे । सदैव भांग गांजा आदि शीतल पदार्थोंसे मतवाला रहता और स्त्रीसे दुर्व्यवहार करताथा । नशेके साथ २ दूसरी बुरी बातेंभी उसको लगीहुई थीं । तौभी सुशील सुन्दरी चन्द्रप्रभा पूर्णभक्तिभाव रखकर 'स्वामीके भलेकी' चिन्ता तथा युक्ति करती थी । यद्यपि उसको सफलता न होती तथापि वह अपने प्रयत्नमें न चूकतीथी । केवल सोलहवर्षकी युवावस्थाकी आवेशोंवाली आयुमेंही उसने अपना मन ऐसा दृढ वना लियाथा कि यद्यपि पतिकी ओरसे कुछभी सुख संतोष नहीं मिला परन्तु तौभी उसमेंही अखंड आनंद और संतोष मानतीथी । और अपने प्राणोंके जाने समयतक पतिकी भक्तिमें कुछ भी अन्तर न पडने दिया ।

वह इसीप्रकार पतिकी सेवा करती तथा उसके द्वारा कष्टभी सहन करतीथी एक समय चन्द्रप्रभाको देवदत्तने घूंसोंसे इतना मारा कि

वह अधमरीहुई। तब सर्कारी सिपाही उसे पकडलेगये और न्यायाधीशने जब चन्द्रप्रभासे पूछा कि इस विषयमें तेरी क्या इच्छा है तब उसने स्पष्ट२ लिखा दिया कि,-"मेरे स्वामीका इसमें कुछभी अपराध नहीं है, उसके मुंह देखनेकी मुझे आशा है।" पीछे जब पापी देवदत्तको रस्सीसे बांधकर लायागया तौभी उसने अंतिम प्रणामकर सर्कारसे पतिको स्त्रीहत्याके अपराधसे छुटाया।

रूपसुन्दरी।

(यौवनश्री)

गुजरातके राजा जयशिखरीकी रानी और वनराजकी माता रूपसुन्दरीका चरित्र, क्षत्रानियोंके चरित्रोंको शोभा देनेवालाहै। इस रानीमें शौर्य, धैर्य, प्रेम और शील सद्गुण उत्तम आभूषणकी भाँति सदैव देखनेमें आतेथे। कल्याणीके राजा भुवने जब जयशिखरीके राज्यपर चढाई की तब होनहार विपत्तियोंकी चिंताओंसे रूपसुन्दरीका हृदय व्याकुल हो उठाथा, इसकारण उसने अपने पतिको रणमें जानेके निमित्त निषेध किया, कारण कि उस समय उसमें शौर्यकी अपेक्षा प्रेमका बल विशेषथा। ऐसा होनेपरभी जयशिखरी जब अपने यथार्थ आवेशमें आया और उसने शत्रुके विरुद्ध चढाई करनेकी आवश्यकता समझी, तब रानीनेभी उत्साहित किया, इतनाही नहीं स्वयं राजाको आज्ञा दीथी।

रणमें जानेपर जयशिखरीने देखा कि युद्धमें अपने पराजित होनेके चिह्न अधिक हैं, तब उसने अपने साले शूरपालसे कहा कि,-"तुम अपनी बहिनको वनमें किसी निर्भय स्थानपर छोड आवो, क्योंकि वह दो जीववाली है, अतएव राजमहलमें रखना उचित नहीं।" यह बात शूरपालने रूपसुन्दरीसे जाकर कही तब उस सुन्दरीने उत्तर दिया कि,-प्राण जानेतकभी मैं अपने पतिको न छोडूंगी और न

किसी स्थानपर जाऊंगी । यदि दैवयोगसे प्राणनाथ रणमें मारेजावेंगे तो उनको गोदमें ले चितामें जल सतीहो मनको प्रसन्न करूंगी, और इससेही मुझे मोक्ष प्राप्त होगी। अंतकालमें उनकी चिताके साथ न जलमरूं तो मेरे कुलको कलंक और क्षत्रानियोंको लाज प्राप्त होगी । पतिके सुख दुःखका भाग लेनाही स्त्रीजातिका परम धर्महै उसे मैं कैसे छोडदूं ? राजा हरिश्चन्द्रकी धर्मपत्नी शैव्या अन्तसमय तक प्यारेके संकटमें साथरहीथी । सीताके समान महासतीनेभी पतिसंगके कारण वनवासके दुःखको स्वीकार कियाथा, और ऐसेही द्रौपदीनेभी किया; अतएव मुझको अपने साथमें ले रणमें छोड आओ ।

अंतमें भाई बहिनके वीच वहुत वादविवादहुआ तव सुरपालने कहा कि,–"महाराजने आग्रहपूर्वक आज्ञा कीहै कि वह तुमको वनमेंही आकर देखेंगे ।" तब उसने अपने भाईके साथ वनमें जाना स्वीकारकिया; वनमें जानेका मुख्य कारण यहथा कि उसके गर्भथा, यदि कभी पुत्र उत्पन्नहो तो वह शत्रुके सन्मुख युद्धकर पतिके वैरको ले राज्यकी रक्षाकरे ।

पीछेसे रूपसुंदरी अपने भाईके साथ जंगलमें गई और अपने भाई शूरको पतिकी सहायताके निमित्त भेजा और स्वयं धीरजधर मार्ग चलनेलगी ।

दमयंतीके समान दुःखित अवस्थामें रोते पीटते वह भीलोंके झुंडके समीप जा पहुंची। एक भीलने भलीभांतिसे रानीकी रक्षा की राज्य या कुलका कुछभी अभिमान न कर रूपसुंदरी उसके साथ मिलगई और घरवारके समस्त काम करनेलगी । इसही भीलनीके घरमें उसके पुत्र उत्पन्नहुआ और उसनेही लालन पालन किया । इसही पुत्रका नाम वनराजहुआ । बडकी डालीमें वंधी टोकरीमें वालक वनराज पौढने लगा वह आकाशके वादलों तथा जंगलके पेडोंको देखकर खेलताथा । जिसकुमारका पिता गुजरातका विशाल राजा था उसके पुत्रकी यह दशा

कहां वह राजा ! कहां वह राज्य ! और कहां पटरानी तथा पुत्र ! रत्न जटित सोनेके खटोले व चांदीकी मशहरीपर लेटनेवालीरानी जिसको सैकडों दास दासीपानीके स्थानपर दूध देती उस पटरानीकी क्या ऐसी दशाहो !! परन्तु ऐसी दशामेंभी इस रानी रूपसुंदरी धैर्य और शांतिसे मनको विना दुखाये समयको काटतीरही । इतनेमें अचानक शीलगुणसुरिनामक एक सज्जन साधुसे उसका साक्षात हुआ; परन्तु वह परपुरुषथा अतएव रानीने चतुरतासे उसकी परीक्षाकर अपनी सब पिछली अवस्था कही । तथा पूर्ण अनुभवकर उसके आश्रममें जारही। इस यतीने उसको अपनी सगी वाहिनके समान जानकर रक्षा की। वह कुमारको कोईभी अयोग्य खेल न खेलनेदेता, वरन् राज्यकार्यके योग्य प्रत्येक अस्त्र शस्त्रकी उत्तम शिक्षा दी । कुछ समयके उपरांत शूरपाल आया और वह अपनी वाहिन तथा भानजेको देख बहुत प्रसन्न हुआ ।

एक उत्तम राजपूतानीके गर्भसे उत्पन्नहुआ राजकुमार वनराज ऐसा शूर और तेजस्वी निकला कि उसने अपने पिताके वैरको ले शत्रुको पराजित किया । रानी रूपसुंदरीने अपने ऊपर उपकार करनेवाली भीलनी तथा यतीको बहुतसा पुरस्कारदे प्रसन्न किया । तदनंतर बहुत दिनोंतक अपने प्रियपुत्रसे प्राप्तहुए सुखको देख रूपसुंदरीका स्वर्गवास हुआ ।

कांता ।

इस बालाको हम कुलीनकांता कहेंगे। क्योंकि रूप और गुणकी अधिकताकेसाथ इसमें सतीत्व गुणभीथा। गुजरातका राजा जयशेखर जो वनराज चावडेका पिताथा, उसके साले अर्थात् वनराजके मामा शूरसेन(शूर पाल)की यह पत्नीथी । जयशिखरीके ऊपर भुवनादित्य नामक राजाने वारम्वार चढाई की । जयशिखरीके यहां शूरसेन अत्यन्तही बुद्धिमान् और चतुर सेनापतिथा इसकारण वह सदैवही जीततारहा । एकवार

भुवनादित्य हारखाय दूसरीवार बहुतसी सेना युद्ध करनेको इकट्ठा करने लगा। जयशिखरीने रात्रिके समय ऐसा समाचार सुना कि-'भुवनादित्य अपने ऊपर चढाआताहै, उससे महायुद्ध होनेकी संभावना है।' इस समाचारके सुननेपर राजाने रात्रिकोही अपने शूर सामंत तथा शूरसेनको बुलाय युद्धकी सामग्री सजाई। युद्ध करनेकी वातका तो निश्चय होहीचुकाथा अतएव जयशिखरीने शूरसेनसे कहा कि,-आपको तो इसवातका निश्चय हैही कि पराजय न होगी, परन्तु अपने पैरोंके नीचे एक वडीभारी सुरंग जान पडती है। वह यह है कि, तुम्हारी वहिन महाराणी यौवनश्री (रूपसुन्दरी) को गर्भ है और उस गर्भमें वह योगिराज पुत्र वतागया है, अतएव तुम उसको किसी जंगलमें निर्भय स्थानपर लेजाकर छोडआवो। क्योंकि कदाचित् युद्धमें पराजय भी होवे तो पीछेसे वह पुत्र वैरले इसकारण तुम दूसरी वात तो जाने दो और अपनी वहिनको लेजाकर जंगलमें छोड आओ, मैं जाकर युद्ध करताहूं।

शूरसेनने वहुतसा साहस दिया। परन्तु जब जयशिखरीने न माना तब वह वहिनको अपनी स्त्री तथा एक दासीके साथ वनमें लेचला। वहां भीललोगोंको समझाय उनके आश्रममें यौवनश्री, कान्ता तथा दासीको छोडदिया और आप युद्धमें जयशिखरीका साथ देनेको शीघ्रता-पूर्वक जाने लगा। कांता पूर्ण पतिप्रेमा तथा पतिव्रता थी इसकारण वह पतिके न जानेका पूर्ण आग्रह करनेलगी। परन्तु युद्ध समयमें जानाही ठीक है इसकारण विवश हो शूरसेनको प्रेमके पाशमें न फँसाया। उसने जाते समय एक मोतियोंका हार अपनी स्त्री कांताके गलेमें पहिनाया। और कहा कि,-'देवी! यह मेरे जीवनका चिह्न है जवतक यह अटूटहार तेरे गलेमें रहे तवतक मेरा जीवन समझना, परन्तु जब टूटजाय तव मेरा मरण हुआ जानना।' इसप्रकारकी सत्यतायुक्त निशानी दे सूरसेन युद्धके निमित्त चला और यह तीनों स्त्रियें वनमें एक भील सर्दारके आश्रममें गुप्तरहीं।

वहिन तथा स्त्रीको वनमें छोड सूरसेन पीछे लौटा परन्तु जव वह पाटनके समीप आया तव उसका हरदासनामक मित्र मिला कि जो छलकपटसे उसे समझाय अपने घर लेगया। भुवनादित्यके पुत्र करणने, सूरसेनको युद्धमें न आयाजान हरदासको वडी पदवी देनेके लालचसे अपनी ओर मिलालिया था, और जैसे तैसे-कर सूरसेनके जीवित पकड लेनेकी प्रतिज्ञा कराई थी। हरदास सूरसेनको अपने घर लाया और कहा कि, जयशिखरीके मारे-जानेपर पाटनके स्वामी अव तुम्हींहो अतएव किसी प्रकारसेभी यत्नकर गये हुए पाटनपर फिरसे अधिकार करनेकी सम्मति करना चाहिये। करणने मुझपर अपना विश्वास किया और वडीभारी पद-वीदेनेका वचनभी दियाहै, अतएव उस पदवीके मिलनेपीछे गुप्तरी-तिसे अपने वलको पूर्णकर करणसे युद्ध करना चाहिये, इत्यादि२ ऐसी वहुतसी वातें कही, और फिर यहभी कहा कि, 'वह पदवी इस प्रतिज्ञा पर देता है। कि जव मैं तुमको पकडकर उसके सन्मुख लेजाऊं अतएव अव तुम्हें वन्दीकरना चाहताहूँ।' यह सुनतेही सूरसेन अकेला होनेके कारण घवडा उठा। परन्तु हरदासने प्रतिज्ञा की कि जैसे वनेगा वैसे मैं दो तीन दिनमें तुम्हें छुडा दूंगा। इस वचनको सुनतेही विश्वासी सूरसेन उसकी कपटभरी वातोंमें आगया, तदनन्तर उस कपटीने उसको पकडादिया।

रत्नदास नामक महाक्रूर कपटी मित्रके ऊपर कर्णका पूर्ण विश्वास था। उसने कपटपूर्वक हरदासको अपना मित्र वनालिया, और सूरसेन जंगलमें अपनी वहिन तथा स्त्रीको छोडआयाहै, इत्यादि वृत्तांत उससे जाना। करण अत्यन्तही लंपटथा और कांताका वर्णन उसने भलीप्र-कारसे सुनाथा। पाटनपर अधिकार करनेके समय उसकी प्रथमदृष्टि इस नवयौवना सुन्दरीपरही पडीथी परन्तु वह इसके हाथमें न आई इसकारण जलके किनारे पर पडी हुई मछलीकी नांई व्याकुल होरहा था। इतनेमें रत्नदास तथा हरदासने सूरसेनके वन्दी करने तथा कां-ताके जंगलमें होनेका समाचार सुनाया। करण इसवातको सुनतेही

तइयार हुआ और हरदास तथा रत्नदासको साथ ले, जिसस्थानपर इन सुन्दरियोंको छिपाया गयाथा वहांपर खोज करनेको निकला। हरदासकी सहायतासे उसने इनको ढूँढलिया और दूरसे तालावपर जंगलमें इन तीनों स्त्रियोंको स्नान करते हुए देखा । तदनन्तर सब अपने घोडोंको चुपचाप तालावके समीप लाय एकसाथ उन सुन्दरियोंपर आक्रमण कर उनको घेरलिया । उससमय भूल होजानेके करणने तरला नामक दासीकोही कांताजान उसे अपने घोडेपर बिठाया, और रत्नदासने कांताको यौवनश्री जान उसे अपने घोडेपर सवार कराया । यह दोनों स्त्रियें पाटनमें लाईजाकर एक महलमें बन्दी कीगईं, परन्तु अचानक विपत्ति आजानेसे दोनों अचैतन्य होगईथीं ।

इसप्रकारसे स्त्री हरणकर सूरसेनको मारडालनेके निमित्त करणने एक सेवकको भेजाथा, परन्तु सूरसेनके बलके सामने सेवककी कुछभी न चली वरन् सूरसेन स्वयंही उसको दुःखदेनेलगा और एक खम्भेसे बांधदिया फिर जिस गुप्तमार्गसे वह सेवक आयाथा उसही मार्गसे उसके वस्त्र पहिन भाग निकला । थोडी देरके उपरांत हरदास तथा रत्नदास वन्दीगृहमें जाकर देखतेहैं तो सूरसेनके भागजानेके समाचार मिले । उन्होंने जाकर राजा करणसे कहा परन्तु वहतो उससमयतो कांताके मोहमें फंसाथा इसकारण उसओर कुछभी ध्यान न दिया ।

अचैतन्य अवस्थामें पडी हुई कांता तथा तरलाको जिस घरमें रक्खागया था वहां करण भी बैठाहुआ विह्वल होने लगा । वह पहिलेहीसे तरलाको कांता समझरहाथा अतएव उसके समीप जा खडा हुआ और कहने लगा,–'प्यारी कांता मधुर आंख क्यों बन्द कररही हो ?' यह सुनतेही तरला कुछेक हिली तैसेही वह फिर बोला प्यारी ! मेरे शब्दमेंही मोहिनी जान पडतीहै हे प्रिये ! तेरे हृदयमें मेरा प्रेम पहलेहीसे था । नहीं तो मेरा शब्द सुनतेही तू कैसे चञ्चल होजाती यथार्थही मैं तुम्हारी प्रीतिके तारसे बन्धाहुआहूं । ' ऐसा कह उसका हाथ चुम्बन करने लगा, इतनेहीमें तरला चैतन्य हुई और इस आश्चर्य-

को देखतेही चौंककर बोल उठी,–"दुष्ट आया! चलूं भागूं!" ऐसा कह जैसेही भागनेलगी तैसेही करणने उसे अपने हाथोंके बीचमें पकडकर कहने लगा,–'प्रिया! क्यों भागती हो? अब तुम निर्भयस्था-नमेंहो।' यह सुन वह चैतन्य होकर बोली,–'अरे दुष्ट! तू कौन है? वह मेरी प्यारी राजमाता यौवनश्री तथा कांता कहांहै?' इस बातको सुनतेही करण चौंककर बोलउठा,–'फिर तू कौनहै?' दासी ने उत्तर दिया,–'मैं तो दोनोंकी दासी तरलाहूं' तरला अत्यन्तही स्वरूपवान थी, इसकारण कामी करणने तो पहले उसकोही स्वीकार करनेका विचारकर यह युक्ति की कि यदि यह समीप पडीहुई कांता होगी तो पहिले दासीकोही अपना करलूं फिर पीछे इसके द्वारा उस-कोभी ठीक करलूंगा! सेवकगण बहुधा तुच्छ स्वभावके हुआ करते हैं, इसकारण द्रव्य और राज्यका लालच देनेसे यह शीघ्र अपने वश होजायगी।" यह समझ उसने तरलाको धीरज देकर कहा कि,–'तरला! मैं तेरे चरणोंका दास हूं। मेरा बोलना तुझे चाहे जैसा लगताहो परन्तु मैं तो तेरा यथार्थ सेवकहूं? तरला! जो तू मेरा कहना मानेगी तो मैं तुझको सचमुचही अपनी पटरानी बनाऊंगा।' पहले तो तरला कुछ इधर उधर करतीरही परन्तु फिर उसने विचारा कि,–'अब तो बिना इसकी आधीनी किये छुटकारा नहीं है, अतएव पहिले तो इसको अपने वशमें करलूं फिर अवसर पाय यहांसे छूट निकलूंगी। उसने यह निश्चयकर करणकी ओर प्यारकी दृष्टिसे देखकर कहा कि मैं तो आपहीकी हूं! पटरानी-बनाना उसने इस नियमपर स्वीकार किया कि तरला, कांतासे मिलादे। तरलाने यह नियम अत्यन्त कठिन जाना, परन्तु पटरानी के लालचसे उस कार्यके पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञाकर उससे कुछ दिनोंका अवसर मांगा। जब कांता सावधानहुई तब तरला दासीभाव दूरकर कुटिनी कार्यको धारणकर उसके समीप जाय बातें करनेलगी। कांताने जाग्रतावस्थामें आय तरलासे कहा,–'अरे तरला! वह दुष्ट कहांहै?

और राज्यमाता यौवनश्री कहांहै ? मेरी रक्षाकर ।' कांताको व्याकुल व विह्वलदेख तरला धीरज देनेलगी, परन्तु जब उसने जाना कि यह करणका घरहै तो फिर मूर्च्छित होगई । तरला उसकी मूर्च्छा दूरकर समझा बुझाय कहने लगी कि, 'बाइ ! अब वह यथार्थ समय समीप आयाहै, कि जब तुम अपने क्षत्रीधर्मका प्रकाशकरो । अतएव घबडाओ नहीं धीरजधरो ।' यह सुनकर कांताने कहा,–, 'मैं क्षत्रिय होकर ऐसा अयोग्य कार्य नहीं करसकती ।' तब तरला बोली,–"मैंने सुनाहै कि करण हमलोगोंका वध करनेवालाहै ।" तो फिर हम अकेली दोनों क्या करसकतीहैं ? अतएव मेरा कहना मानएक युक्ति करे तो उद्धार हो; वह यहहै कि हम दोनों करणकी शरणलें अपना कार्य पूरा करें ।' यह सुनतेही कांता क्रोधितहो कहनेलगी;–' रे नीच! करण यदि मार-डाले तो इससे उत्तम और बातही क्या है ? परन्तु स्मरण रख, कि मैंभी यथार्थ क्षात्रियानीहूं ऐसा न होगा कि मैं बकरीके समान नीची गर्दनकर मारीजाऊं बरन् मैं अपने हाथसेही करणको भलीभांति समझाऊंगी । यही तू करणकी संपत्ति और रूप तथा यौवनसे अथवा उसके अच्छेभाग्यसे लालचमें आगईहै, परन्तु यादरख ! यह पूरी रे ठगाई है । मेरे ऊपर वह चाहै कितनेही कपटजाल क्यों न फैलावे परन्तु तौभी मुझपर कुछप्रभाव नहीं होसकता । नीच नौकरकी बुद्धि कितनी होती है ? वह तेरी बुद्धिके अनुसार आगेको पैर बढारहाहै जा तू उसका भोगकर, परन्तु मुझसे ऐसे नीच विचारको न कहिये । मैं इस पृथ्वीमें ऐसा किसीको नहीं देखती कि जा मरीओर कुदृष्टिसे देखसके । जब तक मेरे प्राणहैं तबतक तो कोई बातही नहीं; बरन् जब प्राणतकभी चलेजावें तबभी मेरे शवका कोई स्पर्श नहीं करसकता ।'

तरला ! इस शुद्ध सत्यबलसे परिपूर्ण मोतियोंके हारमें जो मेरे गलेमें है सबप्रकारके शौर्य देनेकी सामर्थ्य है, अतएव करणके समान पुरुषसे मैं किसी प्रकार नहीं डरती । मुझको अपने सत्य और पातिव्रतके अतिरिक्त किसीका सहारा लेनेकी आवश्य-

कता नहीं है । पवित्र पातिव्रत मेरा सदैव सहायक रहेगा परन्तु तौ भी तरला छेडेही गये और बोल उठी कि, 'कुमारीजी ! चाहे जैसा हो परन्तु आपको बहिरा प्रेम तो बतानाही चाहिये, कि जिससे अपना कार्य पूरा होजाय । ऊपरका बाहरी प्रेम जतानेसे अपनी आंतरिक वृत्तिमें फेर थोडेही पडेगा, अतएव जब राजा करण अपने समीप आवे तब उसको बाहरी प्रेम दिखाय, वशमें कर कार्य पूर्णकर लेनेमें ही अच्छाई है ।' कांताने यह सुन अत्यन्त क्रोधित हो तरलाको बात करनेसे रोक अपने यहांसे चलेजानेके लिये कहा, फिर अत्यन्त आवेशमें आकर यहभी कहदिया कि, 'तुझे मेरे पापसे बचनेका केवल एक यही उपाय है कि अबसे तू मुझको अपना मुंह न दिखाना नहीं तो एक क्षणमें तेरा नाश करडालूंगी ।' यह बात सुनकर तरला वहांसे चली और बडबडाने लगी कि,-' देखती हूं यह व्रत तुझको किस रीतिसे बचाता है ? यदि मैं तरला हूं तो उसको जडमूलसे काटडालूंगी ! यह बातें करणसे जाकर कहूंगी और सबेरा होतेही तुझको देखलूंगी ।' इसप्रकार बडबडाती हुई तरला करणके समीप गई और वहां जाकर उसे भलीभांति उभारा ।

दूसरे दिन प्रभात होतेही करण, कांताकी कक्षामें जा पहुँचा कि जहां कांता बैठी हुई कुछ विचार कर रही थी, निकट जाय कहने लगा,-'कांता ! इस क्षत्रियपुत्र करण विना और कौन तुझे संभालने-वाला है ! तेरी आंखसे घायल हुआ यह दास तेरे चरणोंमें उपस्थित है छातीसे लगाकर मुझे शांतकर ।' इस बातके सुनतेही कान्ता क्रोधित होगई परन्तु पहिले तो नम्रभावसे कहनेलगी 'महाराज करण ! आप क्षत्रिय होकर निराधार अबलाकी लाज लूटनेको तत्परहुए हैं, आपका कर्त्तव्य ब्राह्मण, गाय और स्त्रियोंके पालन करनेकाही है । आपको तो परस्त्रीसे बातचीतभी न करना चाहिये ।' यद्यपि कांताने उस कामीक-रणसे इसप्रकार कहा परन्तु उन शब्दोंका प्रभाव उसके कानोंमें न हुआ तब करणकी दूसरी वृत्ति देख कांता दूसरे भावसे कहने लगी कि,-'म-

रा पति समस्त पृथ्वीको कँपादेनेवालाहै, अपनी स्त्री कांताके ऊपर कुदृष्टिसे देखनेवालेके प्राण वह अवश्यही लेलेवेगा । यदि मैं जानती कि वह अमुक स्थानमें हैं तो मुझको इससमय ऐसी असह्यवेदना भोगनी न पडती; और तेरे समान दुष्ट नीचके कुवचनभी न सुनने पडते; ऐसे कुवचन बोलनेवाले पापीकी तो वह जीभही निकाललेते!' इस बातको सुनतेही करणने कहा कि,–'तू जानतीहै कि मेरा पति जीवितहै परन्तु यह तेरा भ्रमहै, क्योंकि राजा जयशिखरीके साथही साथ वहभी स्वर्गको पहुंचगया ।' कांताने कहा, 'दुष्ट ! मिथ्या बोलतेहुएभी–तेरी जीभ क्यों नहीं टूट पडती मेरे गलेमें पडाहुआ यह हार उसके जीवित रहनेका साक्षीहै । अतएव जा ! यहांसे निकलजा ! यदि तुझको अपने प्राण बचानेकी इच्छाहो तो इस खिझाई हुई सिंहिनको मतखिझा, नहीं तो तुझको विपरीत फल प्राप्तहोगा । तेरे समान चाण्डालके दुराचरणसे राज्य नाशके चिह्न पाये जाते हैं दुष्ट ! तू निर्मूल होगा । इसकारण सतीको छेडना छोड यहांसे कालामुँह कर ।' एक स्त्रीसे इतना तिरस्कारित होकरभी कामांध राजा करण निर्लज्जके समान दीनहो उसके पैरोंपर गिर सब बातोंको सुनतारहा, फिर बिनती करता हुआ उसके समीपजाकर कहने लगा,–प्रिये ! अभीतो तुम्हें मेरी पटरानी होनाहै तुम क्रोध क्यों करतीहो ?' ऐसा कहकर उसको छूने गया, परन्तु कांता दूर हट गई और अत्यन्त क्रोधितहो कहने लगी कि 'तेरे राज्य तथा कोश (खजाने) में आगलगे ! तेरी जीभमें कीडे पडें ! तेरी माताको धिक्कारहै कि जिसकी कोखमें ऐसा कलंकी पुत्र उत्पन्न हुआ । रे नीच ! बावले ! स्वार्थी ! अधम ! तू सिंहिनको छेडकर बच सकताहै ? मैं अपने व्रत बलसेही तेरे प्राणोंका नाश कर सकतीहूं, परन्तु हत्याके डरसे ऐसा नहीं करती । दूरहो, नहींतो मुझ पतिव्रताके अंगका स्पर्श करही तू भस्म होजायगा ।'' पापी करणने ऐसी चेष्टा देख उससमय उसको छेडना उचित न समझा और विचारा कि, फल लेनेको वृक्षके नीचे जाकर उसके काटडालनेमें लाभ नहीं है, इससे फिर पाऊं

ऐसा विचार कांतासे अपनेको पुनर्वार मिलनेको कहकर वहांसे चला आया। कांता अकेली चिन्तामें पडकर प्राणघात करनेको तत्पर हुई परन्तु फिर अपनेसेभी अधिक दुःखवाली सीता, द्रौपदी, दमयंती आदिके चरित्रोंका स्मरणकर, भगवानपर भरोसारख उनकी प्रार्थना करते २ श्रमान्वित हो निद्रादेवीकी शरण हुई।

इससमय एक विशेष कठिनकार्य करनेकी दुष्ट इच्छासे करणकी समझाई हुई तरला चुपचाप खिडकीसे कूद कान्ताकी कक्षामें आई। कान्ताको सोती देखकर पहिले तो अत्यन्तही प्रसन्न हुई और अपने कुकर्म करनेका सुअवसर पाय ईश्वरको धन्यवाद देनेलगी। कुकर्म यही करनाथा कि सूरसेनका दिया हुआ मोतियोंका हार जो अपने सत्यके प्रभावसे कान्ताके गलेमें विराजमान था—उसको तोडकर सूरसेनके मरनेका विश्वास करानाथा कि जिस्से कान्ता किसीको अपना पक्षपाती न पानेके कारण करणकी आधीनता स्वीकारकरे। परन्तु तरला यह नहीं शोचतीथी कि यदि सत्यव्रतवाली सतीको पतिके मरनेका सत्य विश्वासभी दृढ होजाय तोभी वह अन्य पुरुषकी आधीनता स्वीकार करनेमें अपनी श्रेष्ठता नहीं मानती, मरनेकोही वह विशेष श्रेष्ठ मानतीहै। अन्तरात्मा सर्वत्र व्यापक है। वह जीवको कुकर्म और सुकर्मका ज्ञान कराकर कुकर्मसे छुटाताहै, परन्तु प्राणी मोहके वशहो बलपूर्वक उलटे मार्गमें दौडकर पश्चात्तापका पात्र होताहै। इससाधारण नियमानुसार कार्य करनेमें तत्परहुई तरला स्वार्थवश हो चेष्टा करने लगी। घोरकर्म्म करनेमें अन्तरात्माने रोका और उसके पापी हाथोंको कँपाकर मनको विकल करादिया। छाती धडकादी आंखोंके सामने अंधेरा छागया तब वह विचार करनेलगी कि,—'हाय! यह आकाशभी मेरे कुकर्मोंसे कांपने लगाहै, सूर्य्य चन्द्रभी अस्त होगये और तारेभी नहीं देखपडते—'हा ईश्वर! यथार्थमें मेरी बुद्धि भ्रष्ट होगई कि ऐसे नीच कर्म करनेमें तत्पर हुई! अरे क्या मुझको ऐसा कार्य करना चाहिये? नहीं नहीं ऐसा नहीं करूंगी' परन्तु मोहवशसे उसने कांपतेहुए हाथसे शस्त्रद्वारा उसमालाको तोडडाला

और तत्कालही खिडकीसे वाहर निकल अपने घरकी राह ली । करनेको तो यह कुकर्म उसने किया परन्तु पीछे उसके पश्चात्तापकी सीमा न रही । रात्रिका समयथा, इससे अकेली राजमार्गमें लडखडाती हुई चली जारहीथी । इतनेमें हरदासने जो किसी स्थानसे आरहाथा उसके कितनेही बोल सुने, तब उसको बुलाकर पूछपाछ की । तरलाने बातचीतमें अत्यन्त पश्चात्ताप और सन्ताप किया तथा अपने किये हुए कर्मका समस्त वर्णन उससे कह सुनाया । हारको टूटा हुआ जानकर सती क्या करैगी, इस डरके मारे उसका हृदय कांपनेलगा और दोनों विचारमें पडगये । हरदासको सूरसेनका पता मिलगयाथा और स्वयंभी कर्णके दिये हुए विषपानसे बचगयाथा । इधर करणकी नीतिसे प्रजाभी दुःख पारहीथी इससे तत्कालही सूरसेनको लानेके निमित्त उनके बीचमें सम्मति हुई । यद्यपि सूरसेन हरदासका विश्वास नहीं करताथा तथापि हरदास उसे बुलानेको गया; और जहांसे कांता आदिको लायागयाथा उसही तालाबके ऊपर सूरसेनसे मिल समस्त वृत्तांत निवेदन किया । 'करणको विष देनेके निमित्त तरलासे कहाहै और वह प्रातःकाल होतेहि अवश्य मरजावेगा । आपका समस्त राज्यही स्वाधीन होगा और सुशील कांता कि जिसकी खोजमें आप उद्भ्रान्त बने घूमरहेहैं उससेभी भेंट होगी ।' हरदासकी बातपर उसे विश्वास हुआ और वह कांतासे मिलनेके उत्साहमें उसके साथ होलिया ।

करणको विषदेकर तरलाभी सूरसेन तथा कांताको मैं क्या मुँह दिखाऊंगी, ऐसा विचार विष पीकर सोरही । प्रातःकाल होते २ दोनों यमपुरीको चलेगये ।

प्रातःकालको कांता जैसेही सोतेसे उठी वैसेही मालाकी लडमेंसे मोती सरसरा २ कर पृथ्वीपर गिरने लगे । यह देखतेही उसे निश्चय होगया कि मेरा प्रियपति परलोकको चलागया । उसका मुख सतीत्वसे प्रकाशित होरहाथा, पूर्णिमाके चन्द्रमाको देखकर जैसे समुद्र उछलता है वैसेही उसका हृदय उछलने लगा । पहिले तो द्वारके

समीप आय भीतरसे बन्दहुई जंजीरको खोला परन्तु करणको बाहर खडाहुआ जान फिर द्वार बन्द करके कहने लगी,-'सतीके छेडनेवालेको धिक्कारहै। हे कुलदेवी ! मेरे तीव्र व्रतके प्रतापसे इसद्वारके किवाड खुलजावें' इतना कहतेही द्वार खुलगया और वह स्वयं जय अम्बे जय अम्बे कहती हुई राजमार्गमेंसे निकली । उस सतीत्वसे भरे हुए प्रभावको निहार समस्त नगरके मनुष्य इकट्ठे होगये और सतीके पैरों पडनेलगे । सती उनको आशीर्वाद देती हुई बाहर चली अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे, सतीके आगे पीछे जयअंबेकी पुकार होनेलगी। कितने ही मनुष्योंने उसको पहिचानलिया कि यह सूरसेनकी स्त्री कांताहै । सतीको आश्रय देनेवाले लोगोंने करणका भय न कर उसके निमित्त चन्दनकी चिता बनाई । कांता प्रसन्नचित्तसे उसमें बैठ सूर्यनारायणसे बोली कि;-हे सूर्यनारायण ! जो मैं सत्यबलवाली हूं और दृढव्रतसे कभी चलायमान न हुई हूं तो आपकी एक किरणसे मेरी यह चिता जलउठे ! इतना कहतेही चितासहसा जलउठी । इधर सूरसेन और हरदास आ-रहेथे, कांताके सतीहोनेका समाचार पाय वह स्मशानभूमिकी ओर दौडे । वहां जाकर देखतेहैं तो कांताकी चिता प्रज्वलित होरही है और कांता 'हे प्राणनाथ ! कहतीहुई जलरहीहै । सूरसेन भी इस दृश्यको देखतेही 'हे प्रिये ! आया ऐसा कह जलतीहुई चितामें कूद कांताके साथही जलगया और स्वर्गको सिधारा ।

लालबाई ।

यह लालबाई उदयपुरके राणा जयसिंहकी पुत्री थी । उसका जन्म-समय भलीप्रकारसे नहीं ज्ञात होता, परन्तु वह समय मुसलमानोंही राज्यके प्रारम्भका था । भारतवर्षमें अफगान अपना बल बढाते जातेथे उससमय राणा प्रतापसिंहका प्रभावभी इतना प्रकाशित होरहा था कि उत्तरमें हिमालयकी तराईतक और दक्षिणमें गोमतीनदीतक उनके राज्यकी सीमा थी । लालबाई राणा जयसिंहकी इकलौती पुत्री थी उसके अतिरिक्त राणाके और कोई सन्तान न थी । लालबाई स्वरूप

तथा लावण्यतामें इतनी सुन्दर थी कि भारतवर्षके राजपूत राजाओंकी आंखमें वह कणके समान खटकती थी। उसकी गानकला अत्यंतही प्रशंसनीय थी, मनुष्य उसको गन्धर्व कन्याकी उपमा देते थे । सुर-सिंगार वजानेमें उसने इतना परिश्रम किया था कि समानता कर-नेमें कोई भी शक्तिमान न था सुरसिंगारको वह सदैवही समीप रखती थी। अर्द्धरात्रिको जब वह ऊंचेस्वरसे सुरसिंगार वजाती तो सुननेवाले कभी २ मूर्च्छित होजाते। इसके अतिरिक्त उसने ज्योतिषशास्त्रका भी भलीप्रकारसे अभ्यास किया था।

जब लालबाई छह महीनेकी बालिका थी, तब कच्छभुजका राजा ताजपाल अपने सम्बन्धके कारण महाराणाके राज्यमें आ रहा था । उसने अपने प्रतापसे राणाके राज्यकी वृद्धि की थी।

और उसकी इतनी प्रतिष्ठा वढाईथी कि राजा महाराजाओंने राणाको 'महाराणा' की पदवी दीथी। उदयपुर उससमयमेंभी भाग्यवान गिना जाताथा। कितनेही दिनोंके उपरांत ताजपालका पिता मरगया और उसको स्वदेश जानेकी आवश्यकता पडी । उससमय राणाने उसका योग्य सत्कार नहीं किया, इसकारण वह अपना अपमान जान क्रोधित हो राजमहलमें लालबाईकी माता जवाहरबाईके समीप गया; वह उसको माताके समान मानताथा अतएव क्रोधावेशमें कह उठा,—'माता मैं अपने वंशके राजमुकुटको धारण करने जाताहूं अब अगले वर्षमें उदयपुरको रणभूमि वनाय शूर सामन्तोंसे युद्धकर राणाका अहंकार तो-डूंगा। मैं इस उदयपुरको ऐसी प्रचण्ड आगसे फुकूंगा कि यहां महा-पद्मिनी जवाहरबाईके अतिरिक्त और कोई नहीं वचेगा।' उसकी ऐसी बातोंको सुन रानी स्तब्ध होगई और इस क्रोधके होनेके कारण-को पूछा। कच्छपति ताजपाल क्रोधमेंही बोला कि,—'मैं अपने पिताके मरने पीछे राजमुकुट धारण करनेको स्वदेश जाताहूं, इससमय महा-राणाने मेरा कुछभी सत्कार न किया वरन् उपेक्षा दिखाई क्या यही बात उनको उचित थी? क्या राणाजी ताजपालकी चमत्कारिक युद्ध-

कला और बलको भूलही गये? माता! तुमने जो मुझको पुत्रभावसे रक्खा, इसकारण तुममें अत्यन्तही भक्तिहै, इसका बदला में तुम्हारी ही इच्छाके ऊपर रखताहूं जो चाहिये सो आज्ञा दो। एक हाथमें जो यह चमकती हुई तलवारहै वह राणाकी ओरका वैर है और दूसरे हाथमेंका जो यह कमलका फूलहै वह उदयपुरसे मिलीहुई शिक्षा अथवा प्रीतिहै। इनमेंसे जो चाहिये सो कहो।' जवाहरबाईके निकट इससमय लालबाईथी, उसने तत्कालही ताजपालके हाथमें उसको सौंपदिया। शरदृतुके आकाशमें पूर्णिमाका चन्द्रमा जैसा शोभित होताहै वैसेही लालबाई ताजपालके हाथमें चन्द्रमाकी समान शोभित होनेलगी। ताजपाल उस सुकुमारी कन्याको निकट देखतेही कुछ नरम पड़गया। तब जवाहरबाईने उससे कहा—' ताजपाल! तुम अपना क्रोध छोड़ो और हमपर प्रेमकरो। सेना लाकर इस उदयपुरमें रक्तबहानेका जो तुमने निश्चय कियाहै और महाराणाके संहार करनेका विचारहै सो छोडदो। इस मेरी मोहिनी रूपिणी लालबाईको कि जिसको मैंने तुम्हारे हाथमें अर्पण कियाहै और जो तुम्हारेही योग्यहै, स्वीकार करो यह योग्य होनेपर तुम्हारी पटरानी होगी।' कांतिमान रक्तवर्णकी आकृतिमेंसे अपने क्रोधको निकाल ताजपालने लालबाईका चुम्बनकर उसे स्वीकार किया और उसको रत्नोंकी माला पहिनाई। तदनन्तर राणाके वैरको भुलाय स्वदेशको जाय गद्दीपति हुआ।

महाराणी जवाहरबाईने उसे शांत तो करदिया परन्तु यह बात महाराणासे न कही और समयके हेरफेरसे स्वयंभी भूलगई। केवल ताजपालके विना और किसीकोभी उसका स्मरण न रहा। जब लालबाई योग्य वयकी हुई तब महाराणा जयसिंहजीने स्वयंवर करनेकी इच्छा की और उसमें निश्चय हुआ कि 'लालबाई जिसको चाहे उसको वरे।' राजा महाराजा निमन्त्रण पत्र भेजकर बुलायेगये, परन्तु केवल ताजपालकोही निमन्त्रण न दियागयाथा। जिन २ राजकुमारोंको निमंत्रण दियागया वह सब अपने साथ योग्य सेनाले उदयपुरकी ओर चले और

निमन्त्रण देनेको निकलाहुआ राजदूत (पुरोहित) भी न्योता दिये हुए उदयपुरकी ओर आताथा, इतनेमें वह मार्ग भूलकर कच्छदेशकी ओर जा निकला । उससमय ताजपालभी शिकारको आयाथा अतएव उससे वातचीत हुई।राजा ताजपालने लालवाईके स्वयंवरकी बात सुन दूतसे कहला भेजा कि,–' विप्रदेवता ! अपनी महाराणीसे कहना कि विस्मरणका फल पकगयाहै और उसका स्वाद थोडेही समयमें चक्खोगे।। राणासे लालवाईका स्वयंवर न होसकेगा क्योंकि रानीने उसे मुझको अर्पण किया है यदि वह बात स्वीकार न हो तो ठीकहीहै, परन्तु स्वयंवरमें मुझे निमन्त्रणभी नहीं दियागया, अतएव देखताहूं कि अव स्वयंवरकी कैसी शोभा होतीहै ? जो उदयपुरको शोकमय वनाय स्वयंवरमें रक्तका समुद्र न वहाऊं और स्वयंवरमें आयेहुए राजाओंको छिन्नभिन्न न करदूं तो मेरा नाम ताजपाल नहीं ! ' वह त्रासदायक संदेशा सुन दूत तो वहांसे चलागया और ताजपाल अपनी सेना तइयार करनेलगा । एक हजार हाथी, वीसहजार ऊंट साठ हजार घुडसवार तथा पैदल आदिकी तीनलाख संख्यावाली सेना इकट्ठीकर और सेनापति स्वयंही वना और चुपचाप वहांसे चल निकला ।

राजदूत उदयपुर गया, परन्तु ताजपालका सन्देशा कहना भूल स्वयं स्वयंवरके वनावमें लगगया । राणाने स्वयम्वरकी वडीभारी तइयारी की थी । उनको ताजपालके सेना ले आनेका कुछ भी समाचार न मिला, इसकारण सैन्य सम्बन्धी कुछ तइयारी न हुई । 'रक्तमें स्नान करना अथवा स्वयम्वरसे लालवाईको लाना, यह निश्चयकर गुप्तवेशसे कवचधारणकर स्वयंवर मण्डपमें जहां राजाओंके योग्य सिंहासन थे वहीं ताजपालभी वैठा हुआ उचित अवसर देख रहा था । लालवाई मण्डपमें आकर अपने निमित्त निश्चय किये हुए सिंहासनपर वैठी, उसको सव राजाओंकी सम्पत्ति वल,गुण, विद्या, कुल तथा वयकी कीर्तिका वर्णन सुनाया गया।शक्ति, सौन्दर्य, स्वरूप तथा प्रेमके खोजनेवाली लालवाईकी आंखमें अनहल-

वाडेका राजकुमार अनहलराय ऊँचा और उसकी देदीप्यमान मुखमुद्रा-पर मोहित हो इस चतुरतासे उसने उसके ऊपर वरमाला फेंका कि वह उसकेही गलेमें पडे। परन्तु अनहलरायके गलेमें माला पडनेके पहिलेही 'सावधान' ऐसा मेघगर्जनके समान शब्द स्वयंवर मण्डपमें हुआ और वह माला भालेके द्वारा छीनली गई। वरन् छीननेवालेने उस वरमालाको शीघ्रतापूर्वक अपनेही गलेमें डाल लिया। माला डालकर उसने एक सुवर्णपत्रपर लिखाहुआ लेख महाराणाकी ओर फेंका। वह लेख उठाकर सभामंडपमें बांचा गया, वह महाराणाजयसिंह और महाराणी जवाहरबाईकी ओरसे मिला प्रतिज्ञापत्र था और उसके ऊपर दोनोंके नामकी मोहर भी थी। उसमें लिखा था कि,-"कच्छभुजपति ताजपालको लालबाईके विवाहनेका पक्का लेख हुआ जबतक लालबाई योग्य वयकी हो तबतक जवाहरबाईही इसकी रक्षा करे इसके योग्य वय होनेपर व्याह ताजपालसेही किया जावे।" इस लेखके सुनतेही मण्डपमें बडीही खलबली मचगई और अनहलराय स्वयं तलवार निकालकर खडा हो गया। उस समय जवाहरबाई लालबाईके समीप खडी थी सो मूर्छित हो गई। स्वयंवरमें बैठे हुए राजा अपनी २ तलवार मियानमेंसे निकाल छेडे हुए सांपके समान फुंकार मारते हुए उठे। राज्यनियमको तोडनेवाले महायोद्धा राजपुत्रको शिक्षा दूंगा, ऐसा निश्चय करके अनहलरायने अपनी तलवार बलपूर्वकसे खींचकर ताजपालके ऊपर चलाई। ताजपालने उसको बचाकर महानाशकारक भाला मारा; उसही समय उदयपुरके बाहर खडी हुई सेना शहरमें पानीके वेगके समान घुसी और गढको घेरकर ध्वंसकर दिया। राजकुमारोंकी मारधाड़में अनहलरायका ताजपालके भालेसे मरणहुआ और सेनाके आजानेसे ताजपालने देखतेही देखते राजाओंके गलेमें तलवाररूपी माला पहिना दी। वह स्वयंवरमण्डप थोडेही देरमें रक्तकी नदीके समान दिखाई देनेलगा। सातघडीमें उदयपुर हुए न हुएके समान होगया और उसका नाम निशानभी न रहा। तदनन्तर जब

राणाजयसिंहसे युद्ध करनेका समय आया तब राणाने उस लेखके अनुसार सब सभाके सामने अपनी अज्ञानता प्रगट की, इसकारण ताजपालने राणासे युद्ध न किया। अन्तको क्षत्रियोंमें केवल ताजपाल और राणाही शेष रहने पाया। ताजपाल वहांसे एकसाथ महलकी ओर चला, परन्तु जैसेही वहां पहुंचा कि वैसेही दैवयोगसे लालबाई तथा उसकी माताके रहनेका महल अचानक टूटपडा और सहस्रों मनुष्य उसके नीचे दबकर मरगये इस होनहारको देख राणा मूर्च्छित होगये और ताजपालने वहां आकर देखा तो लालबाईका महल टूटाहुआ पाया। यह देखतेही उसके प्राणभी उडगये और राणाभी थोडी देरमें स्वर्गलोकको सिधारा। नवलक्ष मनुष्योंके बीचमेंसे निराश हुआ ताजपाल पश्चात्तापही करता हुआ रहगया। परन्तु तौभी हाय मार कर वह पृथ्वी पर गिरा और प्राण छोड दिये।

वीरा।

चित्तौरके राणा उदयसिंहकी उपपत्नी वीराका वृत्तान्तभी विख्यात नारियोंके सम्बन्धमें कुछ कम नहीं है। नामके गुणानुसार शौर्य तो उसमें स्वाभाविकहीसे विराजमानथा, यद्यपि उदयसिंहमें ऐसे उत्तम गुण न थे। युद्धकला तथा साहसमें वीरा बहुत बढीहुई थी, परन्तु यह अबतक प्रमाणित नहीं हुआ कि यह किसकी पुत्रीथी और किसप्रकारसे उत्पन्न हुई, केवल अपने पराक्रमसेही यह प्रसिद्ध हुई।

दिल्लीके अकबर बादशाहने चित्तौरगढके ऊपर दो बार चढाई कीथी, यह भाट और चारणोंके लेखसे जानाजाताहै। प्रथमबारकी चढाईमें मुसलमानोंको बडीभारी हार प्राप्तहुई, परंतु इसबातको, अपने चक्रवर्ती राज्यका अपमान बचानेके निमित्त मुसलमान इतिहासकारोंने नहीं वर्णन किया। जिससमय चित्तौरका सर्वस्व नाश होगयाथा, उसही समयकी चढाईका वर्णन उन्होंने लिखाहै, परन्तु जिससमय उन्होंने पराजय पाईथी और रणसंग्राममेंसे वे भाग गयेथे उस समयका

वर्णन अपनी अपकीर्ति बचानेके निमित्त उन्होंने नहीं लिखा इस वीर बाला वीरासेही यवनलोगोंको अत्यन्त अपकीर्ति प्राप्त हुईथी।

अकबर बादशाह जब अपनी गर्वीली सेनाको ले चित्तौर गढके ऊपर चढआया तब उसकी राक्षसी भयंकर सेनाको देख कायर उदयसिंह उससे युद्ध करनेको साहसी न हुआ उसने अकबर बादशाहको बलवान समझ आधीन होजानाही उत्तम समझा। परंतु शूरवीर राजपूतोंने कि जिनकी नस २ में युद्ध करनेके निमित्त रक्त उछल रहाथा उसको पानीपर चढाया, और जब सामन्तोंने राज्य भ्रष्ट होनेका भय दिखाया तब अन्तको विवशहो बादशाहसे युद्ध करनेको तत्पर हुआ। उसके हृदयमें साहस, शौर्य, धैर्यता, दृढता तथा प्रतिज्ञाका कुछ प्रकाश नथा ? इसलिये वह मुगलवीरोंके आक्रमणको कैसे रोक सकताथा कायर किस भांति और किस उत्साहसे युद्धकर सकताहै ? तथापि राजपूत सेनाने अकबरके विरुद्ध युद्ध किया। परंतु निरुत्साही सेनापतिकी सेना कबतक युद्धकरे? राजपूत उत्साह और उत्तेजनके न मिलनेसे रणभूमिको छोडकर भाग गये और अभागे उदयसिंहको अकबर बादशाहने पकड बन्दी बनाय अपनी सेनामें रक्खा। इसप्रकारसे मेवाडका अधिपति मुसलमानोंके हाथ बांधागया। वीरजननी मेवाडभूमि आज कलंकित हुई, क्योंकि मेवाडमें इसप्रकारका दृश्य कभी न होने पायाथा। मेवाडके राजा तो यही बात समझतेथे कि युद्धमें मरेंगे या मारेंगे। वह शत्रुके हाथमे जीतेजी किसी समयभी नहीं गये। उदयसिंह दिल्लीपतिके हाथमें बन्दीहुआ, यह बात जान उसके राजकुटुम्बमें बडा शोक फैलगया और सामन्तोंकी सभा विचार करनेके निमित्त बैठी। परन्तु उदयसिंहको शत्रुके हाथसे छुडानेका उपाय किसीकोभी नहीं सूझ पडताथा;कोई सर्दार अपनी सम्मति नहीं प्रकाश करताथा। इससमय समस्त चित्तौर विधवा स्त्रीकी समान निस्तेज और तपस्वीके समान निस्पृह जानपडताथा। सेनापति न होनेके कारण उत्साहभंग होजानेसे सब कोई अपने २ स्थानपर चित्तौरमें पडेथे। परंतु कोई वीर उनके हाथमें नहीं आताथा। चित्तौरके इस मलीनभावको देख

उदयसिंहकी उपपत्नी राणी वीराके रक्तमें चंचलता उत्पन्न हुई। क्रोध और अभिमानसे उसका चेहरा लाल होगया, उसने लाजके बंधनको तोड लोहेका वख्तर पहिना। हाथमें धनुषबाण ले वीररमणी वीरा बिजलीके समान चमकी और मेघके समान गर्जनकर सभामण्डपमें आई। तदनंतर मुक्तकंठसे सभाके मध्य में बोली,-'अहो! मैं खडीहूं,क्या तुम सब देखतेहो?क्या मेवाडकी भूमि आज वीरहीन होकर वैधव्यको भोगतीहै? क्षत्रियाणियोंके गरम दूधमें क्या आज कीडे पडगये? जो असंख्य राजपूत चित्तौरमें देख पडतेथे क्या वह थोडीही देरमें निर्भय अवस्थाको प्राप्त होगये? वीर क्षत्री क्या एक ढीलेढाले मांसका लोथडाही हैं? अरे क्षत्रियाणियोंने क्या अचेतन मांसके पुतलेही उत्पन्न कियेहैं? देशाभिमान, कुलाभिमान और साहसने क्या आजही आर्य-भूमिको त्यागदिया? वीरता और तेजस्विताने क्या एकसाथही परलोकको गमन किया? हाय! हाय! आज मैं यह क्या देखतीहूं! मिट्टीके जड पुतलोंकी अपेक्षाभी क्षत्रियोंकी हीनदशा देखते हुए आज मेरी छाती फटतीहै। अरे! आर्यवीर कहांगये? अब क्या ऐसा कोईभी स्वामिभक्त तथा देशहितैषी वीर न रहा, कि अपने स्वामीको शत्रुके हाथमें बंधादेख उसका रक्त न उछल रहाहो!'

वीराके ऐसे वीर वचनोंको सुनतेही, पूर्णिमाके चन्द्रमाको देखकर समुद्र जैसे उछलताहै वैसेही सब वीर एकसाथ गर्जनकर क्षणभरमें वीराके सन्मुख आय इकट्ठेहुए राजपूतसेनाको नये उत्साहमें उत्साहित-कर कायर पुरुष उदयसिंहकी उपपत्नी वीरा सेनाके सन्मुख खडीहो भीमके समान प्रचण्डबलको प्रकाशकर गर्जन करतीहुई खडी रही, यवनों और राजपूतोंके बीच महा दारूण संग्राम हुआ। अस्त्रशस्त्रोंके तीव्र आघातसे अंतमें यवनसेना व्याकुल होगई और राजपूतोंके पराक्र-मके सामने उनकी कुछभी न चली। बहुतसे यवन मारेगये अंतमें 'तोबा तोबा'करतेहुए भगनेलगे, रुद्रचण्डा राजपूतबाला अधिक उत्साह-में भरगई। यवनोंको निर्बलदेख राजपूतोंको आवेश होआया और वीररमणी वीरा अपने अविचल मुकुटका प्रकाश करतीहुई अकबरके

सेनापतिकी ओर बढनेलगी । वीरनारीकी अद्भुत वीरताको देख मुगलसम्राट् स्तंभित और अचंभित होगया अंतमें जब उसको कुछभी न सूझा तब हानिका संदेहकर सेना समेत रणभूमिको छोडभागा। एक स्त्रीके साथ युद्धमें ऐसा भारतवर्षके चक्रवर्ती मुगलसम्राट् अकबरनेभी पराजय पाई; उस स्त्रीके बाहुबलसे त्रासित होकर मुगल सेना भागी और चित्तौरकी प्रजा निश्चिन्त हुई ।

ताईबाई ।

थोडाही समय बीता कि बम्बईका कराडप्रांत, भवानराव नामक प्राचीन पंतप्रतिनिधिके अधिकारमें था । उसके मरनेपर परशुरामपंत नामक उसके पुत्रको राज्यगद्दी मिली । यद्यपि परशुरामके काशी, लक्ष्मी और ताईनामक तीन स्त्रियेंथीं तौभी वह अत्यन्त विषयी, लंपट अपव्ययी था। ऐसे अनाचारी और पातकी पतिपर पूर्ण भक्तिभाव रखकर ताईबाई अपने पातिव्रत धर्मको सँभालेरही और उसके दुःखके समय पतिको सहायता दी । इस साध्वीके चरित्रसे यही बात ग्रहण करने योग्यहै ।

पुत्रको अनाचारी और अपव्ययी देख राज्यमाताको अत्यन्त खेदहुआ क्योंकि वास्तवमें वह राज्यकार्यके अयोग्य था।उसने बलवन्तराव नामक एक चतुर कर्मचारीकी सहायतासे राज्य चलानेका विचारकिया,परन्तु कुमार परशुरामने उसमें अपनी अनिच्छा प्रगटकी।अन्तमें राज्यमाताने इस झगडेके निबटानेको बाजीरावपेशवाकी शरण ली । दोनों ओरकी व्यवस्था सुनकर पेशवाने राज्यमाताकोही सर्व राज्यकार्यका अधिकार दिया । राजपुत्र इस अन्यायसे अत्यन्त क्रोधित हो पेशवा सर्कारके विरुद्ध आक्रमण करनेको तत्पर हुआ । परन्तु पेशवाईका बल इतना बढ़या कि परशुरामकी कुछभी न चली । अपनी ऐसी निर्बल स्थिति देख सितारेके राजकर्त्तासे सहायता मांगी; तौ भी वह संग्राममें पेशवाई प्रतिनिधि

बापूगोखलेके हाथ पकडागया । बापूगोखले यदि परशुरामके समान पापी होता तो उसकी निर्दोष स्त्रियोंकी अवस्थाको न जानसकता परन्तु उसका अन्तःकरण कुछ दयावान था इससे परशुरामकी दो स्त्रियोंके पोषणके निमित्त भलीप्रकारसे प्रबन्ध करदिया, और तीसरी ताईबाई जो जातिकी तेलिनथी, न जाने किसकारणसे उसका प्रबन्ध न किया । ताई पतिव्रता और सद्गुण सम्पन्न थी उसकी प्रकृति स्वतन्त्रथी वह भला अपने पतिके शत्रु और दूसरे पुरुषसे सुखकी क्या आशा रख सकतीहै ? उसने अपने प्राणनाथको बन्दी अवस्थामें देख अनेक प्रकारसे उसे छुडानेकी प्रतिज्ञा की । पीछे वह चुपचाप पेशवासे विरुद्ध युद्ध करनेके निमित्त सेना एकत्र करने लगी और सुअवसर देख भैसेरके दुर्गपर आक्रमणकर परशुरामको छुडालाई । बलवान पेशवा सर्कारको इस बातसे अत्यन्त आश्चर्य हुआ; बरन् अपनी दृढ चौकीमेंसे एक स्त्री द्वारा अपराधीके भागजानेसे अपना बडा तिरस्कार माना । उसने बापूगोखलेको सेना समेत भेज परशुरामको फिर पकडलानेकी आज्ञा दी। बापूका विजय हुआ और फिर परशुरामको पकडलाया । परशुराम-पर पेशवा सर्कारका इतना अधिक क्रोध हुआ कि उसके अधिकारमें सरसोंभरभी पृथ्वी न रहनेदी परन्तु उसकी स्त्री ताईबाई पहलेसेही बासोटाके किलेपर अधिकार कर बैठीथी उसने उस किलेके समस्त गावोंपर जो पेशवाके थे अधिकार करलिया और वहांपर अपना पूर्ण अधिकारकर शत्रुसे युद्ध करनेकी तइयारी की ।

यह सब समाचार पेशवाके कानमें पहुंचे तब गोखलेको कड़ी आज्ञा दी कि किसीप्रकारसेभी ताईको पकडकर अधिकारमें करो । ऐसा हमको मानना पडेगा कि ताईकी वीरतामें कुछ न्यूनता न थी; क्योंकि टीपू और हैदरअलीके समान बलवान योद्धाओंको भी उसने नाच न-चायाथा और बापूगोखलेसेभी एकसाथ नहीं पकडी गई। उसने आठ महीनेतक बराबर उसके पकडनेको यत्न किये, परन्तु न पकडसका ।

बापूगोखले अपनी बडी २ बडाई करके पेशवासे अपना बचाव करता था, परन्तु अन्तःकरणमें ताईसे भय करताथा। किंतु दैवकी गति विचित्रहै, ताई जिस किलेमें थी वहां अनाजकी कोठीमें सहसा आग लग उठी तब उसकी सेना भूखसे व्याकुल होनेलगी। बापूगोखले यह सुअवसर पाय उसपर चढआया और ताईको पकड बंदी किया फिर छोडदिया उसकी सेना किंचित् भी रक्षा न करसकी। पेशवा सर्कारने ताईकी वीरता और पतिभक्ति देख अत्यन्त प्रशंसा की और उसके निर्वाहके निमित्त पूर्ण प्रबन्ध करादिया।

चनवाई।

बेलगांव जिलेके कितुर स्थानमें सन् १७७५ ई०के लगभग देशाई नामक राजकर्त्ताका अधिकार था। वह देशाई पेशवा सर्कारको प्रति-वर्ष ७५००० रुपया कर देताथा। अन्तमें खडकीकी लडाई होनेके उपरांत महाराष्ट्रियोंका राज्य प्रतापी अङ्गरेजोंके अधिकारमें गया और देशाई राजा उन्हींको कर देनेलगे।

सन् १८२४ ई०में देशाई निःसन्तानही मरगया तब कारबारियोंने देशाई वंशके एक बालकको गोद लेनेका विचार किया। उससमय देशाईकी वृद्ध माता चनवाई अत्यन्त बुद्धिमान कहातीथी, परन्तु हम ऐसा मानेंगे कि वह अधिक बुद्धिमान न थी। क्योंकि इस घटनाके होनेपर जब सरकारी अमलदार उसके स्थानपर प्रबन्ध करनेको आया तब वह आवेशमें आय उससे विरुद्ध होगई। अमलदारको अपने किलेमें आने-से रोक कठोर बातें कहला भेजीं, इससे विवशहो सर्कारको सेना मंगाय उस किलेको घेरलेनेकी आवश्यकता पडी। इससे बूढी चनवाई चिढकर अपनी सेनाको सजाने लगी। बलवानके साथ निर्बलका भिडनाभी मूर्खताही है किन्तु वह बिना विचारे बलवान ब्रिटिश राज्यके कितने एक मनुष्योंको मार वीरता दिखाने लगी, परन्तु क्षणभरके भीतरही पकडी गई।

इस चनवाइक चारित्रसे अविचारी साहस करनेवाली और भीरु हृदयकी स्त्रियोंको शिक्षा प्राप्त होती है कि यदि अकस्मात् कोई बात अपनी अप्रसन्नताकी सामने आजावे तो उतावलीसे आगेको पैर न बढाना चाहिये अपनी जो इच्छा हो वह अधीनी और विनयसे प्रगट करनी योग्य है और पतिका माहात्म्य व राज्यकर्त्ताका सदैवही मान करना चाहिये यह बात भी इस चारित्रसे प्रकट होती है ।

रानी भवानी ।

यह महारानी छातिम गांवके चौधरी आत्मारामकी पुत्री थी । इसका व्याह नाटौरेके जमीदार राजा रामजीवनरायके पुत्र रामकांत वरेसे हुआ था, रानी भवानी रूपवान, लावण्यवती, धर्मशील और परोपकारिणी थी ।

राजा रामजीवनरायका दयाराम नामक एक प्राचीन नौकर था । वह एकबार राजकुमार रामकांतको कुछ भूल करता हुआ देख शिक्षा देने आया परन्तु रामकांतनें अविचारसे उसको अलगकर दिया । दयाराम वहांसे चला गया और बङ्गालेके सूबेदार नव्वाब अलीवर्दीखांके यहां पहुँचा कि जिसका उस राज्यपर बहुत कुछ कर चढा हुआथा। दयारामने वहां जाकर प्रकट किया कि,–'राजा रामकांतने बत्तीस लाख रुपया इकट्ठा किया है, और दो लाख रुपयेका तो वह शिरपेच पहिनेहुए हैं । फिर क्या कारण है जो आपको कर नहीं देता ।'

इस बातसे नव्वाबने सेना भेज रामकांतकी मिल्कियत लूटली, वरन् राजकाजके निमित्त उसे अयोग्य ठहराया, इसकारण देवीप्रसाद नामक उसके भतीजेको समस्त अधिकार सौंप दिया राजा रामकांत इस घटनासे इतना दुःखी हुआ कि रानी भवानीको साथ ले वहांसे चला गया । यद्यपि रानी गर्भवती थी तथापि बिना कुछ कहे सुने पतिकी आज्ञानुसार वहांसे चल पडी । चलते २ वह गङ्गाके किनारे आय नावपर बैठ मुर्शिदाबाद आई और एक छोटा घर लेकर रहने लगी ।

दैवयोगसे एकवार रामकांत और दयारामका मिलाप हुआ। दयारामने रामकांतसे कहा कि,- 'जो ५०००० रुपया दो तो तीन दिनमें तुमको तुम्हारा राज्य दिलवादूं और सबदुःख दूर होजावें। रामकांतका मन धनके कारण अत्यन्तही दुःखी हुआ वह दीन वचनोंका अधीनी करता था कि रानी भवानी बोल उठी,-"प्राणनाथ ! आप किसकारण खिन्न होते हो ? जो अर्द्ध लाख रुपया देकरही आपको राज्यपाट मिलताहो, आपका मन प्रसन्न रहता हो तो मेरे यह सब आभूपण ले जाकर उसे देदो ।" ऐसा कह रानीने सब आभूपण निकाल दिये । दयारामने वह सब नव्वावको दे रामकांतकी वडाई की और अन्तमें समस्त राज्याधिकार उसीको दिलवादिये । राजा रामकांत और रानी भवानीके पवित्र प्रेममें निरन्तर वृद्धि होतीरही । पीछे उसके दो पुत्र हुए । दैवेच्छासे यह दोनों पुत्र मरगये और राजारामकांतभी सोलहवर्ष राजगद्दी भोग परलोकवासी हुआ । रानी भवानीने वैधव्यधर्मका पालन कर धर्मशील स्त्रियोंमें अपनी कीर्ति फैलाई, नहीं वरन् भलीप्रकारसे राजकाज कर लोकप्रियता प्राप्त की । काशीपुरीके कितनेही स्थानोंमें इस साध्वीने धर्मशाला वनवाई, कंगालोंको भोजनदिया, जहां पानीका दुःख था वहां तालाव वनवाये । लगभग ८० वर्षकी आयुमें सुयश और सुकीर्तिको अपने स्थानमें छोड स्वर्गधामको पधारी ।

मरीची ।

यह स्त्री लेपचावंशके यशलालसिंह नामक प्रधानकी पुत्रीथी, इसकी निवासभूमि शिकममेंथी । लेपचाके वंशजोंका स्वभाव और स्वरूप अत्यन्त वर्णनीयहै । इन्हीं कारणोंसे यह दयालु कहलाते हैं कि चाहे जैसी हानि होजावे परन्तु किसीके साथ झगड़ा नहीं करते अन्यायी का अनादर करने नीतिवानको मानदेने और दुराचारी मनुष्योंको दण्डदेनेपर वह सदैवही तत्पर रहतेहैं । कहाजाताहै कि प्राचीनकाल-से चली आती हुई स्वयंवरकी प्रथा इनमें अवतक प्रचलित है ।

मरीचीदेवी अत्यन्त दयालु और रूपवतीथी । यशलालने उसको बालकपनसेही व्यवहारिक तथा धर्मसम्बन्धी ऊँची शिक्षादी । इसकारण अपने बुद्धदेवकी उपासनामें नित्य तत्पर रहती तथा पापकर्मोंसे दूर रह पुण्यकार्योंको करती रहती । तिब्बतमें लामा नामक जो धर्माचार्य कहातेहैं उसके एक संन्यासी शिष्यसे इस स्त्रीको संस्कृत और हिन्दी भाषाका ज्ञान प्राप्त हुआथा । वीसवर्षकी तरुण आयुमेंभी सवभांति से सावधानथी । उसके पातिव्रतपर यशलालको पूर्ण विश्वासथा क्योंकि इतनी वयमें पांच पापी पुरुषोंने उसके भ्रष्ट करनेका यत्न किया परन्तु उसने स्वयं उनको घायल कर अपने पतिव्रतधर्मकी रक्षाकीथी ।

इस देशकी कुमारी तथा व्याही स्त्रिय अपने पातिव्रतधर्मकी रक्षा करनेके निमित्त इतनी आग्रहवान होती हैं कि इसकीही रक्षाके निमित्त अपने दामनमें एक छुरी रखती हैं । उनमें जो कुमारी होतीहैं वे छोटी छुरी रखतीहैं । इस वातसे जानपडताहै कि प्राचीन समयसेही उन लोगोंमें अस्त्र वांधनेकी प्रथा चली आतीहै ।

एकदिन मरीची अपनी वहिनके साथ वाहर घूमकर उससे पृथक्कहीं एक स्थानमें वैठीथी कि इतनेमें कोई मनुष्य आय उसे ललचाकर कहने लगा कि, 'अव मेरा राज्य होगा, अतएव तू मेरे साथ चल, मैं तुझे वहुतही सुखी करूंगा ।' मरीचीने उसको कुछभी उत्तर न दिया, परन्तु तौभी वह विषयांध समीप आय उससे ठठेलियें करनेलगा, मरीची तत्कालही वहांसे हटगई । परन्तु वह पापी ज्योंही उसका हाथ पकडनेगया कि त्योंही उसने ढकेला और हटकर कहा कि,-'दुष्ट ! पापइच्छाका फल तुझे तत्कालही मिलैगा ।' झिक करनेके उपरांत यह दुष्ट वलपूर्वक उसे पकडने लगा कि तत्कालही उसने युक्तिसे अपनी छुरी निकाल उस पापीकी छातीमें मारी । इसकारण वह मरगया और मरीची अपने धर्मकी रक्षाकर वहांसे चलीगई ।

दूसरेदिन विधर्मियोंने शिकमका मंदिर लूटा और वे इधर उधर घूमनेलगे। उनके विरुद्ध युद्ध करनेके निमित्त कितनेही शूरवीर पुरुषों के साथ वीर स्त्रियाभी तत्परहुई। इन्हीं वीरनारियोंके साथ पराक्रमी मरीचीभीथी। सेनापति घोडेपर चढ रणभूमिमें आया, वह अपने सिपाहियोंकी लाशको देख अत्यंत आश्चर्यितहुआ। थोडीही दूर आगे बढनेपर उसके शरीरपरभी तीर आया। वह चारोंओर दृष्टि फैलाकर देखनेलगा तो उसको दिखाई दिया कि एक स्त्री अस्त्र शस्त्र धारणकिये हुए पीछेसे आरहीहै। अंतमें वह बलवान सैनिक पुरुष इसकालिकाके समान प्रचंडदेवीके समीप अस्त्रडाल उससे आधीन होकर कहने लगा,- 'हे वीरनारी ! युद्धमें घायलहुए योद्धाओंपर अब हथियार न चलाना, मैंभी तुम्हारे आगे अपने हथियार छोडदेताहूं।'

यह मनुष्य बातोंसे तो सीधा जान पडताथा, परन्तु उसका अंतःकरण अत्यंत अधमथा। मंदिरकी स्त्रियोंकी ओर पहिलेसेही वह अत्याचार करनेकी इच्छासे घूमताथा। वह धर्मगुरुओंके ऊपर अन्याय करताथा। परन्तु अंतमें उस ठगने नम्रतासे क्षमामांगी,-।

यह देख इस युद्धमेंभी नम्रहृदयवाली मरीचीको दया आगई और उसने कटार पृथ्वीपर डालदी। शरणहुए सेनापतिको अभय दिया और उसकी तलवार ले मंदिरमें जाकर सबसे मिली। मंदिरके मनुष्य मरीचीके पराक्रमसे प्रसन्नहुए और धर्मरक्षाके निमित्त उसकी वीरता तथा पापी मनुष्योंपरभी उसकी दयाको देख स्तुति करने लगे।

सुन्दरबाई।

यह सुंदरबाई वल्लभीपुरके स्वामी—केसरीसिंहकी पुत्रीथी। तर्कशास्त्रका उसने बालापनसेही अभ्यास कियाथा, इससे तथा ईश्वरकी कृपासे उसकी बुद्धिकी विलक्षणता कुछ औरही प्रकारकी होगईथी। वह तर्कशास्त्रके साथ २ युद्धकलाभेंभी चतुरथी। शरीरका गठन बुद्धिके अनुसार सुंदर और तेजस्वीथा. घोडेपर चढनेकी विद्यातो मानो उसको

पूर्वजन्मसेही प्राप्त होगईथी । वह जंगल तालावों पर सदैव फिरा करती–तथा स्वच्छ वायु और पानीसे बहुत प्रसन्न रहतीथी इसही आनंदी प्रकृतिके कारण–उसने एक सुन्दर महल तथा बाग अपने गांवकी सीमापर बनवायाथा, और वहींपर बहुधा रहतीथी ।

एक दिन सखियोंके संग विहार करतीथी कि इतनेमें वल्लभीपुरका पाटवीकुमार वीरसिंह शिकारके निमित्त निकला हुआ अपने मनुष्यों से पृथक् होजानेके कारण मार्ग भूलकर केसरीसिंहके सीलानी नामक गांवकी सीमापर आ पहुँचा । इस स्थानपर उत्तम महल तथा बाग-को देखकर वहां विश्राम लेनेके निमित्त गया और एक शीतल घटादार वृक्षके नीचे अपना घोडा बांधकर बैठगया । इतनेमें उपवनकी एक लता कुंजसे स्त्रियोंका तीव्रस्वर उसके कानमें पडा । 'यह कौनहै, ऐसी शंका सेस्थिरहो खडाहीथा कि इतनेमें,–'प्रियसखी ! मुझको आशाहै कि वल्ल-भीपुरका वीरही वरेगा । परंतु वह राजपुत्र यदि मुझसे कुछभी विरुद्ध हुआ निश्चय जानो कि मैं उसको अपने बुद्धिबलसे जीतूंगी और उसका पानी उतार वशमें करूंगी। यदि मेरा कुछभी बिगाडहुआ तो फिर उस को अपने पराक्रम तथा चातुर्य द्वारा जीतकर अपना प्राण स्नेही करलूं तब तो मैं सीलानीकी सुन्दरवाई हूं नहीं तो स्त्री नहीं वरन् कोई और हूं! इन शब्दोंके सुनतेही वह चुपचाप वहांसे चलागया और थोडी देर-तक एक स्थानपर विश्राम कर वहांसे घोडेपर चढ घरकी ओर चला। घर जाकर पितासे केसरीसिंहकी पुत्री सुन्दरवाईसे विवाह करनेकी:इच्छा प्रगटकी । महाराजाने केसरीसिंहसे सम्मति कर उस बातको स्वीकार किया और तत्कालही विवाह कर दिया गया। सुन्दरवाईको लाकर उसही दिनसे वह उसके कहेहुए वचनोंकी परीक्षा करनेके निमित्त उससे पृथक्रहा । सुन्दरवाई उसका कुछभी कारण न समझसकी, अतएव चिंतातुर रहनेलगी, क्योंकि उसे अपने वचनोंका कुछभी स्म-रण न रहाथा ।

एकदिन उसने दासीके द्वारा वीरसिंहका समाचार पूंछा तो जान पडा कि उसदिन शहरमें देवी पूजनका उत्सव मनाया जारहाहै और स्वयं वीरसिंहकी सवारीभी धूमधामसे जायगी यह सुन सुन्दरवाईने स्वयंभी साहससे एक म्याना तइयार कराया और दासीको ले देवीके मंदिरकी ओर चली। वहां स्त्री पुरुषोंका तथा अमीर उमरावोंका बडा भारी मेला हुआथा। उसको देखते २ वीरसिंह हाथीके ऊपर चढाहुआ वहां आपहुंचा। दर्वारियोंके साथ उसने देवीके दर्शनकर महापूजा चढाई। सब दण्डवतकर स्तुति कररहेथे। वीरसिंह स्तुति करके सबसे पहिले उठा, वह हाथजोडे हुए सामने खडाथा, इतनेमें किसी स्त्रीने आप महाकालीको मोतियोंका हार पहिनाया। दर्शन करनेके उपरांत जब उनकी चार आंखें मिलीं तब वीरसिंहने सुन्दरवाईको पहिचाना। हार चढाते समय सुन्दरवाईने देवीसे विनतीकी कि,—'माता ! मेरे पतिको सर्वसुख युक्त करना; ऐसा कहना उसके पतिनेभी सुना,— तब उसने कहा कि "क्यों पतिको पराक्रम दिखाकर जीत न लिया— ?"

इस शब्दके सुनतेही सुन्दरवाईको आश्चर्य हुआ वह मानो निद्रासे जाग पडीहो इसप्रकार स्मृति आनेपर शांत चित्तसे चलीगई परन्तु चलते २ इतना कहगई कि,—"महाराज ! स्त्रीतो मूर्ख होती है परन्तु आपको चतुर होकर ऐसा शोभा नहीं देता!" 'जबतक कहे हुए वचनों-का पालन नहीं करेगी तबतक मेरे तेरे बीच स्नेहकी गांठ न बंधेगी।' यह सुनतेही सुन्दरवाई हँसकर चली गई और म्यानेमें बैठकर अपने घर आई।

सुन्दरवाईने महलमें आय विचार करनेके उपरांत एक पत्र पिताको लिखा। उसमें अपने समान एक सुन्दर स्त्री और सैनिकपिताके अस्त्र शस्त्र एक उत्तम अश्व तथा द्रव्य गुप्तरीतिसे भेजनेको लिखभेजा। पिता पत्रको बांचकर विचारमें पडगया। द्रव्यतो भेजसकताथा। परन्तु और दूसरे पदार्थ कैसे मिलें ? इसकी युक्तिको सोचते २ निश्चय किया कि

एक सुन्दर सुरंग अपने गांवसे उसके महलतक बनवाऊं। वह अपनी इकलौती पुत्रीको दुःखित होताजान उसके निमित्त असंख्य द्रव्य व्यय करनेमें कुछभी न हिचकिचाया थोडेही दिनोंमें उसके महलतक सुरंग बनकर तइयार होगया। तदनन्तर सुन्दरबाई एक साधारण स्त्रीको कि जो सीलागांवसे वहां आईथी अपने स्थानपर रख आप सैनिक वस्त्रोंको धारणकर सुरंगद्वारा अश्वपर सवारहो बाहर निकली; और अपना नाम रत्नसिंह रख बलपराक्रम प्रगटकरनेके निमित्त वल्लभीपुरके राजदर्बारमें गई।राजकुमारके समान उसका रूप देख राजा तथा राजकुमारने उसका सन्मान किया और 'कौनहो ? कहांसे आये ?' इत्यादि प्रश्नोंके साथ कुशल पूछी। कुशल समाचार कहकर अपना नाम बताया परन्तु दूसरी पहिचान कुछभी न दी। बरन् यह कहा—'पिताके संग झगडा होजानेके कारण गुप्तरीतिसे निकल आयाहूं और अपनेको प्रगट नहीं करना चाहता। राजा और सभामें बैठेहुए मनुष्य उसकी बातोंसे आश्चर्य्यित हुए। राजाने उसको कोई उत्तम राजकुमार जान खानपान आदिका सामान करादिया और अपने पुत्र वीरसिंहके महलके समीप ठहराया। रत्नसिंह अपनी वीरता तथा पराक्रमका वर्णन कर निवासस्थानकी ओर गया। वीरसिंहको उसके उत्तम शांत स्वभाव तथा चतुराईपर मोह उत्पन्न हुआ और उसके मित्रकी समान वर्त्ताव करनेलगा। थोडेही दिनोंमें दोनोंके बीच अत्यन्त मित्रता होगई। मित्रता बढते २ इतनी बढी कि विना एक दूसरेके देखे घडी भरभी चैन नहीं पडताथा।

इसीसमयमें एक बडा गरुड सायंकालको आय जिस मनुष्यको पाता उसीको उठा लेजाताथा इसकारण प्रजा अत्यन्त भयभीत होरहीथी, उसके साथ युद्ध करनेको किसीका साहस न होताथा, और कोई उपाय नहीं सूझ पडताथा एक दिन राजसभामें इसकी चर्चा हुई, इतनेमें वीरसिंह तथा रत्नसिंह आये। गरुडके त्राससे प्रजाके भयभीत होनेकी बात जानतेही रत्नसिंहके रोम २

खडे होगये और उसके साथ युद्ध करनेको स्वयं तइयार होगया। तदनन्तर बुद्धिमानीसे अपनी इच्छानुसार एक भारी लोहका मनुष्याकार पुतला बनवाया और उसका पेट खुकलकर उसमें छिद्र रक्खा और एक तीक्ष्ण कांटा लगवाय उसको वहां रख दिया जहां प्रतिदिन गरुड आया करताथा । मनुष्य इस पक्षीसे इतना भयभीत होरहेथे कि सन्ध्या होतेही होते सब गांवमें सन्नाटा पडजाताथा।लोहके मनुष्यको बनवाय नम्न तलवारले उसके पेटके भीतर रत्नसिंह बैठा। जब सन्ध्या हुई तब चोरके समान गरुड आया फिर इधर उधर देखने लगा किन्तु कोई मनुष्य न दीखपडा, इतनेमें उस लोहेके पुतलेको देखा। गरुड ज्योंही बलपूर्वक दौड उसे गडप करनेगया त्योंही उसके शरीरमें कांटा घुसगया और वह घायल हुआ रत्नसिंह उसको भलीप्रकारसे घायल हुआ जान तलवार हाथमेंले शीघ्रतासे बाहर निकल आया और बलपूर्वक उसपर तलवार मार पेटचीर गर्दन काटदी–प्रातःकाल होतेही रत्नसिंहके पराक्रमकी बात प्रजामें फैली, सबही उसकी बडाई करने लगे। राजानेभी उसको पुरस्कार दिया। वीरसिंहभी उसके इस पराक्रमसे विस्मित हुआ और अपने वीरमित्रको दिन प्रतिदिन चाहने लगा।

एक दिन राजा, रत्नसिंहको साथले शिकारको गया परन्तु उसदिन वीरसिंह अस्वस्थथा इसकारण घरही रहा।यह अवसर पाय उसके साथ शत्रुता करनेवाले भाइयोंने उपद्रव किया, और एकसाथ अपना अधिकार जमाय ठौर २ पर अपने चौकी पहरे बिठादिये। कपटसे वीरसिंहको पकड पहाडकी कन्दरामें लेजाय गुप्तरीतिसे बन्दी किया। अब राजा और रत्नसिंहने शिकारसे पीछे फिरकर देखा तो दूरसेही नगरका दिखाव कुछ और प्रकारका दिखाई दिया। तर्क वितर्क तथा मनुष्योंके कहनेसे यह बात भलीप्रकारसे जानीगई। रत्नसिंहने महाराजसे नगरके बाहर रहनेको कह अपने पिता कल्याणसिंहके मौलागांवकी ओर जानेको कहा। मन्त्री तथा राजाको यह बात भाई और सबने उसही ओरको

गमन किया । कल्याणसिंह तत्काल वल्लभीपुरके राजाको आताजान आगे वढ सत्कारपूर्वक ले आया । रत्नसिंहको देख अपनी पुत्रीका स्मरण हुआ, परन्तु उसकी स्थिति वदलगईथी इसकारण भ्रांतिमेंही रहा । वल्लभीपुरके उपद्रवका समाचार पाय वहभी क्रोधित हुआ। तदनन्तर करदराजाओंको अपनी सेनाले सहायताके निमित्त सीलागांवमें बुलाया। इतनेमें रत्नसिंहने एक कवायदी सेना सीलामें तइयारकी। वल्लभीपुरके राजाको रत्नसिंहका विश्वासथा। इसकारण शहरमें चौकी फेरनेका काम उसहीको सौंपागयाथा।वह नित्य पचास घुडसवारोंको ले सीमाकी ओर जाता और सबको सावधान रखताथा।शत्रुके जो मनुष्य आते उनके द्वारा सबका भेद जान लेता था; और सब प्रकारसे चौकन्ना रहता था।इसप्रकारकी चतुराई द्वारा उसको वीरसिंहका पता भी मिल गया और एकही रात्रिमें पहाडके गुप्त स्थानसे उसको खोज लाया।पचीस शस्त्रधारी पुरुषोंके हाथमें वीरसिंह कैद था । उसके समाचार शत्रुके मनुष्योंसे ज्ञात हुए । शत्रुके सिपाही जो वीरसिंहको कैद किये थे अचेतमें थे कि इतनेहीमें रत्नसिंहने वहां पहुँचकर आक्रमण किया। इस घटनाके होतेही चौकीदारोंके होश उडगये। रत्नसिंहने उनके अस्त्र छीन उन्हे बंदी कर दिया । तदनन्तर वीरसिंहको रत्नसिंह मिला, और उसे सीलागांवमें ले आया । वीरसिंहका पिता पुत्रके प्राण बचानेवाले रत्नसिंहका कैसा कृतज्ञ हुआ होगा सो पाठक स्वयंही समझ सकेंगे । वीरसिंहने भी अपने प्राणदाताको अनेक धन्यवाद दिये और एक रत्न जटित उत्तम कटार जो स्वयं सदैव साथ रखता था उसको भेंटमें दी ।

करदराजा सेनालेकर सहायताके निमित्त सिलामें आ पहुँचे । तब कर्त्तव्यका विचार होने लगा, सम्मति करनेको कल्याणसिंह, मंत्री तथा रत्नसिंह बैठे । उस समय रत्नसिंहने कहा कि,-'जो मेरा कहना मानो तो दैव वलसे जहांसे चाहूँ वहांसे मार्ग कर तुम्हारी जय करा दूं। इसके अतिरिक्त और किसी प्रकारसे जय नहीं हो सकेगी । रत्न सिंहके पराक्रमसे सब उसको दैवी पुरुष मानते थे, इसकारण उसकी

बातको सबने स्वीकार किया, तब उसने कहा कि, 'शत्रु किलेके ऊपर हैं और हम नीचे हैं अतएव हमारी मार उनको न लगेगी वरन् उलटे हमहीं मारेजायंगे। इसके अतिरिक्त किलाभी अति दृढ है इस कारण टूट भी न सकेगा मेरे साथ चलो तो मैं तुमको एक गुप्त मार्ग बताऊं।' ऐसा कह वह सुरंग जो उसके महलतक बनाई गई थी उन सबको बताई यह देखतेही सब विस्मित हो गये और कल्याणसिंह तो अपने विचारोंहीमें निमग्न हो गया—'कि इस परदेशी पुरुषको इस बातका समाचार कैसे विदित हुआ?', तदनन्तर रत्नसिंह आगे हुआ और सब सेना पीछे चली। एकओरसे तो शत्रुओंका बल रोकनेको कुछ सेना कल्याणसिंहने किलेकी ओर भेजदी और शेष सेना सुरंगमार्गसे महलमें पहुंची तथा वहां पहुँचतेही किलेके मनुष्योंपर आक्रमण किया। वहांसे कोई भी न छूटपाया और सबको आधीनकर हथियार लेलियेगये। तदनंतर सबने सभामें जाकर देखा तो रत्नसिंह न मिला। उसकी बहुत खोजकी-गई, परन्तु कुछभी ठिकाना न मिला। अपनी रानी सुंदरबाईके महल द्वारा सेनाके आनेसे वीरसिंहको ऊपर सुंदरबाईके साथ अयोग्य वर्तावका संदेह हुआ। इसकारण वह क्रोधांधहो तलवार खैंच सुंदरबाई-के महलमें पहुंचा। वहां देखताहै कि सुंदरबाई सोलहशृंगार किये हुए हिंडोलेपर बैठीहै और सखियें उसको झुलारहीहैं। यह देखतेही वीरसिंह जलगया और बोला कि "बतला दुष्टे! रत्न कहां है?" सुंदरने कहा,—'महाराज! रत्न कौनहै आप क्या कहतेहैं? आप रत्नसिंहको क्यों पूछते हैं?' वीरसिंहने कहा,—'हां, मुझसे अब चाल चलतीहै। बतला दुष्टे! वह मित्रद्रोही कहां है? मैंही उसका शिर धडसे अलगकरूं। यह सुनकर वह बोली,—'प्राणनाथ! जिसने आपके प्राण बचाये क्या आप बदलेमें उसहीके प्राणलेंगे?' इसबातके सुनतेही वीरसिंह स्तब्ध होकर बोला,—'राक्षसी बिना कहे उसे सुरंगका भेद कैसे मिला? बता तूने उसे कहां छिपाया है? 'प्राणपति! यथार्थ कहतेहो' सुंदरबाईका यह वचन सुनतेही वीरसिंह क्रोधित होकर कहनेलगा,—'पहिले उसअधर्मीको बता; इसके

उपांत मुझपर शासनकरना।' ऐसा कह झटसे तलवार निकालली, इतनेमें सुंदरबाईने वीरसिंहसे मिलीहुई तलवार निकालकर कहा,—'महाराज ! यह कटार आपनेही मुझको अपने बचानेके निमित्तदीहै। कुछ विचार करके देखो।' वीरसिंह यह सुन चौकन्ना हो उसके मुखकी ओर देखने लगा तो उसकेही स्वरूपमें रत्नसिंहका स्वरूप मिलताहुआ पाया- वह लाजसे मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिरपडा, तब सुंदरबाईने उठकर उसे अपने हाथोंसे पलंगपर सुलाया और सुगंधित द्रव्य सुंघाय शांतिका उपचारभी बडी सावधानीसे किया। पीछे सब बातोंको सुनकर वीरसिंह प्रेमवश होगया और सुंदरबाइका दासहो उससे अत्यन्त प्रेम करने लगा।

सोनरानी।

सोनरानी बूंदी कोटाके राजा चांपराज हाडाकी स्त्रीथी। वह किसकी पुत्री तथा कब उत्पन्न हुईथी इसका कुछ पता नहीं लगता, परन्तु इतना कहाजासकताहै कि समय अकबर बादशाहका था। अकबरने राजपूतानेके सब राजाओंको पराजितकर करद बनायाथा, और अपने चक्रवर्तीपदको शोभित किया। हिन्दुस्तानके राजाओंकी कुछ संख्या उसके सिंहासनके निकट आसपास बैठतीथी। इसही कारण प्रत्येक करद राजाको छह २ महीने तक बादशाही दर्बारमें रहना पडताथा। अकबर उन सबको अपना सभासद गिनता और अपनेको उनके रहनेसे गौरवयुक्त समझताथा।

सोनरानी एक महा विचारवती, बुद्धिमती तथा सत्यधर्मपरायणथी। धैर्य, साहस और युक्तिमें जैसी वह एक थी वैसेही पतिभक्तिमेंभी लीनथी। सतीस्त्रीका एक उदाहरण अथवा स्त्रीजातिको एक शिक्षा पानेका शिक्षक रूपथी। नृत्य तथा गान कलामेंभी वह अत्यंतही प्रवीणथी; तथा पतिव्रत पालनेमेंभी तीव्र संकल्पवालीथी। पतिके वश करनेका वशीकरण मंत्र पातिव्रत बिना और कुछभी नहींहै, यह उसको निश्चयथा इसकारण शिक्षाका बहुतही अभ्यास किया था। अपने उत्तम

गुणरूपी वशीकरणसे उसने पतिको वशमें करालियाथा । इस-कारण पतिस्त्रीके अन्तःकरणमें स्नेहकी रज्जु ग्रंथि बंधगईथी । एक दूसरेमें वियोग नहीं होताथा; परंतु 'बादशाहके न्यामने किसीको कुछ नहीं चलती ' इस कहावतके अनुसार चांपराजने दिल्लीपतिकी सभामें छै मासतक रहनेके निमित्त दिल्ली जानेकी तइयारीकी । इससे दोनोंका अन्तःकरण अत्यन्त खेदित हुआ । जानेका समय ज्यों ज्यों समीप आनेलगा वैसे २ सोनरानी व्याकुल होनेलगी । उसे पतिका वियोग अत्यन्त दुःसह दुःखरूपी होगया । अन्तको पतिने चिह्नकी भांति एककटार तथा रूमाल दिया और आप दिल्लीकी ओर गया। स्वामीके दियेहुए चिह्न सोनरानी सदैव हाथमेंही रखने लगी और हारलपक्षीकी लकडी समान उसको प्राणाधार समझने लगी; क्योंकि चांपराजको वह वस्तुएं अत्यन्त प्रियथीं । चांपराजके दिल्ली जानेपर वह अपना अंग ढकनेको केवल श्वेतवस्त्र पहिरने लगी; सूक्ष्म शृंगार धारण करतीथी । प्राण स्थिर रखनेके निमित्त किंचित् भोजन करती और बातचीतभी अत्यन्तही सूक्ष्म करती । उसने विषयवासनाके बढा-नेवाले मादक पदार्थोंका सेवनभी त्याग दिया और सात्विक पदार्थोंपरही निर्वाह करनेलगी । पतिकी मूर्तिका पूजन करनेके पीछेही अन्नोदक लेतीथी और अपना शेष समय उदासीन अवस्थामें काटतीथी । पति-की अनुपस्थित अवस्थामें राजकाजके कितनेही एक अधिकार अपनेही हाथमें रक्खे थे, इसही कारण प्रधानभी उसकी सम्मति लेकर सब व्यवस्था करतेथे ।

एक दिन दिल्लीकी भरीहुई सभामें अकबर बादशाहने पूछा कि-'अपनी सभामें बैठनेवाले राजा, रानी राजपूत, अमीर, उमराव तथा सर्दारोंमेंसे किसके घरमें पतिव्रता स्त्री है सो प्रगटकरो; परंतु पतिको भलीप्रकारसे उसके पतिव्रतका निश्चय होना चाहिये । इसमें मेरा कोई अभिप्राय नहीं, केवल इसबातको जाननेकीही आवश्यकताहै; इसकारण किसी प्रकारकीभी शंका न रखकर जिसका सम्पूर्ण विश्वा-

सहो वह प्रगटकरे तो मैं अत्यन्तही प्रसन्नहूंगा।' प्रश्न कियेहुए थोडा समय बीतगया परंतु किसीनेभी कुछ उत्तर न दिया। अन्तमें सब सभाको चुपचाप हुआ देख बादशाह बोला,-'सब सभासदोंको शांत बैठाहुआ देख स्पष्ट अनुमान होताहै कि किसीकोभी अपनी स्त्रीके पतिव्रता होनेका विश्वास नहीं होता, इसकारण मैं अत्यन्त असन्तोष प्रगट करताहूं कि इतने सर्दारोंमें किसीके घरमें कोई साध्वीस्त्री नहीं ? क्या हिन्दू मुसलमान सबही अपवित्र होगये।' बादशाहके इसबातको सुनतेही बूंदीकोटेका राजा चांपराजको:अत्यन्तही क्रोधचढ आया, तत्कालही खडाहोकर कहनेलगा कि,-'महाराज ! आपको कभी यह न विचारना चाहिये कि किसीके घरमें पतिव्रता स्त्री नहींहै। हम क्षत्रियोंमेंसे ऐसे अनाचार या अंधकार कभी नहीं चलते।' चांपराजके वचनोंको सुनतेही मुंगल बादशाह तथा उसके सभासद अमीर उमराव सबही लज्जित होगये और लाजके मारे सबके मुख पीले पडगये। इतनेमें एक दुष्ट स्वभावका शेरबेग नामक मुसलमान अमीरको ईर्षाहुई इसकारण वह बोल उठा, कि,-'हुजूर ! ऐसाहै तो मैं उसका इंतिहान करूंगा।' शेरबेगकी बात सुन बादशाहने कहा,-'शेरबेग ! तुमने यह बात कहकर बूंदी कोटाके महाराजकी प्रतिष्ठापर आक्रमण किया और उनका अपमान किया अतएव यदि ऐसा प्रमाणित नहीं:करसकोगे कि हाडाजीकी स्त्री असतीहै तो तुम्हारा शिर काटा जावेगा।' अकबर बादशाहके नीतियुक्त वचन सुन सब सभासदोंने उसको धन्यवाद दिया। बादशाहकी आज्ञासुन शेरबेगने उत्तर दिया कि,-'जो मैं यह प्रमाणित करदूं तो चांपराज अपना शिर कटाडाले। उसकी इसबातके सुनतेही राजपूत चांपराजने तत्कालही इसबातको स्वीकार करलिया। तदनन्तर शेरबेग बादशाहसे प्रार्थना कर चांपराज को बंदी करवाय आप बूंदी कोटेकी ओर गया।

शेरबेग थोडेही दिनोंमें बूंदी कोटा पहुंचा और वहां छल कपटका उपाय करने लगा। इस नीचकर्ममें एक मालन उसकी सहायक हुई। वह

मालन इस कपटके करनेमें एकबेर पीटीभी गई तथापि उसने एक दूस री युक्ति खोज निकाली । स्वयं चांपराजकी फुआ बन शरेचगकी सेनाकोले, दासियोंको नौकर रख बडे ठाटबाटसे शहरके बाहर पडावडाला और प्रातःकाल होतेहीकहला भेजा कि,-'चांपराजके दिल्ली जानेका समाचार मुझे नहीं मिलाथा इसकारण मैं चलीआई परन्तु अब वह राजधानीमें नहींहै इससे लौटीजातीहूं। वह आवे तो मेरा संदेशा कहदेना कि तुम्हारी फुआ आईथी ।

सोनरानीको यह बात नहीं ज्ञातथी कि मेरे कोई फुफुआ सासुहै! इसकारण वह भ्रममें पडी कि,-'मेरे तो कोईभी फुफुआ सासु नहींहै यदि होती तो अवश्य मैंने किसीके मुहसे सुनाहोता। कदाचित कोई दूरके सम्बंधसे इनका रिश्ताहो सत्कार न हो तौभी ठीक नहींहै इसप्रकार निश्चयकर एक दासीद्वारा राजकर्मचारीको बुलवाय फुफुआ सासुको मानपूर्वक महलमें लानेकी आज्ञादी। सब वाहन, दास दासी, तथा सेवक सन्मानपूर्वक शहरमें लायेगये। फुफुआ सासुभी मानों अपने यहां बहुत कामकाज पडेहुएहैं ऐसे बहुत बनावट कर महलमें जाय रहनेसे निषेध किया। परन्तु अन्तमें महलकी ड्योढीतक सोनरानी स्वयं जाय विनयकर नम्रतापूर्वक उसे अपने यहां लाई और कुछ दिनों तक अर्थात् हाडाजीके आनेतक रोकनेका आग्रह किया। परन्तु कामके कारण अवकाश न होनेसे फुफुआ सासुने केवल तीनही दिन रहनेको कहा, और हाडाजीके आनेपर फिर आनेका वचनदिया। भलीप्रकारसे पहुनई पाय फुफुआ सासु जानेको तइयार हुई, उसने सोनरानीसे कहा कि,-'अब कलको मैं विदा हूंगी । सोनरानीने समझ लिया कि अब बिना विदा किये काम न चलेगा इसलिये उसका बड़ाभारी सत्कार किया। जब चलनेका पिछला दिन आया तब रानीने उसको साथ रख रनवासके सब भाग बताए वहांपर एक स्थानमें जलविहारकी रचनाकी गई थी वह वहां जा चढी फुफुआ सासुने उसे देख तत्काल ही उस कुंडमें जल भरवाया और सोनेके साथ उसमें वस्त्र सहित

हो स्नानक्रीड़ा करनेकी इच्छा जताई और ऐसा करनेको वहुत आग्रह किया पतिपरायणा स्त्रीने पतिकी अनुपस्थित अवस्थामें ऐसा न करनेके लिये उससे बहुत प्रार्थनाकी, परन्तु फुफुआ सासु अपना मुंह चढाय वहाँसे चली।अन्तमें उसका अपमान होना विचार सोनने ऐसा करना स्वीकार किया परन्तु यह कहदिया कि सूक्ष्म वस्त्र पहिन कर स्नान करूंगी फुफुआ सासुने भी यह स्वीकार कर स्नानकी तइयारी की ऐसा करनेमें फुफुआ सासुका यह हेतु था कि सोनके किसी गुप्त स्थानमें जो कुछ चिह्न हो वह जान लूं । दुर्भाग्यसे ऐसाही हुआ। दोनों सूक्ष्म वस्त्र पहिन स्नानकर वाहर आई तब फुफुआ सासुने उसके सब चिह्न देख लिये और भोजन कर चलनेको तइयार हुई। सोनराणी हाथजोड समीप आ खडी हुई तब फुफुआ सासुने हाड़ाजीका दिया वह रूमाल और कटार अपने पुत्रके निमित्त मांगा सोनरानी उन दोनों वस्तुओंका प्राणाधार समझती थी फिर किसप्रकार देसके तव फुफुआ सासु क्रोधित होकर चलने लगी सोनरानीने उसे क्रोधित होकर जाता हुआ देख मोहछोड़ रूमाल तथा कटार दे दिया क्योंकि वह विचारी कुछ भी छलकपट नहीं जानती थी। अपना काम पूरा हुआ देख कपटनारी हँसती और आशीर्वाद देती हुई विदा हुई शहरसे थोडी दूर जाय मियांजीसे जा मिली।और सर्व व्यवस्थाकही।मियाजी सब वृत्तान्त सुन दिल्लीको चले मियां शेरवेगके आनन्दकी सीमा न रही वह हंसता कूदता मौज मारता चांदनी चौकवाली दिल्ली नगरीमें आ पहुंचा। दूसरे दिन सभामें गया और कोलंवशने जिस प्रसन्नतासे अमेरिकाको खोजकर वहांके अमूल्य पदार्थ अपने राजाकी टेवलपर डाले थे वैसेही शेरवेगने रूमाल और कटार अकवर वादशाहके सामने इसप्रकार हाफते-२ फेंके कि मानो कोई युद्ध जीतकर आया है। उन दोनों 'चीजोंको फेंक सब दर्वारियों तथा राजा महाराजाओंकी ओर मोछोंपर ताव मारता हुआ देखने लगा। इन दोनों पदार्थोंको देख वादशाहने प्रश्न किया कि "क्यों मियां यह क्या है?" मियांने कहा कि, 'हुजूर चांपराजने अपनी

औरतको चलते वक्त यह निशानियां दी थीं, अब उसने खास मेरे ऊपर मिहरबान होकरके मुहव्बतक निशानीमें इनायतकी है हाडाजीसे पूछिये कि यह चीजें किनकी हैं ? ' बादशाहने शान्त चित्तसे से पूछा,-'क्यों हाडाजी यह चीजें आपकी हैं ? क्या शेरबेगका कहना ठीक है ?, हाडाजीने कहा,-'जहांपनाह ! यह दोनों चीजें मेरी हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। परन्तु ऐसा क्या नहीं होसकता कि चोरीसे या कपटसे यह दोनों चीजें मंगवाली गईहों ?' इतना सुनतेही मियां साहब राते पीले होगये और विना पूँछे बोल उठे कि,-'हुजूर ? अपने अयबको छुपानेके लिये यह चोर और दगाबाजी बनाताहै, और चुप नहीं रहता खैर, अब औरभी एक पता बताताहूं कि इनकी औरत-क्या कहूं कचहरीमें कहनेसे मुझको शरम लगती है, परन्तु लाचारहूं बिना कहे काम नहीं चलता। उस औरतकी बाई जानूमें एक बडाकाला दाग है। अब आपही इनसाफ कीजिय कि मैंने चांपराजकी औरतको बेहुर्मत किया या नहीं ? '

चांपराज उसकी बात सुनतेही लज्जित होगया। तब अकबरने शेरबेगको अधिक बोलनेसे रोका, और प्रतिज्ञाके अनुसार शिरकटवानेको दिल्लीपतिने चांपराजकी ओर देखकर कहा;-'क्यों ठाकुर साहब, चांपराज क्षत्रीपुत्रथा इसकारण अपनी बातसे न फिरा-और तत्कालही शिर कटवाने पर तइयार होगया। परन्तु ऐसी नीच स्त्री कि जिसके निमित्त प्रतिष्ठा खाकर प्राण देने पडे हैं उसको कुछ दण्डदेना, इसकारण स्वदेश जानेके निमित्त कुछ समय बादशाहसे मांगा। परन्तु योग्य बदला देना कठिन होगया, क्योंकि यदि नियत समयपर चांपराज न आवे तो उसके पलटेमें जामिनदारका शिर लिया जाना निश्चित हुआथा। परन्तु पृथ्वी सत्य तथा धर्मसे रहित नहीं हुईथी कि उसपर रत्नोंका अभावहो ? पहाडसिंह नामक एक क्षत्री वीर चांपराजका सच्चा मित्रथा उसने जमानत स्वीकारकी और उसके पलटेमें अपना शिर देनेको वचनबद्ध हुआ। तदनन्तर चांपराजको स्वदेशजानेकी छुट्टी मिली।

मित्रका उपकार मान चांपराज अपनी राजधानीमें आ पहुंचा। जिस दिन वहां पहुंचा उसही दिन उसकी जन्मगांठथी, इसकारण सोन-रानी पतिकी वर्षगांठका उत्सव मनाय उत्तमोपचारसे पूजन करतीथी। इतनेमें चांपराजने अचानक उसके सामने आय लालनेत्रकर कठोर वचनोंसे वहीदीहुई रूमाल और कटार मांगा। रानी थरथर कांपने लगी, उसने हाथजोडकर उत्तर दिया कि--'जैसलमेरसे आपकी फुआ आई थीं वह अत्यन्त आग्रहकर अपने पुत्रके निमित्त दोनों वस्तु ले गई हैं।' यह सुनतेही चांप-राज अत्यन्त क्रोधितहो कहने लगा कि, दुष्टा ! अधम नारी ? क्या वहाना करती है ? तू नहीं जानती कि मेरी फुआको मरे हुए कितने वर्ष वीतगये ? नीच व्यभिचारिणी ? क्या वनावट करके उत्तर देतीहै ? मैंने तेरी सत्यताका विश्वासकर दिल्लीके सभामें शिरदेनेकी प्रतिज्ञाकी, उसका यह फल हुआ तुझको और तेरे माता पिताको धिक्कारहै, तू अवला स्त्रीजाति है इससे जीवित छोडे देताहूं नहीं तो अभी टुकडे २ कर डालता।'

इतना कह विना उत्तर सुनेही चांपराज वहांसे चलागया। अव सोनरानीकी ओर देखना चाहिये। सोनरानी ऐसे अपमानके वचनों को सुनतेही मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिरपडी। दासियोंने सुगंधित पदार्थोंसे उसका उपचार करके मूर्च्छा दूरकी तदनंतर वह विचार करने लगी उसने शांतचित्तहो निश्चय किया कि,–'कदाचित् कुछ कपट हुआहै अव पतिके प्राण कैसे वचें ?' कुछभी उपाय न सूझ पडनेपर अंतमें स्वयंही गुप्तवेशसे दिल्ली जानेको तइयारहुई और दासियोंको साथले विना किसीको कुछ समाचार दिये वहांसे चलीगई। चांपराजके दिल्ली पहुंचनेके पहिलेही वह वहां पहुंचकर एक कुलवान उमरावके यहां उतरी। चांपराजके आनेका नियतसमय वीतजानेपर उसके जामिन-दार पहाडसिंहको फांसीमें लटकानेकी आज्ञाहुईथी। उसकी चर्चा समस्त नगरमें फैलीहुईथी कि प्रातःकाल पहाडसिंहको फांसी लगेगी। पहाड-सिंह मित्रके निमित्त अपना शिर देकर क्षणभंगुर जगत्में अपना नाम

अमर करनेको प्रातःकालही फांसीकी लकडीपर चढा । फांसीकी रेशमी डोरी जैसेही उसके गलेमें पहिनाई गई कि वैसेही एक क्षत्रिय घुडसवार घोडा दौडाता 'ठहरा ठहरो!' चिल्लाताहुआ वहां आपहुंचा। पहाडासिंहकी आशाको निराशकर चांपराजने उसके चरणोंमें माथा डाला और विलम्ब होनेके विषयमें क्षमा मांगी । चांपराजके आपहुंचनेसे दिल्लीपतिभी प्रसन्न हुआ और उसके क्षत्रियत्वकी सत्यतापर उसे कुछ और भी समय दिया । परन्तु अंतमें 'अनीका चूका सौवर्ष जीताहै' इस कहावतके अनुसार चांपराजको फलमिला । सोनरानी वहींथी, उसने इन सब समाचारोंको सुनाथा । उसने जाना कि,–'हाडाजी आपहुंचेहैं और कुछ समयभी मिलाहै । इसकारण तत्कालही उस अमीरसे कहा कि,–'मैं चांपराजकी गानेवालीहूं और सर्कारसे उसे फांसीपानेकी आज्ञाहुईहै, इसकारण दिल्लीके दर्बारमें एकदिन गाना सुनाना चाहतीहूं; अतएव इस विषयमें बादशाहसे आज्ञा मिलनी चाहिये ।' अमीरने यह सब बातें बादशाहसे कहीं बादशाहने उसे गानेकी आज्ञादी । नियतसमयपर सभा सजाई गई और वहां सोनरानी वेश्याके रूपमें दासियोंके साथ आपहुंची । उसे देखतेही चांपराजके रोम २ में आग लगगई परन्तु वह दूसरेकी सभामें क्या करसकताथा ? गानकलामें सोनरानी कैसी निपुणथी सो हम पहिलेही कह आयेहैं, यहांपर इतनाही कहना उचितहोगा कि सब सभाके सामने उसने ऐसा रागसे गाया कि सबही स्तब्ध होगये । एकतो वैसेही रूप तथा गुणमें रम्भा और उर्वशीका मान मिटातीथी फिर गानेमें यदि बादशाहका चित्त आसक्त हो जायतो आश्चर्यही क्याहै ? तान पूरी होनेपर बादशाहकी प्रसन्नता उसके मुखपर जो प्रकाश डालतीथी, उसको प्राप्तकर छोटी ओंजी नाम रख उस साध्वीने दिल्लीपतिसे विनय की,–'जहांपनाह आपके दर्बारमें यह जो मियां शेरबेग हैं वह एक दिन हमारे महाराजकी राजधानीमें गये थे । और मेरे यहां रहेथे । मेरे साथ सुखपूर्वक आनन्द किया । बदलेमें आधा रुपया दिया है और आधाबाकीका न देकर भाग आये हैं सो मेरे रुपया पाकरके इनसे वह रुपया दिलवादीजिये ।

इस बातको सुनतेही शेरवेगके तो होश उड गये और क्रोधित विचारसे कहा कि यह मुफ्तका फसाद कहासे आलगा ! फिर नायकासे बोला,–'अरे जरा खुदाका खौफ रखकर बोलो किस कमजातने तेरा मुंह तक भी देखा है! यह क्या कहती है ! हमारी तेरी मुलाकात कहां हुई है ? अरे मैं तो तुझको पहिचानता भी नहीं हूं।' गानेवालीनें कहा,–'वाह मियां ! यह आपकी भलमंसाई ! अब काहेको पाहिचानोगे ? पहिचानोतो घरके छप्परपर फूसतक न रहने पावे। दाम देनेमें अब हिचर मिचर क्यों करते हो ? मियांजी जो ऐसा था तो क्यों मेरे यहां आएथे ! व इन सब चालाकीकी बातेंको जाने दो और पैसा निकालो।, यह बात सुनतेही बादशाहको भी विश्वास हुआ और उसने शेरवेगको डांटा। तबतो मियांजी अत्यन्त घबडा गये; और कुरान उठाकर कसम खानेको तइयारहुए नृत्यकीने भी स्वीकार किया कि,–"शेरवेग सभाके सामने कुरान उठाकर कहेकि मैं इस स्त्रीको नहीं पहिचानता और उसका मुहतक भी नहीं देखा, तो फिर मुझको द्रव्य नहीं चाहिये।" भेद न समझकर मियां साहबने कुरान उठा लिया। तत्कालही सोनरानीने मुख फेर लिया और दासीके समीपसे अंतरपटले मुखपर डाल कुलीनस्त्रीकी समान खडी होरही।

इस दृश्यके देखतेही राजसभा अत्यंत विस्मितहुई उस साध्वीने अपना समस्त वृत्तांत मुक्तकंठसे सब सभाके सामने सुनाया। इसकारण सबका चित्त प्रसन्नहुआ परन्तु शेरवेगकेतो प्राणही सूखगये। आवजानेसे पीतल पहिचानी गई। कसौटीमें वह सुवर्णके सन्मुख कैसे ठहर सकतीहै ? सभासद सोनरानीको धन्यवाद देनेलगे और मियांपर फटकार पडनेलगी। नीतिमान् अकबर बादशाहने पुत्रीकी समान रानीका सत्कार किया और मियांशेरवेग फांसीचढे। चांपराज हाडा अपनी स्त्रीकी विलक्षणताको देख प्रेमका दास बना और बादशाह ने सोनरानीके प्रयत्नके निमित्त उससे क्षमा मांगी; वरन्

ामित्त चांपराजको दिल्ली आनेकी माफी दीगई और स्त्री पुरुष दोनों
ादर सहित स्वराज्यको विदा कियेगये अंतमें पहाडसिंहका उपकार
ान दोनों स्त्री पुरुष दिल्ली छोड अपनी राजधानीको गये और वीती-
ईको भुलाय सुखसंतोषसे रहनेलगे ।

राणकदेवी ।

राणकदेवी सिंधके महाराज राखावरकी पुत्री थी । उसका जन्म
ूलनक्षत्रमें हुआथा और ग्रहकुण्डलीमें ऐसा संयोग पडाथा कि उस-
ो देखतेही पिता अन्धा हो । इसकारण उसको एक वनमें छोड
ेनेकी राजाने आज्ञादी । मारडालनेकी आज्ञा देता तो बालहत्याके
ापका भागी होता, इसही कारण जङ्गलमें छोडा कि हिंसकजीव इसको
खाजावें और उसके इस अनिष्टकाभी अन्त हो । परन्तु उसको बहुत
कुछ देखना था और कहाभी है कि,–' मारनेवालेसे बचानेवाला
बडाहै, ' इस कहावतके अनुसार कोई भी हिंसकप्राणी उसके समीप
न आया । रात्रि वीतकर प्रातःकाल हुआ, तब समीपके गांवकी हडम-
तिआ नामक कुम्हार मिट्टी खोदनेके निमित्त वहांपर आया और वहां
रोता हुआ बालक देखकर प्रसन्नतापूर्वक उसको उठा लिया और संतान
हीन होनेके कारण उसे ईश्वरका दिया हुआ जान घर लेगया । वहां
स्त्रीके साथ परामर्शकर, राज्यके झगडोंसे बचनेकेलिये उस राज्यको
छोड कच्छदेशमें जा उतरे और भुजनगरके आसपास गांवोंमें निवास
करनेलगे । पुत्री अरण्यमेंसे मिलीथी इसकारण उसका नाम
राणकबाई रक्खा, परन्तु पीछेसे वही राणकदेवीके नामसे
प्रसिद्ध हुई ।

राणकदेवी योग्य अवस्थामें पहुंचनेतक अशिक्षित दशामेंही रही, तो
भी उसमें सुन्दर राजकन्याके योग्य रूप तथा गुण कुछ२प्रकाशित हुएथे।
स्वरकी मधुरता तथा नम्रता बहुतही कामकर्था; वैसेही बोलने

चालनेकी छटाभी अत्यन्तही चित्ताकर्षक थी । कागोंके झुण्डमें राजहंसकी समान तथा बकरोंके झुण्डमें सिंहके समान राणकदेवी कुम्हारोंमें पडी रहीतीथी । पहिनावाभी कुम्हारोंहीका पहिनतीथी परन्तु उसकी मुखाकृतिपर वह पहिनावा शोभा नहीं देताथा । कङ्गालके घरमें रूखा सूखा अन्न खाकर रहती, तौभी उसका मुख सदैव प्रकाशित रहताथा.। यौवन वसन्तकी वहार विकशित होनेसे उसकी मुखमुद्राके ऊपर कुछेक विशेष चमत्कारिक कांति प्रकाशवान होने लगी थी । राणकदेवी जब इस अवस्थामें पहुंची तब उसी समयमें कच्छका राजा लाखा फूलन एक दिन शिकार खेलते२भूलकर हडमतिया कुम्हारके गांवमें जा पहुंचा।हडमतीने तत्कालही उसे पहिचान घोडपरसे उतारा,और अपनी टूटी फूटी खाटपर गुदडी बिछाकर बिठाला । तदनन्तर घरमें जाय एक कटोरा दूध और शीतल जलसे राजाका सत्कार किया इतनेमें हडमतीके घरमें रही हुई इस नवयौवनबालाके ऊपर दृष्टि पडी। देखतेही राजाके आश्चर्यका पार न रहा, परन्तु इस समय विना कुछ बोले चाले अपने राज्यकी ओर चलागया । राज्यमें जाय उसने हडमतीसे कहला भेजा कि ' वह कन्या मुझ दे ! ' हडमती बडा चतुरथा, इस कारण उसने राजाकी बातपर कुछभी ध्यान न दिया । परन्तु जब देखा कि राजा अन्याय करेगा तब अर्धरात्रिके समय कच्छको छोड जूनागढसे थोडी दूरपर मजेवडी नामक गांवमें आकर रहने लगा।वहांपर रह किसी कुम्हारके साथ राणकदेवीका व्याह करनेका विचारकिया जिससमय वह मजेवडीमें निवास करनेलगा उसही समय पाटनके राजा सिद्धराजका चामुंडभाट भ्रमण करता२ उसके समीप आपहुंचा। राणकदेवीको देखते ही उसके मनम अनेक प्रकारके विचार उठने लगे । उसने चिह्न तथा लक्षणोंसे विचार किया कि 'यह कोई राजकन्याहै ।'पीछे हडमतियाको समझाय, सिद्धराजको राजकन्याके देनेका आग्रह किया। अन्तमें राणक देवीकी इच्छा पूछीगई, उसकी तो पहिलेहीसे इच्छाथी; क्योंकि दिनों

दिन अवस्थाका धर्म धरताथा। अतएव राणकदेवीकी इच्छा देखकर झट उसने सुपारी भेजी। विवाहकी बातचीतकर चामुंडभाट सिद्धपुर पाटनमें सिद्धराजको विवाहका समाचार देने चला।

इससमय जूनागढमें राहखेंगार राज्य करतेथ, धीरे २ उन्होंनेभी सुना कि,-'मजेवडी गांवमें कोई कुम्हार आकर रहाहै और उसके यहां पद्मिनी कन्याहै जिसकी सगाईभी सिद्धराजके साथ होचुकीहै और थोडेही समयमें उसके लेनेको मनुष्यभी आनेवालेहैं।' यह-सुन एक साथ मजेवडीमें जाय हडमतियाके ऊपर अन्यायकरने लगा और राणकदेवीको उसके समीपसे छीन जूनागढमें लाया। वहां बडी धूमधामसे, सिद्धराजके नियतसमयसे पहिले उसने ब्याहकर लिया। राणकदेवीका समाचार सिद्धराजके मनुष्योंको मार्गमें मिला, इसकारण उन्होंने पीछेही लौट पाटनमें जाय सब व्यवस्था राजासे कही सिद्ध-राज इस समाचारको सुनतेही प्रलयकालके मेघकी समान गर्ज रुद्रकी समान कुपितहो अत्यन्तही तडपने लगा। रोम२ में क्रोध व्याप्त होगया, तत्कालही एकलाख मनुष्योंकी सेनाले गिरनारगढके ऊपर प्रचंडवेगसे दौडा चला। सोरटपति राहखेंगारभी शत्रुके चढ आनेका समाचार पाय सावधानहुआ, और अत्यन्तही शूरतासे युद्धकर सिद्धराजको हराय पीछे अपने देशको लौटा। वह गिरिनारके दुर्गपर चढकर युद्ध करताथा इसकारण शत्रु जय नहीं पासकतेथे। इसप्रकारसे सिद्धराजने दोबार आक्रमण किया परन्तु पराजितहो उसे पीछेही भागना पडा।

राणकदेवी पतिपरायणा रही इसकारण राहखेंगारकी प्रीतिपात्र हुई अरसपरससे निर्मल प्रेम इतना बढगयाथा कि एकके विना दूसरेके प्राण धैर्य न धरतेथे। दिन प्रतिदिन अनेक प्रकारके विलासोंमें निमग्न रहकर मानो निष्कंटक राज्यभोगनेसे, आनंदमें दिन बिताते थे। यद्यपि शत्रुकी शत्रुताका दाग उसके हृदयसे शांत न हुआथा, परंतु वह उस बातको भूलहीसा गयाथा। सिद्धराजको उसने दोबार पराजित किय

इसकारण सिद्धराजने अत्यन्त लज्जितहो अधिक सेनाको इकट्ठा किया। इसकार्यमें दसवारह वर्ष वीतगये परंतु राहखेंगार आलस्यहीमें रहा। इधर राणकदेवीसे दो पुत्र उत्पन्न हुएथे, वहभी आठ २ दश २ वर्षकी किशोर अवस्थावालेथे। सोरठपतिको असावधान देख सिद्धपुरका महाराज सिद्धराज अधिक सेनाले जूनागढपर चढआया और मार्गमें आनेवाले छोटेवडे राज्योंका सत्यानाश कर जूनागढको घेर लिया। यद्यपि राहखेंगार असावधानथा तथापि उसने साहसपूर्वक युद्धकिया। राहखेंगारके सहस्रों मनुष्य मारेगये। अन्तको एक वलवान योद्धाने कपटपूर्वक किलेपर चढ उसको जीवित उठाय सिद्धराजके आधीन किया। थोडे वहुत जो मनुष्य रहेथे, उनके सामने राणकदेवी आखडीहुई, सबोंने उसे प्रणाम कर कहा,–'राजाजी तो यहांपर नहींहैं परंतु यदि महारानीकी आज्ञाहो तो हम प्राण देनेको तैयारहैं।' राजपूतों तथा सेनापतियोंकी स्वामिभक्ति देख उसने उपकार माना और स्वयं लडाई पर जानेको तैयार हुई। उस क्षत्रियानीने विना स्वामीके जीवन वृथा जान युद्धकी तैयारी कर कवच व अस्त्रशस्त्र धारण किये। उसने निश्चय करलिया कि मरूंगी या मारूंगी।' राणकदेवी नई सेना इकट्ठीकर सिद्ध-राजके ऊपर टूटपडी। पचासहजार विधवा क्षत्रियानियें हाथमें कटार लिये शत्रुसेनामें घूम२ सैनिकोंकी आँतें वाहर निकालरहीथीं। शत्रु-ओंके मांससे गीध कुत्ते आदि विहार कररहेथे। इसघटनाको देखतेही सिद्धराज घवडा गया और उसके दांत खट्टे होगये। उन राजपूत-नियोंका अधिक वल देख सिद्धराजकी माता मीनलदेवी अपने पुत्रकी सहायताको आई। सिद्धराजको सहायता मिलजानेके कारण घोर युद्ध आरम्भहुआ। क्षत्रियानियें योद्धाओंके साथ लड २ कर मारी गई परंतु एक चरणभी पीछेको न हटीं। राणकदेवीका सैनिकवल थोडा-साथा और सिद्धराजको औरभी सहायता मिलगई थी इसकारण वि-शेष वलवान होगयाथा। अतएव अंतमें राणकदेवीके घायल होजानेपर सिद्धराजने उसेभी जीवित पकड लिया।

राहखेंगारके पकडे जानेका समाचार मिलते ही उसने उसको अपने तम्बूमें रख दृढ पहिरा कर दियाथा। राणकदेवीभी जीवित वरन घायल और मूर्छित अवस्थामें उसके हाथ आई। इसप्रकारसे चारवर्षके प्रयत्नका फल प्राप्तकर सिद्धराजके हर्षका पार न रहा वह उस समय ऐसा प्रसन्न हुआ कि मानों त्रिभुवन पतिकाही पद प्राप्त हुआहो। उस का अन्तःकरण आनंदसे उछलने लगा। कामदेव उसके रोम २ में व्याप गयाथा, इसकारण व्याकुलचित्तसे मदमें छकासा जान पडताथा। राणकदेवी शत्रुओंके हाथमें पड निराधार अवस्थामें नदीके किनारे पडीहुई मछलीके समान तडपतीथी। इस दुःखमय अवस्थामें वह बिचारी क्या करसकती है? अन्तमें सिद्धराजने उसके दोनों पुत्र तथा पतिसमेत उसके समस्त कुटुम्बको बन्दीकर पाटनकी ओर कूचकिया। मार्गके प्रत्येक पडावपर राणकदेवीको सतानेलगा, परन्तु सतीस्त्री परपुरुषके प्रेमपाशमें प्राणोंके रहते तक कैसे आ सकतीहै? सिद्धराजके लुभानेको उसने कुछभी न विचारा। इसकारण सिद्धराजने चिढकर उसके घायलपति राहखेंगारका शिर काट डाला! राणकदेवी जब किसी प्रकारभी उसके वश न हुई तब सिद्धराजने राहखेंगारका शिर काटडालनेका समाचार उससे कहा। उसके इन शब्दोंके सुनतेही सतीको सत्यचढ़ा और अपने पतिके शवको मांगा; परंतु कामांध हुए सिद्धराजने उसकी इससर्वोत्तम दशाका विचारही न किया!वरन् उलटा समझाने और धमकाने तथा पागलकी समान बकने लगा। राहखेंगार को मारकर धमकी देते हुए उसने उसके एक लडकेकोभी मारडाला। क्षत्रियत्वको छोड ईर्षाके आधीन हुआ सिद्धराज कसाईकासा कार्य कर राणकदेवीके समीप आय आंखेंचढाय कहनेलगा,—"अनुपम अप्सरा! जबसे तेरा वर्णन भाट चारणोंके मुँहसे सुना तभीसे तू मेरी आंखमें किनकोंकी समान खटक रही थी। वर्षोतक तेरेही निमित्त प्रयत्न करता हुआ सुखकी नींद छोड दी! तिसपरभी तो तू मेरी ओर कृपा-

दृष्टिसे नहीं देखती, यह यथार्थमेंही तेरे दुर्भाग्यका चिह्न है। पुत्र तथा पतिके परलोक पहुँचनेपरभी तू नहीं मानती, जानलेना कि अब तू मेरे पंजेसे नहीं छूट सकती। मेरे पराक्रम, बल, समृद्धि, वैभव, कुल, रूप तथा यौवनसे तू अनजान नहीं है। मेरेही लिये तू उत्पन्न हुईथी, तुझे हरण करनेवाले तथा अपने होनहार प्रेमको भंग करनेवाले दुष्ट राहखेंगारको मैंने योग्य शिक्षादीहै। अब शीघ्रतापूर्वक मेरी इच्छाको पूर्णकर गुजरातकी पटराणीके महानपदको धारणकर, कि जिससे तेरी और मेरी देह सफल हो। तू जिसप्रकारसे मेरी होकरभी दूसरेको व्याही गई वह मैं भलीप्रकारसे जानताहूं उसमें तेरा कुछभी अपराध नहीं है, अतएव तू शीघ्रही मेरी हो, मैं तुझसे किसी प्रकारकाभी असत् व्यवहार न करूंगा।'

सिद्धराजके ऐसे अप्रिय और कर्णकटु वचनोंको सुनतेही राणकदेवी अत्यन्त क्रोधित हुई, यदि उस समय उसके हाथमें कोई अस्त्र होता तो वह अवश्यही उसके शिरको काट डालती। राणकदेवीने क्रोधित स्वरसे कहा,-'रे दुष्ट ! मैं तेरे पराक्रमको अपने छोटे बच्चेके काटनेसेंही देख चुकीहूं। तू प्रेमी नहीं बरन् निर्दयी है। अरे नीच, कपटी, कामांध ! तू इतनाभी नहीं जानता कि मैं पतिव्रता हूं। अब कुछ चेतमें आ। तेरी कुछभी चतुराई मेरे समीप नहीं चलसकती, इसकारण मेरे पतिका शव शीघ्रतापूर्वक मुझे दे।'

'मान, राणकदेवी मान' मेरे प्रेमसे उछलतेहुए अन्तःकरणका मान भंग न कर। तेरे स्वामी तथा पुत्रको इसकारणही माराहै कि जिससे तेरा कल्याणहो और तेरा प्रेम मुझमें बढे जो तुझको मिलाथा, उसकी अपेक्षा भी विशेष सुख और वैभवका अनुभव अब मिलेगा, अतएव अब तेरा प्रारब्ध खुलगया। जो बीतगया उसका शोक छोड क्षणिक संसारके सुखमें तत्पर हो। अबभी मेरा कहना मान, नहीं तो बडे दुःखमें पडेगी।'

'मुझको तथा मेरे शेषरहे बालकके मारनेकी अपेक्षा तेरा क्या अधिकार है, वह मैं भी देखूंगी । जब राणकदेवीने इसप्रकारसे कहा तब सिद्धराज अपने अन्तःकरणके अविचाररूपी मोहांधकारमें डूब खड्ग खींच उसके समीप थरथराते और रोतेहुए खडे पुत्रको पकडकर खडा होगया ! और रोषस कहनेलगा,-' रे नीचनारी ! हठी स्वभावको छोडकर अबभी मेरे वश होतीहै या नहीं ? देख मानजा, नहीं तो इस पुत्रकोभी परलोक पहुँचाताहूं । ' ' जबतक राहखेंगारका चिह्नहै तबतक माननेवाली नहीं,यह कहकर जब उस क्षत्रियानीने उसके वशमें होना अस्वीकारकिया । तब उसने उसकी गोदसे बालकको कसाईकी समान छीना, बालक रोनेलगा, तब राणकदेवीने बालकसे कहा कि 'पुत्र ! सत्यके निमित्त प्राण देकर परलोकमें सुखभोग कर ! ' बालक सती माताका आशीर्वादले चुपचाप सिद्धराजके खेंचनेसे मातासे पृथक् होगया । सिद्धराजने निर्दय चित्तसे उसके कोमल कण्ठपर तीव्र शस्त्रका प्रहार किया ! तत्कालही उसका शिर धडसे अलग होगया ! उसके इस घातकी बनावसे दिव्यदेवी कुछभी न डरी । उस स्त्रीके नेत्र क्रोधसे सिंहिनकी समान विकराल होगये, वह पराक्रमीबाल सतीत्वके आवेशमें खडी होकर घुडकने लगी । मानों त्रिलोकीको निगलजायगी. इसप्रकारके भावमें देदीप्यमान कांतिका आविर्भाव बढने लगा । परन्तु कामिक नेत्रोंसे सिद्धराज जैसेही उसकी ओर देखताथा तैसेही तैसे उसका मोह बढतागया । सिद्धराज मनहीमनमें कहनेलगा,-'हे प्रभु ! यह किसी प्रकारसे मेरा कहना मानें तो ठीकहो; यथार्थमेंही यह अनुपम रत्न बडेही श्रमसे हाथ आयाहै, यह किसप्रकारसे उपभोगका साधन होगा, मैं कछभी निश्चय नहीं करसकता । क्योंकि इसके समस्त कुटुंबका नाश किया तोभी वह मुझे कुछभी आशा नहीं देती । अबतो बलके अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं है । साम, दान और भेदसेभी जो नहीं मानता उसे दण्डसे अधीन करनेमें कौन रोकनेवालाहै ? परन्तु अभी कुछ समझाऊं' ।

ऐसा विचार राणकदेवीसे बोला,–'हठीली राजपूतानी! अबभी मानतीहै या नहीं ? जो बात बीतगई उसका शोक छोड होनहारका विचारकर। रोनेसे या टुकुर २ देखनेसे कुछभी लाभ नहीं है । रोरोकर तालावभरदे तौभी मैं तुझे छोडनेवाला नहीं। कष्टही कष्टमें सूखजायगी केवल हाड रहजांयगे तौभी उसकी माला वनाऊंगा, मोती, माणिक्यहारके स्थानपर उसकोही गलेमें धारण करूंगा। तेरी देहका मुझे अत्यन्तही मोह है। अतएव हे मोहिनी ! आनाकानी छोडदे तेरा नाम अमर करनेको कहताहूं सो स्वीकार कर '।

सिद्धराजकी विषमवाणी सुनतेही रोम २ खडेहोजावें तो उसमें नवीनताही क्याहै ? राणकदेवीके रोम २ में अग्नि व्यापगई उसने यह निश्चयकर कि सब बातोंका परिणाम और अंतिम अवस्था मरणहीहै, सिद्धराजसे कहा,–अरे कामांधपापी ! क्षत्रियकुलकलंक! मैं तेरी किसी बातसेभी नहीं डरती। सबकाही परिणाम मृत्युहै, उसके आनेकी कौनसी घडीहै बता मैं उसके निमित्त आतुरहूं। जबतक मेरे पतिका शव नहीं मिलता तभीतक मैं इस अपवित्र देहको धारण कियेहूं। मैं इस असार संसारके सम्बंधसेही इच्छा नहीं रखती फिर तेरा लोभ दिखाना व्यर्थ है। तेरे त्रास तथा लोभसे तैसेही वैभव और विलाससे मैं कभी वशमें नहीं होसकती। यदि तू मेरे साथ बलात्कार आचरण करेगा तो मेरा यह स्थूल देहही तेरे हाथ आवेगा, और यह अमर आत्मा क्षणिक देहको तत्कालही त्यागदेगा उसको तो तू रोक नहीं सकता । इसही घटनासे मेरा नाम अमर होगयाहै। चंडाल ! कसाई ! जो तू अपना भलाचाहताहै तो इन सब बातोंको छोड मेरे प्यारे प्रियतमका पवित्र शव मुझेदे; नहीं तो जो मैं चाहूंगी करूंगी। दुष्ट! यह सत्य जानना कि तेरा सब पुण्य बीतगयाहै और अब भाग्यका अंत आगया। तू यह भलीप्रकारसे समझ लेना कि मैं तेरी रोकी क्षणभरभी न रहूंगी। मेरे प्राणनाथकी मृत्युके साथही साथ मेरेभी दुःखकी सीमा आनाचाहतीहै। चलउठ! मेरे पतिका शव मुझेदे'।

सतीके मुखकी प्रभा तथा उसके प्रभावको देखकर सिद्धराजके प्राण थर्रागये । उसके आवेश तथा कांतिको देख सिद्धराजको अत्यंत आश्चर्य उत्पन्न हुआ, उसका अन्तःकरण थर २ कांपने लगा । नाडियें ढीली पड गईं और हाथ पैरोंका बल जाता रहा । वह कहने लगा,–' हे देवांगना ! तेरे पतिका शव तुझे अभी देताहूं, परंतु जो तू यथार्थमें सती होगी तो विना अग्निके जलेगी ।' ऐसा कह राणकदेवीको उसके पति राहखेंगारका शव देदिया । राणकदेवी उसही समय 'जय अम्बे, जय अम्बे' पुकारने लगी । इस शब्दके कहतेही उसकी आकृति औरभी उग्र जान पडनेलगी सिद्धराजने हाथ जोडकर उससे क्षमा मांगी, परन्तु सतीने उसके असीम अपराधोंको क्षमा न करके शापही दिया और सिद्धराज चुपचाप निर्बलकी समान सुनता रहा ।

राणकदेवी पतिका शव ले डेरेके बाहर आई, उसे देखनेको बहुतसे मनुष्य एकत्र होगये । सतीकी शोभा देखनेवाले समूहके समूह बाजा बजाते हुए उसके पीछे२चले और भोगाओनदीके किनारे चन्दनकी चितामें पतिके शवको अपनी गोदमें ले महाआनंदमय ब्रह्मज्योतिमें लीनहो इस साध्वीने परमात्माका ध्यान किया । भयभीत हुआ सिद्धराज सामने आकर क्षमाचाहने लगा, तब राणकदेवीने उससे कहा, "दुष्ट ! तुझको तेरे कर्मोंसे मैं अभी भस्म कर देती परन्तु जा जीवितही छोडे देती हूं । तेरे राज्यपर म्लेच्छ चढ आवेगे और मेरे राज्यकी जैसी दुर्दशा कीहै वैसेही तेरे राज्यकीभी दुर्दशा होगी और तूभी निर्वंश होगा ।"

राणकदेवीने ज्योंहीं यह शापदिया कि त्योंही चिता जल उठी और वह परम ज्योतिमें लीन होगई । उसका चिह्न अबतकभी बना हुआहै, जिसस्थानपर राणकदेवी सती हुई वहांपर सिद्धराजने एक सुन्दर मन्दिर बनवाया, उसमें राणकदेवीकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा की, जो अबतक वर्तमानहै ।

कमलादेवी ।

मुर्शिदावाद जिलेके एक गांवमें रहनेवाले जगन्नाथ भट्टाचार्य नामक सद्गृस्थकी स्त्रीका नाम कमलादेवी था। वह अत्यन्तही रूपवती और गुणवती थी, जो उसे एकवार देखता वह फिरसे देखनेको उत्साहित होता। जगन्नाथको कितनी एक पृथ्वी महाराजकी ओरसे धर्मार्थ मिली थी, जिसकी उपजसे उनके कुटुम्बका पोषण होता था परन्तु राज्यचक्रके फेरफारसे किसी एक वडे सत्ताधीशके कारिंदे गङ्गागोविन्दसिंह नामक एक क्रूर व्राह्मणको जब पृथ्वीके कर सम्बन्धी कारवारका अधिकार दिया गया तव उसने लगभग सवासौ वर्षसे ऊपर धर्मार्थम चली आती हुई पृथ्वीपर भी कर बांधा उसही समय वंगाल प्रान्तमें अकाल पडा। इस कष्टके मारे जगन्नाथ कर देनेमें अशक्त होगया, गङ्गागोविन्द सिंहने उसकी सब पृथ्वी छीनकर अन्यायपूर्वक कर ग्रहण किया।इसकारण जगन्नाथ महा आपत्तिमें आ पडा। अन्नके लाले पड गये कि मुट्ठीभर भी अनाज न मिलनेके कारण पेडोंके पत्तों द्वारा वह अपना पोषण करता था। कमलादेवीके समीप एक फटा हुआ और छोंटासा वस्त्र था वह जैसे तैसे उसकेही द्वारा अपना शरीर ढांककर घरमेंही वैठी रहती थी। उसके चार छोटे बालक नंगे उघाडे रोते फिरते थे। जगन्नाथके अंतःकरणमें इस आपत्तिका इतना प्रभाव वढ गया कि वह सव घरवार छाड गलेमें फांसी लगा कर मरगया।

कमलादेवी विधवा होगई। एक दुःखमें दूसरा दुःख आपडा इतनेमें उसका पुत्र क्षेत्रनाथ वादशाहके समीप अपनी धर्मार्थ पृथ्वीके लेनेको विनाही किसी आश्रयके दिल्लीको चला। इधर कष्टोंसे कितनीही वार दुःखित हो कमलादेवीने आत्मघात करने की इच्छाकी, परन्तु छोटे वालकोंके स्नेहसे ऐसा न करसकी "अन्नसे प्राण और प्राणसे पराक्रम होता है" इस कहावतके अनुसार विना अन्नके उसके दो छोटे २ वालक मर गये, वह स्वयं अत्यन्त व्याकुल चित्त हो घवडागई ।

वह इतनी शोकित और क्रोधित हुई कि अमलदारकी जान लेनेपरही तत्पर हुई। एकवार छुरी ले गङ्गागोविन्दसिंहकी ओर दौडी। यह देखतेही वह घबराकर तत्काल टठ खडा हुआ। कमलादेवीका घोर स्वरूप देख सिपाहियोंने सामने आय अमलदारको बचाया। कमला-देवी छूटे केश चंडिकाके समान मार्गमें फिरती थी। दुःखमें भी उसका सुन्दर रूप देख गङ्गागोविन्दासिंहके नौकर देवीसिंह नामक दुराचारी अमलदारने पापेच्छासे उसके पकडनेके निमित्त कितने एक मनुष्य भेजे इस देवीसिंहने भी वहुतसी स्त्रियोंका धर्म भ्रष्ट किया था, वह अनेक स्त्रियोंको अपने स्वामीके यहां भज कर उसे प्रसन्न रखता था। वह इस निर्मल मनकी कमलादेवीको पकड एक पृथक् स्थानमें ले गया। कमलादेवी पति और पुत्रोंके वियोगसे विक्षिप्तकी समान होगई थी। तीन दिनतक उसने कुछ भी न खाया पिया वरन् चौथे दिन प्राण त्यागनेका निश्चय किया। वह इतने दिनतक केवल बडे पुत्र क्षेत्रनाथकी आशासेही जी रही थी, उसकेही आनेकी आशा उसे आत्म-घातके करनेसे रोकती थी।

देवीसिंहने उसको भी अपने स्वामीके यहां भेजनेका उपाय शोचा वह कमलाको समझाने लगा;—'अब तुझको तेरेघर भिजवाय देतेहैं इस कारण इन मनुष्योंके साथ जा।' कमलादेवी उसके मनकी इच्छाको पहिलेसेंही जानगईथी इसही कारण अपने बचावके निमित्त एक छुरी रखतीथी, उसने निश्चय करलियाथा कि जो कोई मेरी प्रतिष्ठापर हाथ डालेगा उसका मैं जीव लूंगी। देवीसिंह बातें बनाताहुआ ज्योंही उसके समीप आया कि उसने त्योंही सिंहनीकी समान छलांगमारी और झटसे वह छुरी निकाल उसकी छातीमें मारदी। परन्तु वह मनुष्य चमडेके समान जाटके वस्त्र पहिनेथा इसकारण उस छुरीका उसपर कुछभी प्रभाव न हुआ और अक्षत वहांसे चलागया। क्रोधित देवीसिंह अपनी इच्छा न पूरी होनेसे विकल होनेलगा। उसको कमलादेवीके विषयमें दृढ निश्चय हो

गया और फिरसे किसीकोभी उसके समीप न भेजा। कुछ दिनोंके उपरांत देवीसिंहका मन फिर डगमगाया। इसकारण वह दस बारह स्त्रियोंके साथ उसे रस्सीसे बांध पुरनियां लेगया ! देवीसिंहकी इच्छा इतनी प्रबल होगईथी कि उन दुराचारिणी स्त्रियोंके साथ उसने कमला-देवीको ढाई महीनेतक रक्खा परन्तु तौभी वह उसको नहीं डिगासका।

कमलादेवीकी ऐसी पवित्रता लक्ष्मणसिंह नामक एक भले चौकी-दारने देखी। वह सज्जन पुरुष उसे माताकी समान देखता था। कमलादेवीपर अत्यंत अनुग्रह करताथा, मानों परमेश्वरनेही उसको उसकी रक्षाके निमित्त भेजाथा। उसकी वार्त्तासे कमलादेवीको अत्यंत संतोष हुआ, इतनाही नहीं वरन् लक्ष्मणसिंहने उसको इतना साहस और धीरज दिया,-कि'दुष्ट देवीसिंह जो तुमको न छोडेगा तो मैं उसको मारकर तुम्हारा बचाव करूंगा।' पीछे एक दिन उसने अवसर पाय अंधेरी रात्रिमें अपने भाईके साथ उसे दीनाजपुर भेज दिया। लक्ष्मणसिंहका भाई रामसिंहभी अत्यन्तही सज्जन पुरुष था। उसने भलीप्रकारसे संभाल किया। लक्ष्मणसिंह भी थोडेही दिनोंमें नौकरी छोड उसके समीप जा पहुंचा कमलादेवीके कहनेसे लक्ष्मणसिंह उसके पुत्र क्षेत्रनाथकी खोजमें निकला, इतनेमें उसको समाचार मिला कि, 'दुष्ट देवीसिंहके सिपाही कमलादेवीकी खोजमें निकले हैं।' इस समा-चारके सुनतेही रामसिंह एक घने जङ्गलके एक गुप्त स्थानमें जाय झोपडी बनाकर रहने लगा। कमलादेवी वहां पद्मासनपर बैठ एकाग्र-चित्तसे मिट्टीके महादेव बनाय उनकी पूजा करतीथी; वह भजन पूजनके आनंदमें ऐसी लीन होगई कि उसको दुःख सुखका कुछभी भान न रहा। लक्ष्मणसिंहकी दयालुतासे उसका हृदय पानी२ होगयाथा, क्योंकि उसने थोडेही कालके उपरांत उसे उसके पुत्रसे मिलाया। दोनोंको इसकारणसे और एक बडा आनंदहुआ तथा उसने अपने पातिव्रतधर्मकी रक्षा कर जगतमें अपना नाम अमर व विख्यात किया।

सती सोनबाई ।

कितने एक वर्ष बीते कि जब पँवारवंशके प्रसिद्ध राजा राजसिंहकी बालभामें राजगद्दीथी, यह सोनबाई उसकीही पुत्रीहुई, वह रूपवान तथा लावण्यवती तो थी ही परन्तु सरस्वतीकी उपासक होनेके कारण कविता करनेकी देवी शक्तिभी उसको प्राप्त हुईथी। जब उसकी अवस्था विवाहयोग्य हुई तब यह निश्चय किया कि,–' मेरी समस्याकी जो पूर्ति करेगा उसकेही साथ विवाहकी पवित्र गांठ बांधूंगी । ' उसने अपना यह निश्चय अपनी सखी सुलेखासे जताया, सुलेखाने सब बात सोनेके मातापितासे कही । पुत्रीकी विद्यासे वह प्रसन्नहुए और उसकी इच्छानुसार काव्यचतुर वर ढूंढनेको नेगियोंको राजस्थानमें भेजा । वह गुजरात, काठियावाडमें फिरते २ घुमली जा पहुंचे । क्योंकि वहांके राज्यकर्ताने बघेलोंके साथ युद्धकर विजय प्राप्त की थी, उसका एक कुमारभी काव्यका मर्मज्ञ और विद्वान गिनाजाताथा ।

नेगीने घुमलीके दर्बारमें सती सोनके रूप गुणका वर्णन किया और इस बातकाभी निवेदन किया कि जो उसकी बनीहुई समस्याकी पूर्ति करे वही उसको विवाहले नेगिने जैसेही उस समस्याका एक चरण कहा कि राजकुमारने वैसेही थोडा विचारकर शीघ्रतासे दूसरा चरण कह सुनाया ।

राजकुमारकी बुद्धिमानी देख नेगीने प्रसन्नतापूर्वक उसको श्रीफल दिया । राजकुमार हालामनको चतुर स्त्रीके साथ विवाह होनेसे अत्यन्त आनन्द हुआ । परन्तु उसका पिता राना शियाजी अत्यन्त दुःख पाय मुख बन्दकर बैठगये ! उनका मन निराश होगया और मुंह उतरगया! इसका क्या कारणहै ? नेगी प्रसन्नतापूर्वक सुपारी देकर चलागया कि वैसेही उसके पीछे रानाका मनुष्य जा पहुँचा और शीघ्रतासे रानाके दर्बारमें चलनेको कहा। नेगीने तत्कालही उसके साथ रानाके दर्बारमें जाय प्रणामकर आज्ञा चाही । रानाने आंख डालकर कहा कि,–'सोनके

व्याहकी सुपारी हालामनको क्यों दी?' नेगीने कहा,-'हुजूर उसने समस्याकी पूर्ति कीथी इसकारण; राजा-' परन्तु सोनके साथ तो मुझे अपनाही व्याह करनेकी इच्छाहै । हालामनने समस्या पूरी की, परन्तु वह तो मेराही पुत्रहै, मेरे होतेहुए उसका व्याह न होगा।' नेगी आश्चर्यमें पडगया; तथापि उसने विचारकर कहा,-महाराज ! आप तो राज्यरीति और धर्मनीतिमें प्रवीण हैं तथा अब पूर्ण आयुके हुए । आप सरीखे बुद्धिमानोंको सिखाना मुझ सरीखे अल्पबुद्धिका कार्य नहींहै । आप विचार देखो कि यह बात बहुतही विपरीत होगी और सतीसोन मुझपर अत्यंतही क्रोध करेगी । मैंने उसका अन्न खायाहै इसकारण उसका कुछभी अहित न होनेपावेगा । सोनरूपी सुवर्णमें हालामनरूपी रत्न जडनेसे जो शोभा होगी उससे जगत्में कीर्तिहोगी और आपकोभी उसमें आनन्द मनाना उचितहै ।' राजाको यह बात भली न लगी, वह लाल पीला होने लगा,क्योंकि उसके चित्तपर कामेच्छाने दृढ अधिकार करलियाथा।वह क्रोधित होकर कहने लगा,जिसप्रकार सेनासे प्राप्तहुई जय राजाकीही कही जातीहै उसही प्रकार सोनकी समस्यापूर्तीमें हालामनका नहीं वरन् उसके पिताकाही बुद्धिबल समझना चाहिये और मुझेही विवाहकी सुपारी मिले । सोनका व्याह मुझसेही होना उचितहै, यदि तू न मानेगा तौ मैं अभी तेरा नाश करडालूंगा । ' भाट यह सुन चकरागया और विचारनेलगा कि,-'यह कहांकी नीतिहै ? अधिक बात करनेमें अब विपत्तिकी सम्भावनाहै ।' ऐसा विचार 'जो आपकी इच्छा' यह कह उसने राजाकी बातको स्वीकार किया । राजकुमार हालामनके समस्या पूर्णकरनेपरभी उसने यह प्रसिद्ध किया कि वृद्धाशियाजीने समस्याकी पूर्ति कीहै । परन्तु शहरमें वह बात छिपी न रही । 'पुत्रवधूसे ससुरका विवाह तो महा अन्यायहै ! राजाको वृद्धावस्थामें यह क्या बुद्धि सूझी ? इसप्रकारसे मनुष्य जहां तहां बातें करनेलगे और वह बात कुमार हालामनने

भी सुनी । पिताकी विषयवासनाको जान उसे बहुत खेद हुआ । वरन् एक निर्दोष राजकुमारीकी दुर्दशा विचार उसको अत्यन्तही सन्ताप उत्पन्न हुआ ।

भाट राजाकी इच्छा पूर्णकर पुरस्कार ले विदाहुआ और वालंभेमें जा पहुंचा । सोनदेवी बैठीहुई उसकाही विचार कररहीथी । भाटको आतादेख सोनके आनंदका पार न रहा; क्योंकि उसको उसीका ध्यान था।सोरटेके इसी वरणकी कविता अत्युत्तम पाय सोनको निश्चय होगया कि ईश्वरकी कृपासे मनमानाही पति मिलाहै । फिर भाटको उत्तम पुरस्कारदे विदा किया और व्याहके मंगल दिनकी आतुरतासे वाट देखने लगी । दैवयोगसे थोडेही दिनोंमें भाटका भेद खुलगया और वह कपटकलाकी वात राजाको ज्ञात होगई । ऐसा होनेपरभी सोनने निश्चयकर लिया कि जिसने समस्याकी पूर्ति कीहै वही मेरा पतिहै और मैं उसकीहूं । इसके अतिरिक्त दूसरेसे प्राणजाने तक विवाह न करूंगी ।'

ससुरकी इच्छा और भाटकी कपटकलाके विषयका विचारकर सोन को वहुतही सन्ताप हुआ । उसने सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी और जल आदि देवताओंके सामने हृदयसे यह प्रतिज्ञा की 'व्याह होगा,तो हालामनकेही साथ और नहींतो कांरी रहूंगी ।' परंतु भावी विपत्तिकी लहरोंमें उसका मनरूपी जहाज डगमगा रहाथा । पिताके दुर्विचारसे हालामनकीभी वैसीही दशा होगईथी । फिरते २ वह घुमलीमें सतीसोनके समीप आया, और अपने निश्चयके न वदलनेकी प्रतिज्ञाकर सोनको धीरजदे राजाके निकट गया । राजाने कुंवरका तिरस्कारकर घुमली छोडदेनेकी आज्ञादी । हालामनका: कुछभी साहस न हुआ कि पितासे कुछ कहे क्योंकि राजाकी बुद्धि कामविचारसे अत्यन्त विक्षिप्त होगईथी । अन्तमें हालामन जन्मभूमिको अन्तिम प्रणाम कर वरडा पहाडपर चलागया ।

घूमलीस्थानपर सतीसोन दुःखित बैठीहुई पतिकी वाट देखरहीथी। वहां राजा शियाजी जा पहुंचा और उसको भलीप्रकारसे समझाने

लगा । उसने राज्य सम्पत्तिका बडा लोभ दिखाया और अत्यंत आग्रह किया, परन्तु सोनने कुछभी उत्तर न दिया अंतमें शियाजीने क्रोधितहो कहा कि,–'जो तू हालामनको अपना स्वामी मानतीहै तो उसको तो मैंने देशसे निकाल दियाहै, इसजीवनमें तो वह तुझे कभी न मिलेगा अतएव मैं तुझसे वारंवार कहताहूं कि तू मेरी होकर अपना जीवन सफलकर । इन वाक्योंसेभी सोनपर कुछ प्रभाव न डाला । राजाके नीच विचारोंके कारण उसको क्रोधयुक्त तिरस्कारही उत्पन्नहुआ, उसने स्पष्ट कहदिया कि,–'ससुरजी ! ऐसे दुष्ट विचार करना आपकी समान क्षत्री राजाओंको शोभा नहींदेते । मैं आपकी पुत्रवधूहूं इसकारण पुत्रीके समानहुई । मेरी ओर आपको आंख उठाना महापापका कारणहै, जो आप अपना भलाचाहतेहैं तो अपने स्थानको जाइये और हम स्त्री पुरुषको सुखी कीजिये । हमको सुखी देख आपभी परमसुख मानेंगे । मैं किसी समयमेंभी हालामनके अतिरिक्त दूसरेकी न हूंगी, अतएव मिथ्या माथा कूटना छोडदो ।' शियाजीकी पापेच्छा इन उपदेश युक्त वचनोंसेभी दूर न हुई, परन्तु अचानक दैवच्छासे उसके भाई चन्द्रसिंहजीकी पुत्री राजबाई और सोनकी सखी सुलेखा वहां आ पहुंची । इसकारण वह स्वयंही लज्जितहो वहांसे चलागया । राजबाई इस अनाचारकी चर्चासे चकित होगई, परन्तु उससमय उसने कुछ न कहा वरन् अपने पिताको सब कहानी जाकर सुनाई ।' ससुर पुत्रवधूसे विवाह करनेको तइयारहै यह कितना बडा अन्यायहै !' इत्यादि २ वात कह उसने अपने वापको उभारा ।

हालामन देशसे निकलकर सिन्धके समीप समुद्रके किनारे वैठा २ शोकित था । वारंवार समुद्रमें उछलती और डूबतीहुई लहरोंको देख वह मनको समझाने लगा कि,–'यह सब ईश्वरकी रचीहुई अघट घटनाहै । यहभी दो दिनमें वीतजावेगी, अतएव धीरज धरनाही कर्तव्यहै ।' वह वन, उपवन और पशुओंको देख विक्षिप्तसा । इधर उधर

घूमनेलगा। सोनकीभी हालामनके वियोगमें ऐसीही दशाहुई। उसको अकेली देख कामांध शियाजी दूसरीवारभी उसके समीप गया और साम, दान,भेदसे समझाने लगा। अन्तमें सोनको तलवारसे काटडालनेका भयदिया परन्तु वह अपने प्रणसे पीछे न हटी। उसने मरना स्वीकार किया किंतु भ्रष्टहोना नहीं चाहा? उस दुष्टने बलात्कार उसके संग कुकर्म करनेकी इच्छा की परन्तु वह दुष्टप्रसंग परम पवित्र परमात्माको प्रिय न था, इसकारण अचानकही शियाजीके शत्रुओंने चढाई कर इस घटनाके होनेसे थोडेही देर पहिले आकर उसके शिरको धडसे अलग करदिया। सोन बडी देरतक अचैतन्य अवस्थामें पडी रही परन्तु चैतन्यहोतेही वहांसे चल निकली और चलते २ सिंधकी सीमापर जा पहुँची। इसप्रकार दूसरीवारभी उसके निर्मल सतीत्वकी रक्षा हुई। अन्तमें बडे श्रमसे हालामनकाभी मिलाप हुआ और पतिभक्तिमें परायण रहनेके कारण उसको संसारका इच्छितसुख प्राप्तहुआ।

इस प्रकारसे जो मनुष्य भयंकर समयमेंभी अपनी पवित्र निष्ठाको नहीं छोडता सर्व शक्तिमान ईश्वर उसकी सदा सहायता करतेहैं। कितनेही एक बहू बेटियोंपर ससुर अन्यायकरते होंगे उन सबको सती सोनके दृष्टांतसे योग्य उपदेश मिलेगा।

सत्यवती।

कलकत्तेकी ओर एक गांवमें इस साध्वी और वीरबालाकी ससुराल थी। इसके ससुरका नाम रामानन्द स्वामी और सासका नाम सुनीतिदेवी था। उसके प्रेमानंद और प्रभावती नामक दो सन्तान हुई। प्रेमानंदके साथ सत्यवतीका व्याह हुआथा। प्राचीन समयसेही यह कुटुम्ब परमवैष्णव, दयालु और उदार गिना जाताथा। उनकी ओरसे साधु सन्तोंका बडा सत्कार होताथा, इसकुलका एक सनातन नियम यह था कि पहले भूखेको भोजन जिमाय फिर आप भोजन करतेथे।

सत्यवतीकी सासु सुनीतिदेवी व्रत अनुष्ठान करनेवाली और परम भक्तथी; उसही परम्पराके अनुसार सत्यवतीभी व्यवहार करतीथी। प्रेमानंदभी विद्वान, व्यवहारनिपुण और शूर पुरुष था।

एक समय बंगालमें बराबर कई सालतक अकालपडा कि जिससे वहांकी प्रजा अत्यन्त दुःखित होगई। जमीनदार अपना कर तक न वसूल कर सकतेथे। परन्तु कर वसूल करनेवाला देवीसिंहनामक अमलदार ऐसा निर्दयीथा कि उसका नाम सुनतेही प्रजाको कंप चढतीथी। वह गरीब प्रजाका सब सामान नीलाम करवा अपना रुपया वसूल करता। बरन् बडे २ जमीदारोंकी स्त्रियोंको भरीकचहरीमें बुलवाय उनकी प्रतिष्ठा लेता और दुःखदेता। रामानंदको प्राचीन समयसेही धर्मार्थ पृथ्वी मिलती चली आरहीथी, उसने उस पृथ्वीपरभी कर बांधा और उसके शीघ्र लेनेका तकाजा किया। रामानंद इसअन्यायके कारण राजशाहीकी रानी भवानीदेवीके समीप गया और उससे पचास सहस्र रुपया ऋणले तीन वर्षका कर चुका दिया। देवीसिंहको इतनेसेभी सन्तोष न हुआ। उसने रामानंदका सब माल राज्यमें ले नीलाम होनेका हुक्म निकाला। इसकारण उसके कुटुम्बमें बडी खलबली पडगई। प्रेमानन्दने अपने पिताको धीरजदे स्त्रियोंको रंगपुर भेजनेकी सम्मतिदी; और स्वयं बाहर आनेका विचार करताहीथा कि इतनेमें सिपाहियोंने उसे पकड बंदीकर लिया और कचहरीमें ले गये। वहां भरी सभामें जमींदारोंकी आठ स्त्रियोंको नंगीकर सिपाही अन्याय कर रहेथे। इस अधर्मके देखतेही प्रेमानंदका कलेजा टूटने लगा। वह एकसाथ भयंकर गर्जनकरके बोला,–'अरे नरपिशाच! अधम! स्त्रियोंपर तू ऐसा अनुचित व्यवहार करताहै, मैंही तेरे शिरको उडाऊंगा।' ऐसा कह छलांग मार देवीसिंहके मारनेको दौडा। इतनेमें सिपाही उसे पकड बन्दीगृहमें लेगये परन्तु तौभी यह देवीसिंहको

फटकारताही रहा। वन्दीगृहके सिपाही बडेही दुष्ट स्वभाववाले होतेहैं। उन्होंने प्रेमानंदको इतना मारा कि उसका समस्त शरीर सूजगया।

सत्यवती और रामानन्दने प्रेमानन्दके जीवनकी आशा छोड उसके शवको ढुंढवाया परन्तु जब वह न मिला तब शोकित हो रङ्गपुरको गये। सत्यवती वैधव्य धर्मको पालने लगी यद्यपि उससमय उसकी आयु पचीसवर्षकी थी परन्तु तौभी एक नवयौवन वालिका जान पडतीथी।

देवीसिंह और उसके सिपाही बडेही दुष्ट और दुराचारीथे; वह केवल दुर्वल स्त्रियोंका सतीत्वही भङ्गनहीं करतेथे वरन् अपने ऊपरी अधिकारियोंकोभी सुन्दर स्त्रियें भेज उनके पापी मनको प्रसन्न करना अपना मुख्य कार्य मानतेथे।

सत्यवती इन सब वातोंको जानतीथी इसकारण अपने ससुरके साथ दीनाजपुरके जङ्गलमें गई। उसको तो निश्चयथा कि प्राणजानेतक मैं अपने सतीत्व धर्मको न खोऊंगी। उसने ससुरके साथ तीनवर्षतक जङ्गलमें समय विताया। इतनेमें फिर समाचार मिला कि,–' देवीसिंहके सिपाही इस ओर आतेहैं।' यह सुनतेही रामानन्दने सत्यवतीसे कहा कि तुम काशीमें जाकर रहो, सत्यवती बोली 'ससुरजी! आपही हमारे मा वापके समानहो, मैं आपको छोडकर कहीं न जाऊंगी यदि आप पकडे जाँयगे तो मैं भी आपके साथ पकडी जाऊंगी।' रामानन्दने कहा कि,–' यह वात तो सत्य है, परन्तु देवीसिंह बडाही दुराचारीहै उसने सैकड़ोंही सतियोंका सतीत्व धर्म नष्ट कियाहै इसही कारण तुम्हारा यहां रहना अच्छा नहीं।' सत्यवतीने दृढतासे उत्तर दिया कि,–' ऐसा कौन मनुष्य है कि जो मेरे धर्मको भ्रष्ट करे? यदि मनुष्य अपनी इच्छासेही धर्मका मार्ग न त्रष्टकरे तो संसारमें

ऐसा कोईभी वलवान नहीं है कि जो उसका धर्म भ्रष्ट करसके । आज बराबर बारहवर्षतक दुःख सहन करके अब मैं देखतीहूं कि दुर्वलका वल केवल ईश्वरहीहै, यदि मैं स्वयंही अपना धर्म न भ्रष्ट करूं तो ऐसा कोई मनुष्य नहीं जो मेरा धर्म भ्रष्ट करसके ? ' ऐसा कहकरही वह मूर्च्छितहो पृथ्वीपर गिरपडी, थोडी देरके उपरांत सचेत होकर कहने लगी,–'हे दीनदयाल ! तुमने यह रूप और सुन्दरता क्योंदी ? जिसके निमित्त रूप और सौंदर्य है वह तो तुम्हारे समीप चलागया है, अब मुझको इसकी क्या आवश्यकता है । ' इत्यादि वातें कह २ रोती-हुई वह अपघात करनेको तैयार होगई, परन्तु ससुर रामानन्दने सत्य-वतीको समझाकर शांतकिया ।

इतिहासकार कहतेहैं कि,–'मा वापके स्नेहकी अपेक्षा साध्वी स्त्रीका प्रेम अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टिवालाहै । साध्वी स्त्रीका निःस्वार्थ प्रेम दो पृथक् आत्माओंको मिलाताहै, इसकारण पुण्यवती माताके निःस्वार्थ स्नेहकी समान साध्वी स्त्रीकाभी प्रेम अनुपमेयहै कि किसी समयभी वह नहीं वदलता । मातृस्नेह और साध्वी स्त्रीके प्रेममें निरन्तर ईश्व-रका वासहै ।

कुछ वातचीत होनेके उपरांत जब रामानंदने सत्यवतीसे अत्यन्त आग्रह किया तव वह एक वृद्ध पुरुषके साथ जंगलमें गई और जहां किसीके रहनेका साहस न हो ऐसे भयानक स्थानपर झोपडी वनाकर रही । वहांपर उसके ओढनेके लिये एक वस्त्रतकभी न था, ऐसी अव-स्थामें पडी रहकर अपने ससुरकी चिन्ता करनेलगी ।

सत्यवतीको बिदाकर रामानंदस्वामी झोपडीमें भगवद्भजन करने वैठे । वहां सिपाहियोंने उन्हें पकड कैदकर कारागारमें भेजा । रामानंदस्वामीने अन्नजलका त्यागकर दिया सत्यवतीको भी यह समाचार मिले । उसने निश्चयकर लिया कि प्राण रहतेहुए ससुरजीको छुडाऊंगी । वह तत्कालही पुरुषवेश धारणकर दो विश्वासी नौकर और

एक वृद्ध दासीको साथ ले वंदीगृहके निकट गई। वंदीगृहका प्रबन्ध-कर्त्ता एक भला मनुष्य और नीतिवान मनुष्य था उसने सब व्यवस्था पूंछी। सत्यवतीने अपना नाम नानक और गया जिलेमें निवास बताया रामसिंह प्रबन्धकर्त्ताने उसके रूप और मनोहर लावण्यताको देख उसे घरके ऊपरी कामकाज करनेपर नौकर रख लिया। कितनेही दिनों उसके यहां निवासकर एक दिन नानक उसकी आज्ञासे वंदीगृह देखने गया। वहां वृद्ध रामानंद अचैतन्य अवस्थामें पडा था। वंदी-गृहपर वडा दृढ पहरा था तौभी नानकने रामानंदको वहांसे लेजानेका यत्न किया, इसके निमित्त उसने दो मनुष्योंको ठीकठाक किया। यह दोनों मनुष्य अंधेरी रातमें रामानंदको उठाय नानकके साथ होलिया। सिपाहियोंने प्रातःकाल रामानन्दको न देखा तबतो चारों ओर उसकी खोज होने लगी, परन्तु वह मनुष्य कहां निकलगये इसका कुछ भी पता न चला।

कुछ देरके उपरांत सत्यवती अपना वेश उतार पांडुआके जङ्गलमें जा पहुँची। वहां एक विधवा स्त्रीको योगिनीदशामें ईश्वरकी आराधना करतेहुए देखा। सत्यवती तथा रामानन्द आदिने श्रद्धापूर्वक उसको नमस्कार किया। वातचीत होनेके उपरांत उस योगिनीने कहा कि प्रेमानन्द [जिसको सत्यवती मराहुआ जानती थी] कलकत्ताके कारागारमें वंदी है। इस वातको सुनकर सबकोही वडी प्रसन्नता हुई। सत्यवती पतिसे मिलनेको तइयारहुई और एक विश्वासी मनुष्य-को लेचल निकली। शास्त्रकारोंने जो कहा है वह सत्यही है कि,— 'विपदही मनुष्यकी सह कारिणी है विपदहीने सत्यवतीको साहस दिया कि जिससे वह तीनही दिनमें कलकत्ते जा पहुंची। इस समय उसने पुरुषवेश धारणकर अपना नाम रामकृष्ण रक्खा कलकत्तेके वंदीगृहसे छुडानेका काम कुछ सरल न था, क्योंकि मुख्य साधन जो धन है उसकी तो एक पाई भी सत्यवतीके पास न थी। सत्यवती अत्यन्तही

निराशहुई और एक वृक्षके नीचे शांत होकर बैठी परन्तु अपने कर्त्त-व्यमें विमुख न हुई खाना पीना सोना यह सबही उसने छोड दिया । इसप्रकारसे पतिका ध्यान करते करते इक्कीस दिन काटे । दैवयोगसे कोई धनवान मनुष्य उसके समीपसे होकर निकला वह शीघ्रता-पूर्वक चलाजाता था इसकारण उसके हाथमें रही हुई कुछ दस्तावेजें गिर पडीं । परन्तु वह चलाही गया। सत्यवतीने उन कागजोंको उठाय अपने मनुष्यसे उस धनवानके यहां भिजवा दिये । वह धनवान् अत्यन्तही प्रसन्न हुआ और सत्यवतीसे जाकर कहने लगा कि,-'जो यह कागज न मिलते सो मैं अवश्यही मारा जाता क्यों कि गंगागो-विन्दसिंह मेरा पूरा शत्रु है । तुम अपने इस किये हुए उपकारका कुछ बदला मांगो तो उत्तम हो ।' सत्यवतीने कहा कि,-'मेरा एक सम्बन्धी बंदीगृहमें है उसके छुडानेका उपाय बताइये ।' यह सुन उस गृहस्थने सत्यवतीसे निश्चित रहनको कहा और उसे अपने साथ घर लेगया । फिर यत्न करके योग्य अधिकारीसे मिला और प्रेमानंदको बंदीगृहसे छोड देनेका पर्वाना लाया रामकृष्ण (सत्यवती) तथा उसके मनुष्यने उस पर्वानेको बंदीगृहके प्रबंधकर्ताको दिया । उसको पढकर उसने प्रेमानंदको छोड दिया । प्रेमानंद सत्यवतीको न पहि-चानसका उसने विचारकिया कि कोई सगा सम्बन्धी परमार्थवृत्तिसे मुझे छुडाने आयाहै ।

अत्यंत दुःखावस्थामेंभी पतिको देख सत्यवतीको परमसंतोष हुआ । यह तो स्वाभाविक बातहै कि पतिप्राणासाध्वी स्त्री स्वामीका मुख देखतेही आनंदसे उछलजातीहै । आज बारह वर्षके उपरांत उसका और उसके स्वामीका मिलाप हुआ । सत्यवतीको तो निश्चयहीथा कि वह मरगया, तो फिर जीवित होकर आनेकी समान उसको आनंद हो तो इसमें आश्चर्यही क्याहै ? मार्गमें कुछ बातचीत होनेके

उपरांत सत्यवती प्रेमानंदके गलेमें लिपटगई और उसकी आंखोंमें आंसू आगये ।

साध्वी सत्यवतीकी दुर्दशा देख प्रेमानंदको अत्यंत खेद हुआ और उसकीभी आंखोंमें आंसू भरआये । पीछे शांतहो जहां ऋषिपत्नी और रामानंद स्वामीथे, वहां जा पहुंचे । रामानंदकोभी आनंद हुआ। सबने सत्यवतीकी स्तुति कर धन्यवाद दिया और उसका दिव्य दृष्टांत संसारमें सुनहरे अक्षरोंसे लिखाहुआ अचलरहा । अत्यंत विपत्तिके समयमेंभी धीरजधर पातिव्रतधर्मकी रक्षा करनेवाली स्त्रियोंके चरित्र अत्यंतही रुचिकर होतेहैं क्योंकि उनका स्वभाव सदा सिंहिनके समान होताहै । कहाभी है कि,-

धन धन, धन भारतकी बाला ।
जिनकी ज्योति वीरता चहुंदिशि करत प्रकाश विशाला॥ १ ॥
पतिहित लागि जन्म जिन हारे देह गेह विसराई ।
तिनको यश यदि शेष बखाने तऊ न वरण्यो जाई ॥ २ ॥
नेम धर्म व्रत योग समाधि पतिव्रत सम नहिं कोई ।
धन्य जे नारि स्वामी अनुरागी तिनते कुल उजरोई ॥ ३ ॥
शकुन्तला, दमयान्ति, सुशीला, मदालसागुणखानी ।
करियो अमर निज नाम जगतमें "भारतकी क्षत्रानी" ॥ ४ ॥

इति नारीरत्नमाला प्रथमभाग: समाप्त ।

शुभमस्तु ।

पुस्तक मिलनेका पता-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर"स्टीम्-प्रेस-बंबई.

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानाकी परमोपयोगी, स्वच्छ, शुद्ध और सस्ती पुस्तकें।

यह विषय आज २५।३० वर्षसे अधिकहुआ भारतवर्षमें प्रसिद्ध है कि, इस छापाखानाकी छपी हुई पुस्तकें सर्वोत्तम और सुन्दर प्रतीत तथा प्रमाणित हुईहैं। इस यन्त्रालयमें प्रत्येकविषयकी पुस्तकें जैसे–वैदिक, वेदान्त, पुराण, धर्मशास्त्र, न्याय, मीमांसा, छन्द, ज्योतिष, साम्प्रदायिक, काव्य, अलंकार, चम्पू, नाटक, कोश, वैद्यक, तथा स्तोत्रादि संस्कृत और हिन्दीभाषाके प्रत्येक अवसरपर विक्रीके लिये तैयार रहतेहैं। शुद्धता, स्वच्छता तथा कागज़की उत्तमता और जिल्द की बँधाई देशभरमें विख्यात है। इतनी उत्तमता होनेपर भी दाम बहुत ही कम रक्खे गये हैं और कमीशन भी पृथक् काट दिया जाता है। ऐसाअवसर पाठकोंको फिर मिलना असंभवहै। संस्कृत तथा हिन्दीके रसिकोंको अवश्य अपनी २ आवश्यकतानुसार पुस्तकों के मँगानेमें त्रुटि न करना चाहिये. ऐसा उत्तम, सस्ता और शुद्ध माल दूसरी जगह मिलना असम्भव है) !! भेजकर 'वडा सूचीपत्र' मँगा देखो ॥

पुस्तकोंके मिलनेका ठिकाना–

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना खेतवाड़ी–बंबई.